प्रकाशकीय

परमपूज्य आचार्यरत्न श्री देशभूषणजी महाराज की आध्यात्मिक ज्योत्स्ना के महातेज से अभिभूत होकर श्रावक समुदाय ने अनेक रचनात्मक कार्यों द्वारा श्रमण सस्कृति एव सभ्यता के उन्नयन मे श्रद्धापूर्वक योगदान दिया है। आचार्य श्री के पावन सस्पर्श से ही अविजित अयोध्या, वैभवमडित जयपुर, साधनास्थली कोथली इत्यादि को नई शक्ति प्राप्त हुई है। आचार्य श्री के चरणयुगल वस्तुत. आस्था एव निर्माण के स्मरणीय प्रतीक हैं। आपकी प्रेरणा एव आज्ञा से ही अनेक मन्दिरो का निर्माण एव जीर्णोद्धार हो सका है। वस्तुत आचार्य श्री को बीसवी शताब्दी मे दिगम्बरत्व की जय-ध्वजा का प्रमुख पुरुष कहा जाता है।

आपकी अद्वितीय मेधा एव समर्पित जीवन के कारण ही अनेक दुर्लभ एव लुप्त ग्रन्थो का सार्वजनिक प्रकाशन सम्भव हो गया है। आपके दर्शन मात्र से ही साधना एव स्वाध्याय साकार रूप मे परिलक्षित होने लगते हैं। साहित्य के क्षेत्र मे आपके ठोस एव रचनात्मक कार्यों की सर्वत्र स्तुति की गई है।

आचार्य श्री की राजधानी पर विशेष अनुकम्पा रही है। अत आपके महिमा मडित आचारण एव व्यवहार को स्थायी रूप देने के लिये ही दिगम्बर जैन समुदाय ने दिल्ली मे 'श्री १०८ आचार्यरत्न देशभूषण जी महाराज ट्रस्ट' की स्थापना की है।

ट्रस्ट अपने पावन उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है। जिनागम के शाश्वत सत्यो को विश्वव्यापी बनाने के लिये न्यास के सभासदो ने आदर्श साध्वी, तपोमूर्ति, साधनारत ब्रह्मचारिणी कु० कौशल जी की स्वरचित कृति 'जैन सिद्धान्त सूत्र' के प्रकाशन का सहर्ष निर्णय लिया है। आशा है, उपरोक्त कृति जैन सिद्धान्त के जिज्ञासु महानुभावो के लिये प्रकाशस्तम्भ रूप मे कार्य करती रहेगी।

सस्था को सजीव एव मूर्त रूप देने मे, परम पूज्य उपाध्याय मुनि श्री विद्यानन्द जी का विशिष्ट योगदान रहा है। वास्तव में, आपके ही द्वारा ट्रस्ट की प्राण प्रतिष्ठा की गई है। आपकी सदय दृष्टि, सक्रिय रुचि एव प्राणवान मन्त्रणा से ही ट्रस्ट 'केवली प्रणीत धर्म' के प्रचार एव प्रसार मे सलग्न हो सका है।

आशा है, ट्रस्ट के प्रथम प्रकाशन को आप सबका सहज स्नेह प्राप्त हो सकेगा।

सादर,

सुमत प्रसाद जैन एम० ए०
महामन्त्री
श्री १०८ आचार्यरत्न देशभूषण जी
महाराज ट्रस्ट (पंजीकृत), दिल्ली

वीर निर्वाण दिवस
वीर निर्वाण सम्वत् २५०३

एकं सत्

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह कुटुम्ब बनाकर रहता है। स्त्री, पुत्र, पौत्र और सजातीय बन्धु-बान्धवों एव सम्बन्धियो से भरा पूरा एक विशाल मानव समाज उसकी जीवनचर्या का अभिन्न एव अनिवार्य अग है। मनुष्य कुटुम्ब में आँखें खोलता है और कुटुम्ब के कन्धो पर महायात्रा करता है। कुटुम्ब शब्द का व्यवहार परिवार के अर्थ में किया जाता है। 'परिवार' का शाब्दिक अर्थ 'घेरा' है और मानव-जीवन अपने रहन-सहन, वेशभूषा, चाल-चलन, आहार-पानी और अन्य सास्कृतिक व विविध चर्याओ मे अपने को परिवार की परम्परागत स्वीकृत प्रथाओ के घेरे में (सीमा, दायरा, परिधि मे) जन्म से ही पाता है। धर्म और आहार भेद उसे अपने कुलोत्पन्न अधिकार से ही मिलता है। इन्ही मान्यताओ के कारण संसार में नाना धर्म, नाना जातिया और नाना प्रकार की बहुलताए, विविधताए देखने में आती है। समान आचार-विचार वाले बहुत से परिवारो के सगठन से समाज और जाति की रचना होती है। किसी विशिष्ट देश-काल में उत्पन्न हुए विचारको, क्रान्तिकारियो और धर्म के रहस्यवेत्ताओ के कारण अलग-अलग देशो मे, अलग-अलग समयो मे और विभिन्न परिस्थितियो मे धर्म विविध रूप मे प्रचारित होता है और उस धर्मानुबन्ध से भी कुटुम्ब तथा जातियो का सगठन प्रवर्तित होता है। अस्तु

एगं सद्[1]

"विश्व मे एक सत् है और सत् विश्व का मूलभूत तत्व है। एक शब्द भी थीसिस (अन्वेषण) का विषय बन जाता है। विश्व अनादि अनत एव स्वय सिद्ध सत् है और यह छह द्रव्यो का समुच्चय है। वह तत्व सामान्य से एक प्रकार का है। जीव, अजीव के भेद से दो प्रकार का है। ससारी, मुक्त और अजीव के भेद से तीन प्रकार का है। भव्य, अभव्य, मुक्त और अजीव के भेद से चार प्रकार का है। अथवा ससारी जीव मुक्त जीव अजीव अमूर्तिक और मूर्तिक अजीव के भेद से चार प्रकार

१—आचार्य कुन्द कुन्द प्रवचनसार २।९७
'एकं सत्'—ऋषि (ऋग्वेद, ४६)

का है। पांच अस्तिकाय के भेदो से तत्व पाच प्रकार का है—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल के भेद से छह प्रकार का है। इसी प्रकार तत्व के भेदों को विस्तार से जानने वालों के लिये इस तत्व के अनन्त भेद हो जाते हैं। जीव का लक्षण चेतना है और उसकी स्थिति अनादि निधन है, वह ज्ञाता-दृष्टा, कर्ता-भोक्ता, देह प्रमाण है।

जीव, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये पाच द्रव्य अमूर्तिक हैं। पुद्गल द्रव्य मूर्तिमान है। जिसमे वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श हो, वह पुद्गल है। पूरण और गलन रूप स्वभाव होने से 'पुद्गल' यह सार्थक नाम है। परमाणुओ का सयोग पूरण और वियुवित गलन कहलाता है। स्कन्ध और परमाणुभेद से पुद्गल दो प्रकारो मे व्यवस्थित है। स्निग्ध और रुक्ष अणुसमुदाय स्कन्ध कहलाता है। यह स्कन्ध-विस्तार द्व्यणुक स्कन्ध से लेकर अनन्तानन्त परमाणु वाले महास्कन्ध पर्यन्त होता है। छाया, आतप, तम, चादनी, मेघ (धूम) आदि पुद्गल के पर्याय हैं। समस्त कार्यों से ही अणु की सिद्धि होती है। दो स्पर्शवाला, परिमण्डलवाला[1] एक वर्ण और एक रस गुण युक्त अणु गुणों की अपेक्षा से नित्य है और पर्यायो की अपेक्षा से अनित्य है। पुद्गल भी छह प्रकार के होते है—१—सूक्ष्मसूक्ष्म २—सूक्ष्म ३—सूक्ष्मस्थूल ४—स्थूलसूक्ष्म ५—स्थूल ६—स्थूल स्थूल। अदृश्य और अस्पृश्य एक परमाणु 'सूक्ष्मसूक्ष्म' कहलाता है। अनन्त प्रदेशो के योग से सम्पन्न कार्माण स्कन्ध 'सूक्ष्म' कहलाते है। शब्द स्पर्श रस और गन्ध 'सूक्ष्मस्थूल' कहलाते हैं क्योकि ये अचाक्षुप हैं। परन्तु अन्य इन्द्रियो से ग्राह्य हैं। छाया, ज्योत्स्ना, आतप आदि 'स्थूलसूक्ष्म' हैं क्योंकि चाक्षुप होने पर भी खण्डित नही किये जा सकते। जलादिक द्रव्य पदार्थ 'स्थूल' हैं। पृथिवी आदिक 'स्थूल-स्थूल' स्कन्ध हैं। इस प्रकार से पदार्थों का याथात्म्य श्रद्धान करने वाला भव्यात्मा उत्कृष्ट आत्मतत्व को प्राप्त होता है।

पूज्य श्री १०८ आचार्य देशभूषण श्री महाराज ट्रस्ट दिल्ली (पजीकृत) द्वारा, जैन सिद्धान्त सूत्र का प्रथम सस्करण वीर सम्वत् २५०३ में प्रकाशित है। इस ग्रन्थ मे नौ अधिकार हैं, जिनमे जैन सिद्धान्त के अवश्य ज्ञातव्य प्रारम्भिक पाठों का समावेश है। वीतराग सर्वज्ञ द्वारा निरुपित होने से निर्भ्रान्त सत्य के रूप में इन अबाधित सिद्धान्तों की मान्यता पूर्व काल से विश्रुत है। 'सूक्ष नियोदित तत्वम्।'

१—'अणव कार्यलिगा' स्यु. द्विस्पर्शा. परिमण्डला.।'

—आदिपुराण २४।१४८

ा वाड्मय सूक्ष्मदृष्टिगम्य है। इसमें जगत् के 'सत्' स्वरूप का जैसा अनादि-
न विवेचन जीवाजीव-मीमासा द्वारा प्रतिपादित किया गया है वह ज्ञान सूर्योदय-
ी है।

विदुषिरत्न ब्र० कुमारी श्री कौशल के द्वारा कुशलतापूर्ण प्रसूत इस पुस्तक
पढने से ज्ञानगरिमा का सहज ही परिचय मिलता है। जैन वाङ्मय मे नारी का
मान धार्मिक, सामाजिक तथा सास्कृतिक परम्परा मे समान रूप से किया गया है।
री के योग्य प्रशसा पदो की जैन-सस्कृति मे न्यूनता नही है और न उन्हे विकास
रने का निषेध किया गया है।[1] अध्येता लाभान्वित होगे, ऐसा विश्वास है।

उपाध्याय विद्यानन्द मुनि

र्यायोग—
र सवत् २५०३
दल्ली-६

१—'तपस्वी ऋषि-मुनियो या वैदिक ऋषियो मे स्त्रियों का समावेश नही हुआ था। गार्गी, वाचक्नवी—जैसी स्त्रिया ब्रह्म-ज्ञान की चर्चा मे भाग लेती थी पर उनके स्वतन्त्र सघ नही थे। स्त्रियो के स्वतन्त्र संघो की स्थापना बौद्ध-काल से एक-दो शताब्दी पूर्व हुई थी। ऐसा लगता है कि उनमे सबसे प्राचीन सघ जैन साध्वियो का था। ये जैन साध्विया वाद-विवाद मे प्रवीण थी, यह बात भद्रा कुण्डलकेशा आदि की कथाओं से भली-भाति ज्ञात हो जायेगी।'

—लेखक धर्मानन्द कोसाम्बी, बौद्ध सघाचा परिचय, पृ० २१४
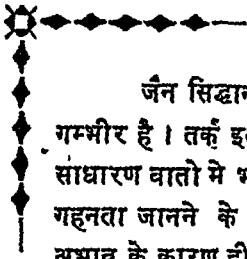
जैन सिद्धान्त रौढिक नही वैज्ञानिक है और इसी कारण यह अत्यन्त गहन व गम्भीर है। तर्क इसकी कसौटी है और अनुभव इसका प्रमाण। इसकी साधारण से साधारण बातो मे भी आचार्यो के सूक्ष्म आशय छिपे हुए हैं। इसलिए इस सिद्धान्त की गहनता जानने के लिए इसका विधिवत् शिक्षण अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षण के अभाव के कारण ही पाठको व जिज्ञासुओ को जैन शास्त्रो के अभ्यास से वह लाभ नही हो पाता जो कि होना चाहिए, क्योकि वे उनके ठीक-ठीक समझ मे नही आते।

किसी भी विषय को पढने व समझने के लिये उसके कुछ विशेष पारिभाषिक शब्दो का परिज्ञान अत्यन्त आवश्यक है, क्योकि शब्द ही अन्तरग के अभिप्राय व आशय प्रगट करने का एकमात्र साधन व माध्यम है। प्रस्तुत पुस्तक जैन साहित्य मे प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दो का ही विशद भण्डार है इसलिए इसे जैन शब्दकोष भी कहे तो अतिशयोक्ति न होगी।

यह पुस्तक "श्री गोपालदास जी बरैया" की जैन सिद्धान्त प्रवेशिका के आधार पर रची गयी है। उसके मूल वाक्यो के अतिरिक्त अधिक विशद व्याख्या करने के लिए तथा उत्पन्न होने वाली तत्सम्बन्धी शकाओ की निवृत्ति के लिए अन्य अनेकों प्रश्न व उत्तर सम्मिलित करके प्रत्येक विषय को सहजबोध बनाने का प्रयत्न किया गया है। पद्धति सर्वत्र वही प्रश्नोत्तर वाली रखी गई है। प्रश्न मोटे अक्षरो मे लिखे हैं और उत्तर पतले अक्षरो मे। अध्यायो के नम्बर वही हैं। केवल उनके अन्तर्गत अधिकार विभाग द्वारा सूची-पत्र को विशदता प्रदान की गई है।

विषय का क्रम व प्रवाह अधिकारों के अनुसार रखने के लिए कही-कहीं मूल प्रश्नो का क्रम भग करके उन्हे कुछ आगे पीछे करना पडा है, परन्तु प्रश्न कही भी लिखे गये हो उनके शब्द जू के तू है। कही-कही उनमे कुछ विशदता लाने के लिये यदि कुछ शब्द अपनी ओर से जोडने पडे है तो वे ब्रैकेट में लिखे गये हैं, ताकि पुस्तक की प्रमाणिकता सुरक्षित रहे। अधिकार विभाग हो जाने के कारण, प्रसग रूप से कुछ प्रश्नो को दो या तीन बार तक ग्रहण करके पुनरुक्ति करना अनिवार्य हो गया है।

पुस्तक की प्रशसा करना व्यर्थ है, क्योकि वह अपना परिचय स्वय दे रही है। इतना ही कह देना पर्याप्त है कि अबोध से अबोध शक्ति भी इसे ध्यान से पढकर दुर्बोध से दुर्बोध विषय को सुबोध रूप जान सकता है। इसे पढने के पश्चात् वह सहज आगम के अथाह सागर मे निर्भय अवगाह पाने को समर्थ हो जायेगा, इसमे तनिक भी सन्देह नही। इसलिए यदि इसे जैन-दर्शन का प्रवेश द्वार कहे तो अनुचित न होगा।

(क्षु०) जिनेन्द्र वर्णी

रोहतक
जून १९६७

उपोद्घात

सत् और असत्, नित्य-अनित्य, एक-अनेक, उत्पाद-व्यय, स्निग्धता-रूक्षता, आकर्षण-विकर्षण—ऐसी परस्पर विरोधी अनेको शक्तियो का आवास वस्तु है। विश्व के ये समस्त पदार्थ अपने द्रव्य मे अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मो के समूह को चुम्बन (स्पर्श) करते हैं तथापि वे एक दूसरे को स्पर्श न करते हुए पूर्णतय अस्पर्शित हैं। इस विराट जगत् मे वे सम्पूर्ण चिद्-अचिद् द्रव्य अत्यन्त निकट एक क्षेत्रावगाह रूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे कदाचिद् भी अपने स्वरूप से च्युत नही होते, इसलिए वे टकोत्कीर्ण की भांति शाश्वत पृथक् स्थिर रहते है। वे अनन्त द्रव्य निमित्त-नैमित्तिक रूप से विरुद्ध तथा अविरुद्ध कार्य करते हुए विश्व के रग-मच पर नाना प्रकार का अभिनय कर रहे हैं जिसको समझना साधारण बुद्धि के लिए अत्यन्त दुष्कर है। सर्वज्ञ भगवान की वाणी मे इसका विशद विवेचन हुआ है। अत उन जटिल वस्तु तत्वो को बुद्धिग्राह्य बनाने के लिए तथा 'जिन' कथित सिद्धान्त के प्रतिपादक पारिभाषिक शब्दों को सरल व सुबोध बनाने के लिए यह प्रयास किया गया है। पंडित गोपालदास बरैय्या जी रचित् जैन सिद्धान्त प्रवेशिका के आधार पर इस पुस्तिका रूप कु जी का निर्माण हुआ है। मेरा विश्वास है कि वस्तु तत्व दोहन के जिज्ञासुओ को यह दीपकवत् मार्गदर्शक बनेगी।

"श्री १०८ आचार्यरत्न देशभूषण जी महाराज ट्रस्ट" (पंजीकृत) दिल्ली ने अत्यन्त प्रसन्नता व उत्साह पूर्वक इसका प्रकाशन कराकर जो संस्कृति व साहित्य की सेवा की है तथा धर्मानुराग प्रगट किया है वह प्रशंसनीय है। इसके मुद्रण में राजेन्द्र कुमार जैन मेरठ (सम्पादक 'वीर') को विस्मरण नही किया जा सकता, जिन्होंने अति रुचिपूर्वक कठिन श्रम से इसे मुद्रित कराया है।

अन्त मे जिनके सान्निध्य में इस विषय का मंथन, संयोजन व संवर्धन हो सका है उन श्री जिनेन्द्र वर्णी जी को यह कृति सप्रेम समर्पित—

ब्र० कु० कौशल

विषय-सूची

नं०	विषय	पृष्ठ
	प्रथमोध्याय—	
	न्याय	
१	लक्षणाधिकार	१
२	प्रत्यक्ष प्रमाणाधिकार	५
३	परोक्ष प्रमाणाधिकार	१०
४	नय अधिकार	२५
	प्रश्नावली प्रथम अध्याय	३१
	द्वितीयोध्याय—	
	द्रव्य गुण पर्याय	
१	सामान्य अधिकार	३२
१	विश्व	३२
२	द्रव्य	३३
३	गुण	३९
४	पर्याय	४१
५	धर्म	४३
६	द्रव्य का विश्लेषण	४६
	प्रश्नावली द्वितीयोध्याय	५१
२	द्रव्याधिकार	५६
१	जीव द्रव्य	५६
२	पुद्गल द्रव्य	६०
३	धर्म द्रव्य	६९
४	अधर्म द्रव्य	७१
५	आकाश द्रव्य	७३
६	काल द्रव्य	७८
७	अस्तिकाय	८१
८	द्रव्य सामान्य	८३
३	गुणाधिकार	८७
१	गुण सामान्य	८७
२	अस्तित्व गुण	९१
३	वस्तुत्व गुण	९२
४	द्रव्यत्व गुण	९३
५	प्रमेयत्व गुण	९६
६	अगुरुलघुत्व गुण	९७
७	प्रदेशत्व गुण	१००
८	विशेष गुण	१०२
९	अनुजीवी प्रतिजीवी गुण	१०५
४	जीव गुणाधिकार	१०७
१	चेतना	१०७
२	ज्ञानोपयोग सामान्य	१०९
३	मति ज्ञान	११२
४	श्रुत ज्ञान	११७
५	अवधि ज्ञान	१२१
६	मन पर्यय ज्ञान	१२६
७	केवल ज्ञान	१२८
८	दर्शनोपयोग	१३१
९	सम्यक्त्व	१३५
१०	चारित्र	१३६
११	सुख	१४०
१२	वीर्य	१४०
१३	भव्यत्व	१४१
१४	जीवत्व व प्राण	१४२
१५	योग व उपयोग	१४४

नं०	विषय	पृष्ठ	नं०	विषय	पृष्ठ
१६	क्रियावती व भाववती शक्ति	१४६		गुण हानि क्रम व प्रणित	२०४
५	पर्यायाधिकार	१५०		अनुभाग की रचना	२०६
१	सहभावी व क्रमभावी पर्याय	१५०	३	बन्धकारण अधिकार	२०८
२	द्रव्य व गुण पर्याय	१५१	१	द्रव्य भाव बन्ध व उनके	
३	अर्थ व व्यञ्जन पर्याय	१५३		कारण द्रव्य भाव आस्रव	२०८
४	सादि सान्तादि पर्याय	१५६	२	मिथ्यात्व व उसके भेद	२१०
५	अभ्यास	१५८	३	अविरति, प्रमाद व योग के	
	प्रश्नावली पर्यायाधिकार	१६४		भेद प्रभेद	२११
६	अन्य विषयाधिकार	१६५	४	मिथ्यात्वादि कारणो की	
१	विग्रह गति	१६५		प्रधानता से बन्धने वाली	
२	समुद्घात	१६६		प्रकृतियें	२१२
३	कारण कार्य	१७०	५	साम्परायिक व ईर्यापथास्रव	२१४
				चतुर्थोध्याय—	
	तृतीयोध्याय—			**भाव व मार्गणा**	
	कर्म सिद्धान्त		१	भावाधिकार	२१७
१	चतु श्रेणी बन्धाधिकार	१७५		क्षायिकादि भाव परिचय	२१७
१	मूलोत्तर प्रकृति परिचय	१७५	२	मार्गणाधिकार	२२०
	कर्म नोकर्म भाव कर्म	१७५		१४ मार्गणा या २० प्ररूपणा	
	अकाल व सुख	१७८	३	जन्म व जीव समास	२३३
	कषाय व वासना व लेश्या	१८१	१	जन्म	२३३
	संस्थान व संहनन	१८८	२	जीव समास	२३४
	पर्याप्ति	१९१	४	लोकाधिकार	२३७
२	पुण्य पाप व घाती अघाती	१९५		**पञ्चमोध्याय—**	
	प्रकृति विभाग	१९५		**गुण स्थान**	
३	स्थिति बन्ध	१९८	१	मोक्ष व उसका उपाय	२४१
	मुहूर्त सागर पल्य आदि	१९९	२	गुण स्थानाधिकार	२४३
४	अनुभाग व प्रदेशबन्ध	२००		गुण स्थानो का स्वरूप तथा	
२	उदय उपशम आदि अधिकार	२०१		उनमे बन्ध उदय सत्व प्ररूपणा	
	उदय उपशम संक्रमण आदि	२०१		**षष्टमोध्याय—**	
	निषेक स्पर्धक वर्गणा	२०३		**तत्वार्थ**	
	अविभाग प्रतिच्छेद	२०३	१	नव पदार्थाधिकार	२६२

नं०	विषय	पृष्ठ
२	रत्नत्रयाधिकार	२७२
१	धर्म	२७२
२	सम्यग्दर्शन	२७२
३	सम्यग्ज्ञान	२८१
४	सम्यक् चारित्र	२८४
५	रत्नत्रय सामान्य	२८६
	सप्तमोध्याय—	
	स्याद्वाद	
१	वस्तु स्वरूपाधिकार	२९२
१	सामान्य विशेष	२९२
२	स्व चतुष्टय	२९५
३	अभाव	२९७
२	अनेकान्ताधिकार	३०४
३	स्याद्वादाधिकार	३०७
४	सप्त भंगी अधिकार	३१४
५	अनेकान्त योजना विधि	३२२
	अष्टमोध्याय—	
	नय-प्रमाण	
१	प्रमाणाधिकार	३२३
२	निक्षेपाधिकार	३२७
३	नय अधिकार	३२९
१	नय सामान्य	३२९
२	आगम पद्धति	३२९
३	अध्यात्म पद्धति	३४१
४	नय योजना विधि	३४६
५	समन्वय	३४९
६	प्रश्नावली	३५५

प्रथमोऽध्यायः

ब्र० कु० कौशल जी

प्रथमोध्याय

(न्याय)

१/१ लक्षणाधिकार

मंगलं भगवान वीरो मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैन धर्मोस्तु मंगलं ॥

नोट :—कोष्ठक के प्रश्न जैन सिद्धान्त प्रवेशिक के है, शेष स्वकृत हैं।

(१) पदार्थो को जानने के कितने उपाय हैं ?
चार उपाय है—लक्षण, प्रमाण, नय व विक्षेप।

२ पदार्थो को जानने से क्या लाभ है ?
पदार्थो के ज्ञान से सम्यग्दर्शन होता है और उससे परम्परा मोक्ष।

३. एक ही उपाय का प्रयोग करे तो क्या बाधा है ?
विशद व यथार्थ ज्ञान न हो सकेगा।

(४) लक्षण किसको कहते हैं ?
वहुत से मिले हुए पदार्थो मे से किसी एक पदार्थ को जुदा करने वाले हेतु को लक्षण कहते है। जैसे जीव का लक्षण चेतना।

५. अनेक पदार्थो में से एक एक पदार्थ को हाथ द्वारा जुदा करने से क्या पदार्थ का लक्षण कर दिया गया ?
नही ! हाथ द्वारा जुदा करने का तात्पर्य नही है बल्कि हेतु द्वारा जुदा करने का तात्पर्य है।

६. **हेतु अर्थात् क्या ?**
ज्ञान का जो विकल्प या शब्द पदार्थ की विशेषता दर्शाने मे कारण पडे, वही हेतु है ।

(७) **लक्षण के कितने भेद हैं ?**
दो है—एक आत्मभूत और दूसरा अनात्मभूत ।

(८) **आत्मभूत लक्षण किसे कहते है ?**
जो वस्तु के स्वरूप मे मिला हो, जैसे अग्नि का लक्षण उष्णपना करें ।

(९) **अनात्मभूत लक्षण किसको कहते हैं ?**
जो वस्तु के स्वरूप मे मिला न हो, जैसे–दण्डी पुरुष का लक्षण दण्ड ।

(१०) **लक्षणाभास किसे कहते हैं ?**
जो लक्षण सदोष हो ।

(११) **लक्षण के दोष कितने हैं ?**
तीन है—अव्याप्ति, अतिव्याप्ति व असम्भव ।

(१२) **लक्ष्य किसे कहते हैं ?**
जिसका लक्षण किया जाये, उसे लक्ष्य कहते है ।

१३ **आत्मभूत लक्षण के अभेद पदार्थ में लक्ष्य-लक्षण भेद कैसे बन सकता है ?**
लक्षण सर्वथा अभेद नही है, ज्ञान द्वारा भेद जाना जाता है ।

१४ **अनात्मभूत-लक्षण के सर्वथा भिन्न पदार्थो मे लक्ष्य-लक्षण भाव कैसे सम्भव है ?**
ऐसा व्यवहार देखा जाता है ।

(१५) **अव्याप्ति दोष किसे कहते हैं ?**
लक्ष्य के एक देश मे लक्षण के रहने को अव्याप्ति दोष कहते हैं, जैसे पशु का लक्षण सीगवाला करना ।

(१६) अतिव्याप्ति दोष किसे कहते है ?

लक्ष्य और अलक्ष्य मे लक्षण के रहने को अतिव्याप्ति दोष कहते है; जैसे गौ का लक्षण सीग।

(१७) अलक्ष्य किसे कहते हैं ?

लक्ष्य के अतिरिक्त दूसरे पदार्थों को अलक्ष्य कहते है।

(१८) असम्भव दोष किसे कहते है ?

लक्ष्य मे लक्षण की असम्भवता को असम्भव दोप कहते है।

प्रश्नावली

१. पदार्थो को जानने के कितने उपाय है ?

२ पदार्थो को जानने के लिये क्या एक ही उपाय से काम चल सकता है, कारण सहित बताओ।

३ लक्षण का लक्षण करो।

४. अनेक पक्षियो मे से यह कैसे जाना जाये कि यह तोता है या कबूतर ?

५ लक्षण के भेद व उनके लक्षण बताओ।

६ निम्न मे लक्ष्य व लक्षण दर्शाओ —

उत्पाद व्यय ध्रौव्ययुक्त सत्; गुणपर्ययवद् द्रव्य; ज्ञानवानश्च जीवो; स्पर्शरसगन्धवर्णवन्त पुद्गल ; दण्डेवाला व्यक्ति रामदत्त है; जिस पर कौवा बैठा है वह मकान रामदत्त का है; बरामदे वाला पीला भवन हस्पताल है; झडे वाला भवन कोर्ट है।

७. निम्न उदाहरणो मे से आत्मभूत व अनात्मभूत लक्षण बताओ — देवदत्त का घर; आम का वृक्ष, पीले रग का मकान; छतरी वाला मनुष्य; गाने वाला पुरुप, जिसके मुंह पर तिल है वही राजाराम है।

८ निम्न के लक्षण करो—

अतिव्याप्ति, लक्ष्य, अव्याप्ति, असभव, लक्षणाभास।

६. लक्षणाभास कितने प्रकार का है ?

१०. निम्न लक्षणो मे दोष बताइये —

जीव का लक्षण अमूर्तीक, आकाश का लक्षण व्यापक, जीव का लक्षण इच्छा व प्रयत्न; जो परिणामी होता है वह पुद्गल है, जिसमे प्रकाश पाया जाय वह अग्नि; जो चार पैर वाला वह तिर्यञ्च; दूध देवे सो गाय, वृक्ष का नाम वनस्पति, जहा कोई न रहे सो नगर, पुत्रवती स्त्री वन्ध्या कहलाती है, एक प्रदेशी द्रव्य कालाणु; जो वृक्ष पर रहे वह पक्षी, अग्नि शीतल होती है ।

१/२ प्रत्यक्ष प्रमाणाधिकार

(१) प्रमाण किसे कहते हैं ?

सच्चे ज्ञान को प्रमाण कहते है ।

२. सच्चे ज्ञान से क्या तात्पर्य ?

जैसी वस्तु हो उसको वैसी ही जानना, जैसे रस्सी को रस्सी और सर्प को सर्प ।

३ ज्ञान ही प्रमाण है, ऐसा कहने मे क्या दोष है ?

यह लक्षण अतिव्याप्त है, क्योकि मिथ्याज्ञान मे भी चला जाता है ।

४ क्या ज्ञान मिथ्या भी होता है ?

हा, जैसे सीप को चान्दी, रस्सी को सर्प तथा ठूंठ को मनुष्य जानना ।

(५) प्रमाण के कितने भेद है ?

दो भेद है—एक प्रत्यक्ष दूसरा परोक्ष ।

(६) प्रत्यक्ष ज्ञान किसे कहते हैं ?

जो पदार्थ को स्पष्ट जाने ।

(७) प्रत्यक्ष के कितने भेद हैं ?

दो भेद है—एक साव्यवहारिक प्रत्यक्ष दूसरा पारमार्थिक प्रत्यक्ष ।

(८) सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष किसे कहते हैं ?

जो इन्द्रियो और मन की सहायता से पदार्थ को एक देश स्पष्ट जाने ।

९ एक देश स्पष्ट जानने से क्या तात्पर्य ?

वस्तु की सर्व विशेषताओ को न जानकर कुछ मात्र को ही जानना एक देश जानना है, जैसे नेत्र द्वारा देखने पर वस्तु का रूप तो दिखाई देता है पर रस नही।

(१०) पारमार्थिक प्रत्यक्ष किसे कहते हैं ?

जो बिना किसी की सहायता के पदार्थ को स्पष्ट जाने।

११. बिना इन्द्रिय व प्रकाश की सहायता के स्पष्ट कैसे जाना जा सकता है ?

विशेष प्रकार के ज्ञान द्वारा स्पष्ट जाना जा सकता है। इस प्रकार का ज्ञान प्राय बड़े बडे तपस्वियो को हुआ करता है।

(१२) पारमार्थिक प्रत्यक्ष के कितने भेद हैं ?

दो भेद है—एक विकल पारमार्थिक दूसरा सकल पारमार्थिक।

(१३) विकल पारमार्थिक प्रत्यक्ष किसको कहते हैं ?

जो रूपी पदार्थों को बिना किसी की सहायता के स्पष्ट जाने।

१४. विकल प्रत्यक्ष द्वारा छहों द्रव्यो में से कौन सा द्रव्य जाना जा सकता है और क्यो ?

केवल पुद्गल द्रव्य या तत्सयोगी भाव जाने जा सकते है, क्योकि वही रूपी हैं।

(१५) विकल पारमार्थिक प्रत्यक्ष के कितने भेद हैं ?

दो भेद है—एक अवधि ज्ञान दूसरा मन.पर्यय ज्ञान।

(१६) अवधि ज्ञान किसे कहते हैं ?

द्रव्य क्षेत्र काल व भाव की मर्यादा लिये जो रूपी पदार्थों को स्पष्ट जाने। (इसके विशेष विस्तार के लिये आगे देखो अध्याय २ का चतुर्थ अधिकार)

१७ द्रव्य क्षेत्र काल भाव की मर्यादा से क्या समझते हो ?

क अमूर्तीक को न जानकर मात्र मूर्तीक को जाने, तथा मूर्तीक मे भी स्थूल को ही जाने सूक्ष्म को नही, यह द्रव्य की मर्यादा है।

ख. लोक मे स्थित को ही जाने, अलोक मे स्थित को नही। लोक

मे भी मनुष्य लोक मे स्थित को ही जाने इससे वाहर में स्थित को नही, अथवा मनुष्य लोक मे भी कुछ योजन मात्र तक ही जाने उससे आगे नही। यह क्षेत्र की मर्यादा है।

ग कुछ भव या वर्ष आगे पीछे की ही जाने अनादि व अनन्त काल की नही। यह काल की मर्यादा है।

घ. पुद्गल के कुछ ही गुणो को अथवा कुछ ही रागादिक सयोगी भावो को जाने, सर्व गुणो व भावो को नही। उनकी भी कुछ मात्र पर्यायो को जाने सर्व को नही। यह भाव की मर्यादा है।

नोट :—(मर्यादा का यह कथन देशावधि की अपेक्षा जानना। परमावधि व सर्वावधि की विशेषता यथा स्थान वताई जायेगी।)

१८. क्या अवधि ज्ञान जीव की हालतों को जान सकता है ?

शुद्ध जीव की हालतो को नही जान सकता क्योंकि वे अमूर्तीक हैं। अशुद्ध जीव की रागादि युक्त हालतों को जान सकता है, क्योकि वे कथचित मूर्तीक है।

१९ अशुद्ध जीव की हालतो को मूर्तीक कैसे कहा ?

क्योकि वे देश कालावच्छिन्न होने से सीमा सहित तथा विशेप आकार प्रकार वाली होती है।

२०. अवधि ज्ञानी मुनिजन जीव के पहिले पिछले भव कैसे वता देते है ?

कर्मों व शरीर मे बद्ध जीव की वे भव तथा हालते आदि अन्त युक्त होने से विशेप आकार प्रकार को धारण कर लेती है। सिद्ध भगवान की हालतों वत् देशकालानवच्छिन्न अमूर्तीक नही होती।

(२१) मनःपर्यय ज्ञान किसे कहते हैं ?

द्रव्य क्षेत्र काल व भाव की मर्यादा लिए हुए जो दूसरे के मन मे टिके हुए रूपी पदार्थों को स्पष्ट जाने। (अर्थात् विशेष आकार प्रकार युक्त मानसिक भावों को स्पष्ट जाने)। (इसके विस्तार के लिए देखो आगे अध्याय २ का चौथा अधिकार)।

२२ मन में स्थित पदार्थ से क्या तात्पर्य ?
मानसिक सकल्प विकल्प का नाम ही मन मे स्थित पदार्थ है ।

२३ ज्ञानात्मक होने के कारण मानसिक सकल्प विकल्प तो अमूर्तीक होते है, उन्हें मन पर्यय ज्ञान कैसे जाने ?
ज्ञेयाश्रित तथा देशकालावच्छिन्न ज्ञान भी विशेप आकार प्रकार का होने के कारण मूर्तीक ही माना जाता है ।

(२४) सकल पारमार्थिक प्रत्यक्ष किसे कहते है ?
केवलज्ञान को ।

२५ केवलज्ञान किसे होता है ?
अर्हन्तो व सिद्धो के अतिरिक्त अन्य किसी को नही होता ।

(२६) केवलज्ञान किसे कहते है ?
जो त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थो को (युगपत) स्पष्ट जाने । (विशेष देखिए आगे अध्याय २ अधिकार ४) ।

२७ युगपत जानने से क्या तात्पर्य ?
जिस प्रकार हम एक पदाथ को छोडकर दूसरे पदार्थ को जानते है, उस प्रकार केवलज्ञान अटक-अटककर नही जानता । वह सब कुछ एकदम जान लेता है और सदा जानता ही रहता है ।

प्रश्नावली

१ प्रमाण किसे कहते है ?
२ ज्ञान को प्रमाण कहते हैं, ऐसा कहने मे क्या दोप आता है ?
३ ज्ञान वडा है या प्रमाण ?
४ प्रत्यक्ष ज्ञान का क्या अर्थ है ?
५ प्रत्यक्ष प्रमाण के सर्व भेद प्रभेद वताओ ।
६ एक देश—प्रत्यक्ष से क्या समझें ?
७. द्रव्य क्षेत्रकाल भाव की मर्यादा से क्या समझे ?

८. मूर्तीक पदार्थ को जानने वाला ज्ञान जीव के पूर्व भव कैसे जाने ?
९ क्या अवधिज्ञान के द्वारा सिद्ध भगवान को भी देखा जा सकता है ?
१० मानसिक विचार मूर्तीक है या अमूर्तीक, कारण सहित बताओ ।
११. आत्मा का ध्यान करने वाले मुनि के मन की बात क्या मन पर्यय ज्ञान जान सकता है, कारण सहित बताओ ।
१२ अर्हन्त भगवान तुम्हारी बात सुनने के पश्चात मेरी बात सुनेंगे क्या यह ठीक है ?
१३. जो घटना अभी हुई नही उसे कौन ज्ञान जान सकता है ?
१४. अवधिज्ञान व केवलज्ञान दोनो के द्वारा विशद जानने मे क्या अन्तर है ?
१५. निम्न बाते कौनसे प्रमाण द्वारा जानी जाती है—
भगवान के दर्शन करना, पहले भव मे तुम देव थे, पुस्तक पढना, तुम यह विचार कर रहे हो कि तुम देवदत्त की सहायता से सोमदत्त के साथ अपना बदला चुका सकते हो, तुम अपने पुत्र द्वारा ही पाँच वर्ष बाद मारे जाओगे, प्रत्येक पदार्थ मे प्रतिक्षण सूक्ष्म परिणमन होता रहता है, मेरी अगूठी खोई गई, उसे कहाँ तलाश करूँ ? जाओ तालाव के किनारे पड़ी है उठा लो ।
१६ अवधिज्ञान व मन.पर्यय ज्ञान में क्या अन्तर है ?
१७. अवधि, मन पर्यय व केवलज्ञान इन तीनो मे कौन ज्ञान अधिक सूक्ष्म है ?

१/३ परोक्ष प्रमाणाधिकार

(१) परोक्ष प्रमाण किसे कहते है ?
जो दूसरे की सहायता से पदार्थ को स्पष्ट जाने ।

२ दूसरे की सहायता से जानने से क्या तात्पर्य ?
दूसरे की सहायता से जानना दो प्रकार से होता है—एक स्वार्थ दूसरा परार्थ ।

३ स्वार्थ परोक्ष प्रमाण किसे कहते हैं ?
इन्द्रियो द्वारा स्वय कोई पदार्थ देखकर उससे सम्वन्ध रखने वाले किसी दूसरे अदृष्ट पदार्थ को जान लेना स्वार्थ परोक्ष प्रमाण है, जैसे धुए को देखकर स्वत अग्नि को जान लेना अथवा किसी व्यक्ति की आवाज सुनकर उस व्यक्ति को पहिचान लेना ।

४ परार्थ परोक्ष प्रमाण किसे कहते हैं ?
पढकर या दूसरे के मुख से सुनकर जानना तथा तर्क व हेतु आदि के द्वारा निर्णय करना परार्थ परोक्ष प्रमाण है । नोट – (अभ्यास के लिये देखो आगे प्रश्नावली मे न० ४-५)

(५) परोक्ष प्रमाण के कितने भेद है ?
पाच है—स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, तर्क, अनुमान व आगम ।

(६) स्मृति किसे कहते हैं ?
पहले अनुभव किये हुए पदार्थ की याद को स्मृति कहते हैं ।

(७) **प्रत्यभिज्ञान किसको कहते है ?**

स्मृति और प्रत्यक्ष के विषयभूत पदार्थो मे जोड़रूप ज्ञान को प्रत्यभिज्ञान कहते है, जैसे—यही वह व्यक्ति है जिसे कल देखा था।

८ **जोड़ रूप ज्ञान से क्या समझे ?**

किसी पदार्थ को इन्द्रिय द्वारा प्रत्यक्ष जानकर अपनी पूर्व स्मृति के आधार पर यह जान लेना कि 'यह वही है' या 'वैसा ही है' जोडरूप ज्ञान कहलाता है, क्योकि इसमे पूर्व स्मृति और वर्तमान प्रत्यक्ष दोनो का सम्मेल पाया जाता है।

(९) **प्रत्यभिज्ञान के कितने भेद हैं ?**

एकत्व प्रत्यभिज्ञान, सादृश्य प्रत्यभिज्ञान, आदि (विलक्षण तत्प्रतियोगी इत्यादि) अनेक भेद है।

(१०) **एकत्व प्रत्यभिज्ञान किसे कहते है ?**

स्मृति और प्रत्यक्ष के विषयभूत पदार्थो मे एकता दिखाते हुए जोडरूप ज्ञान को एकत्व प्रत्यभिज्ञान कहते है, जैसे 'यह वही मनुष्य है जिसे कल देखा था'।

(११) **सादृश्य प्रत्यभिज्ञान किसे कहते है ?**

स्मृति और प्रत्यक्ष के विषयभूत पदार्थों मे सादृश्य दिखाते हुए जोडरूप ज्ञान को सादृश्य प्रत्यभिज्ञान कहते है, जैसे यह गौ गवय (रोझ) के सदृश्य है।

१२. **विलक्षण प्रत्यभिज्ञान किसे कहते है ?**

स्मृति और प्रत्यक्ष के विषयभूत पदार्थो मे विलक्षणता दिखाते हुए जोडरूप ज्ञान को विलक्षण प्रत्यभिज्ञान कहते है, जैसे—भैंस गाय से विलक्षण होती है।

१३ **तत्प्रतियोगी प्रत्यभिज्ञान किसे कहते हैं ?**

स्मृति और प्रत्यक्ष के विषयभूत पदार्थो में अपेक्षा दिखाते हुए जोडरूप ज्ञान को तत्प्रतियोगी प्रत्यभिज्ञान कहते हैं, जैसे—यह स्थान उस स्थान से दूर है।

(१४) **तर्क किसको कहते है ?**

व्याप्ति ज्ञान को तर्क कहते है (यदि ऐसा न हुआ होता तो कदापि ऐसा न होता । इत्यादि प्रकार के ज्ञान को तर्क कहते हैं, क्योकि व्याप्ति ज्ञान के विना वह सम्भव नही ।)

(१५) **व्याप्ति किसको कहते हैं ?**

अविनाभाव सम्वन्ध का नाम व्याप्ति है ।

(१६) **अविनाभाव सम्बन्ध किसे कहते हैं ?**

जहा-जहा साधन होय वहा-वहा साध्य का होना, और जहा-जहा साध्य नही होय वहा-वहा साधन के भी न होने को अविनाभाव सम्बन्ध कहते है, जैसे जहा-जहा धूम है वहा-वहा अग्नि है और जहा-जहा अग्नि नही है वहा-वहा धूम नही है ।

१७ **व्याप्ति कितने प्रकार की है ?**

दो प्रकार की—सम व्याप्ति व विषम व्याप्ति ।

१८ **सम व्याप्ति किसे कहते है ?**

दोनो तरफ साधन की साध्य के साथ व्याप्ति को सम व्याप्ति कहते है । अर्थात् साधन के होने पर साध्य का अवश्य होना और साधन के न होने पर साध्य का भी न होना, जैसे जहा जहा वायु होती है वहा वहा वृक्षो का हिलना अवश्य देखा जाता है । जहा-जहा वायु नही होती वहा-वहा वृक्षो का हिलना भी नही होता ।

१९ **विषम व्याप्ति किसे कहते हैं ?**

एक तरफा व्याप्ति को विषम व्याप्ति कहते हैं । अर्थात् साधन के होने पर साध्य का अवश्य होना, पर साधन के न होने पर साध्य होवे या न भी होवे, जैसे धुए के होने पर अग्नि अवश्य होती है, पर धुआ न होने पर अग्नि होवे या न भी होवे ।

(२०) **साधन किसको कहते हैं ?**

जो साध्य के विना न होवे जैसे अग्नि का साधन धूम है, अथवा जिस हेतु द्वारा कोई बात सिद्ध की जाये उसे साधन कहते हैं ।

(२१) साध्य किसको कहते है ?

इष्ट, अबाधित, असिद्ध को साध्य कहते है । साधन या हेतु द्वारा जो बात सिद्ध की जाय उसे साध्य कहते है ।

(२२) इष्ट किसको कहते है ?

वादी तथा प्रतिवादी जिसको सिद्ध करना चाहते हैं, उसे इष्ट कहते है ।

(२३) अबाधित किसको कहते हैं ?

जो दूसरे प्रमाण से बाधित न हो, जैसे अग्नि का ठण्डापन प्रत्यक्ष प्रमाण से बाधित है । इस प्रकार यह ठण्डापन साध्य नही हो सकता ।

२४. बाधित कितने प्रकार का होता है ?

पाच प्रकार का—प्रत्यक्ष, अनुमान, आगम, लोक व स्ववचन बाधित ।

२५ पांचों बाधित पक्षों के लक्षण व उदाहरण बताओ ।

(क) प्रत्यक्ष प्रमाण से बाधित प्रत्यक्ष बाधित है, जैसे अग्नि ठण्डी है क्योकि छूने से ठण्डी महसूस होती है ।

(ख) अनुमान प्रमाण से बाधित अनुमान बाधित है, जैसे शब्द अपरिणामी है-क्योंकि किया जाता है ।

(ग) आगम प्रमाण से बाधित आगम बाधित है, जैसे पाप से सुख होता है ।

(घ) जो लोकमान्य न हो वह लोक बाधित है, जैसे मनुष्य की खोपडी पवित्र है, क्योंकि प्राणी का अग है जैसे शख ।

(ङ) जिसमे स्वय अपने वचन से बाधा आती हो वह स्ववचन बाधित है, जैसे 'मै आज मौन से हूँ, क्योंकि आज मुझे बोलने का त्याग है', ऐसा मुँह से कहकर बताना ।

(२६) असिद्ध किसको कहते हैं ?

जो दूसरे प्रमाण से सिद्ध न हो उसे असिद्ध कहते है, अथवा जिसका निश्चय न हो उसे असिद्ध कहते हैं ।

(२७) **अनुमान किसको कहते हैं ?**

साधन से साध्य के ज्ञान को अनुमान कहते है।

(२८) **हेत्वाभास किसको कहते है ?**

सदोष हेतु को।

(२९) **हेत्वाभास के कितने भेद हैं ?**

चार है—असिद्ध, विरुद्ध, अनैकान्तिक व अकिंचित्कर।

(३०) **असिद्ध हेत्वाभास किसे कहते है ?**

जिस हेतु के अभाव का निश्चय हो, अथवा उसके सद्भाव मे सन्देह हो, उसे असिद्ध हेत्वाभास कहते है, जैसे—'शब्द नित्य है' क्योकि नेत्र का विषय है। परन्तु शब्द कर्ण का विषय है नेत्र का नही हो सकता, इसका 'नेत्र का विषय' यह हेतु असिद्ध हेत्वाभास है।

(३१) **विरुद्ध हेत्वाभास किसको कहते है ?**

साध्य से विरुद्ध पदार्थ के साथ जिसकी व्याप्ति हो, उसको विरुद्ध हेत्वाभास कहते है, जैसे—शब्द नित्य है, क्योकि परिणामी है। इस अनुमान मे परिणामी की व्याप्ति अनित्य के साथ है नित्य के साथ नही। इसलिये नित्यत्व पक्ष में 'परिणामी हेतु' विरुद्ध हेत्वाभास है।

(३२) **अनैकान्तिक (व्यभिचारी) हेत्वाभास किसे कहते हैं ?**

जो हेतु पक्ष, सपक्ष और विपक्ष इन तीनो मे व्यापै उसको अनैकान्तिक हेत्वाभास कहते है, जैसे—इस कोठे मे धूम है, क्योकि इसमे अग्नि है। यह 'अग्नित्व' हेतु पक्ष, सपक्ष व विपक्ष तीनो मे व्यापक होने से अनैकान्तिक हेत्वाभास है।

(३३) **पक्ष किसको कहते है ?**

जहा साध्य के रहने का शक हो, जैसे ऊपर के दृष्टान्त मे कोठा।

(३४) **सपक्ष किसको कहते हैं ?**

जहा साध्य के सद्भाव का निश्चय हो, जैसे धूम का सपक्ष गीले ईंधन से मिली अग्नि है।

(३५) **विपक्ष किसको कहते है ?**

जहा साध्य के अभाव का निश्चय हो, जैसे—अग्नि से तपा हुआ लोहे का गोला।

(३६) **अकिंचित्कर हेत्वाभास किसको कहते हैं ?**

जो हेतु कुछ भी कार्य (साध्य की सिद्धि) करने मे समर्थ न हो।

(३७) **अकिंचित्कर हेत्वाभास के कितने भेद है ?**

दो है—एक सिद्ध साधन दूसरा वाधित विषय।

(३८) **सिद्ध साधन किसे कहते हैं ?**

जिस हेतु का साध्य सिद्ध हो, जैसे—अग्नि गर्म है, क्योकि स्पर्शन इन्द्रिय से ऐसा प्रतीत होता है।

(३९) **वाधित विषय हेत्वाभास किसे कहते है ?**

जिस हेतु के साध्य मे दूसरे प्रमाण से वाधा आवे।

(४०) **वाधित विषय हेत्वाभास के कितने भेद है ?**

प्रत्यक्ष वाधित, आगम वाधित, अनुमान वाधित, स्ववचन-वाधित आदि अनेक भेद है।

(४१) **प्रत्यक्ष वाधित किसको कहते है ?**

जिसके साध्य मे प्रत्यक्ष से वाधा आवे, जैसे 'अग्नि ठण्डी है' क्योकि यह द्रव्य है। यह तो प्रत्यक्ष वाधित है।

(४२) **अनुमान वाधित किसको कहते है ?**

जिसके साध्य मे अनुमान जैसे वाधा आवे,जैसे—घास आदि कर्ता की वनाई हुई है, क्योकि ये कार्य हैं। परन्तु इसमे अनुमान से वाधा आती है कि—घास आदि किसी की वनाई हुई नही है, क्योकि इनका वनाने वाला शरीरधारी नही है। जो-जो शरीरधारी की वनाई हुई नही है वे-वे वस्तुये कर्ता की वनाई हुई नही हैं,—जैसे आकाश।

(४३) **आगम वाधित किसको कहते हैं ?**

शास्त्र से जिसका साध्य वाधित हो, उसको आगम वाधित कहते हैं, जैसे पाप सुख का देने वाला है, क्योकि यह कर्म है।

जो-जो कर्म होते है वे-वे सुख के देने वाले होते है, जैसे पुण्य कर्म। इसमे शास्त्र से बाधा आती है, क्योकि शास्त्र मे पाप को दु ख का देने वाला लिखा है।

(४४) स्ववचन बाधित किसको कहते हैं ?

जिसके साध्य मे अपने ही वचन से बाधा आवे, जैसे—मेरी माता वन्ध्या है, क्योकि पुरुष का सयोग होने पर भी उसको गर्भ नही रहता।

(४५) अनुमान के कितने अग है ?

पाच है—प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय और निगमन।

(४६) प्रतिज्ञा किसको कहते हैं ?

पक्ष और साध्य के कहने को प्रतिज्ञा कहते है, जैसे 'इस पर्वत मे अग्नि है'।

(४७) हेतु किसको कहते हैं ?

साधन के वचन को (कहने को) हेतु कहते हैं, जैसे 'क्योकि यह धूमवान है'।

(४८) उदाहरण किसको कहते हैं ?

व्याप्ति पूर्वक दृष्टान्त के कहने को उदाहरण कहते है, जैसे—'जहाँ-जहाँ धूम होता है वहाँ-वहाँ अग्नि होती है, जैसे रसोई घर। और जहाँ-जहाँ अग्नि नही होती वहाँ-वहाँ धूम भी नही होता जैसे तालाब'।

(४९) दृष्टान्त किसको कहते हैं ?

जहाँ पर साध्य साधन की मौजूदगी या गैर मौजूदगी दिखाई जाय, जैसे—रसोई घर अथवा तालाब।

(५०) दृष्टान्त के कितने भेद है ?

दो हैं–एक अन्वय दृष्टान्त दूसरा व्यतिरेकी दृष्टान्त।

(५१) अन्वय दृष्टान्त किसे कहते है ?

जहाँ साधन की मौजूदगी मे साध्य की मौजूदगी दिखाई जाय, जैसे–रसोई घर मे धूम का सद्भाव होने पर अग्नि का सद्भाव दिखाया गया।

(५२) व्यतिरेकी दृष्टान्त किसको कहते है ?
जहाँ साध्य की अनुपस्थिति मे साधन की अनुपस्थिति दिखाई जाये, जैसे (अग्नि के अभाव की सिद्धि मे) तालाब ।

(५३) उपनय किसको कहते है ?
पक्ष और साधन मे दृष्टान्त की सदृश्यता दिखाने को उपनय कहते है, जैसे—यह पर्वत भी वैसा ही धूमवान है (जैसी रसोई) ।

(५४) निगमन किसको कहते है ?
नतीजा निकालकर प्रतिज्ञा के दोहराने को निगमन कहते है जैसे 'इसलिये यह पर्वत भी अग्नि वाला है' ।
(नोट अभ्यास के लिये देखो आगे प्रश्नावली में न० ११)

(५५) हेतु के कितने भेद है ?
तीन है—केवलान्वयी, केवल व्यतिरेकी और अन्वय व्यतिरेकी ।

(५६) केवलान्वयी हेतु किसे कहते है ?
जिस हेतु मे सिर्फ अन्वय दृष्टान्त हो, जैसे—जीव अनेकान्त स्वरूप है, क्योकि सत्स्वरूप है । जो-जो सत्स्वरूप होता है वह-वह अनेकान्त स्वरूप होता है, जैसे पुद्गलादिक)

(५७) केवल व्यतिरेकी हेतु किसको कहते है ?
जिसमे सिर्फ व्यतिरेकी दृष्टान्त पाया जावे, जैसे—जीवित शरीर मे आत्मा है, क्योंकि इसमें श्वासोच्छ्वास है । जहाँ-जहाँ आत्मा नही होता वहाँ-वहाँ श्वासोच्छ्वास भी नही होता, जैसे चौकी वगैरह ।

(५८) अन्वय व्यतिरेकी हेतु किसको कहते हैं ?
जिसमे अन्वय दृष्टान्त और व्यतिरेकी दृष्टान्त दोनों हों । जैसे पर्वत में अग्नि है, क्योंकि इसमे धूम है । जहाँ-जहाँ धूम है वहाँ-वहाँ अग्नि होती है, जैसे रसोईघर । जहाँ-जहाँ अग्नि नहीं होती वहाँ-वहाँ धूम भी नही होता, जैसे तालाव ।
(नोट. अभ्यास के लिये देखो आगे प्रश्नावली मे नं० ११)

(५९) आगम प्रमाण किसको कहते है ?

आप्त के वचन आदि से उत्पन्न हुए पदार्थज्ञान को।

(६०) आप्त किसको कहते है ?

परम हितोपदेशक सर्वज्ञदेव को आप्त कहते है।

(६१) प्रमाण का विषय क्या है ?

सामान्य अथवा धर्मी तथा विशेष अथवा धर्म दोनो अशो का समूहरूप वस्तु प्रमाण का विषय है।

६२ सामान्य किसको कहते है ?

अनेकता मे रहने वाली एकता को सामान्य कहते है।

६३. सामान्य के कितने भेद है ?

दो हैं—तिर्यक् सामान्य व ऊर्ध्व सामान्य।

६४. तिर्यक् सामान्य किसे कहते है ?

अनेक भिन्न पदार्थो मे रहने वाली सामान्यता को तिर्यक् सामान्य कहते हैं, जैसे—खडी मुण्डी आदि अनेक गौओ मे रहने वाला एक 'गोत्व'।

६५. ऊर्ध्व सामान्य किसे कहते है ?

एक पदार्थ की अनेक अवस्थाओ मे रहने वाली एकता को ऊर्ध्व सामान्य कहते हैं, जैसे—कडे कुण्डल आदि मे रहने वाला 'स्वर्ण'।

(६६) विशेष किसको कहते है ?

वस्तु के किसी एक खास अश अथवा हिस्से को विशेष कहते हैं। (अथवा एकता मे रहने वाली अनेकता को विशेप कहते है।)

(६७) विशेष के कितने भेद है ?

दो है—एक सहभावी विशेष दूसरा क्रमभावी विशेष।

(६८) सहभावी विशेष किसको कहते है ?

वस्तु के पूरे हिस्से तथा उसकी सर्व अवस्थाओ मे रहने वाले विशेप को सहभावी विशेष अथवा गुण कहते है।

६९. सहभावी विशेष के कितने भेद है ?

दो है—एक द्रव्य मे रहने वाले, दूसरे अनेक द्रव्यों मे रहने वाले।

७०. एक द्रव्य मे रहने वाले सहभावी विशेष कौन से है ?

एक द्रव्य के अपने अनेक गुण उसके सहभावी विशेष है।

७१. अनेक द्रव्यो मे रहने वाले सहभावी विशेष कौन से है ?

पशु-सामान्य मे गाय घोडा आदि की विशेषता अथवा अनेक गौओ में काली भूरी आदि की विशेषता।

(७२) क्रमभावी विशेष किसे कहते है ?

क्रम से होने वाले वस्तु के विशेप को क्रमभावी विशेष अथवा पर्याय कहते है।

(७३) प्रमाणाभास किसको कहते हैं ?

मिथ्याज्ञान को प्रमाणाभास कहते है।

(७४) प्रमाणाभास कितने हैं ?

तीन है—संशय, विपर्यय, अनध्यवसाय।

(७५) संशय किसको कहते हैं ?

विरुद्ध अनेककारी स्पर्श करने वाले ज्ञान को संशय कहते हैं, जैसे 'यह सीप है या चान्दी'।

(७६) विपर्यय किसे कहते हैं ?

विपरीत एक कोटी स्पर्श करने वाले ज्ञान को विपर्यय कहते है, जैसे—सीप को चान्दी जानना।

(७७) अनध्यवसाय किसे कहते हैं ?

'यह क्या है' ऐसे प्रतिभास को अनध्यवसाय कहते है, जैसे मार्ग चलते हुए को तृण (चुभने) का ज्ञान।

प्रश्नावली

१ निम्न के लक्षण करो—

प्रमाण; प्रत्यक्ष प्रमाण; परोक्ष प्रमाण; स्वार्थ प्रमाण; परार्थ प्रमाण; स्मृति; प्रत्यभिज्ञान, विलक्षण प्रत्यभिज्ञान; सादृश्य

प्रत्यभिज्ञान, तत्प्रतियोगी प्रत्यभिज्ञान, एकत्व प्रत्यभिज्ञान, तर्क; व्याप्ति; अविनाभाव, विषमव्याप्ति; समव्याप्ति; साध्य; साधन, अनुमान, हेत्वाभास, सामान्य, विशेप, सहभावी विशेष; प्रमाणाभास, अनध्यवसाय, सशय, विपर्यय, असिद्ध हेत्वाभास, विरुद्ध हेत्वाभास, अनैकान्तिक हेत्वाभास, अकिंचित्कर हेत्वाभास, सिद्धसाधन हेत्वाभास, हेतु, प्रतिज्ञा; उदाहरण, दृष्टान्त, उपनय, निगमन; केवलान्वयी हेतु, केवल-व्यतिरेकी हेतु, अन्वयव्यतिरेकी हेतु; आगम, आप्त ।

२. निम्न के भेद बताओ—

प्रमाण, प्रत्यक्ष प्रमाण, परोक्ष प्रमाण, प्रत्यभिज्ञान, व्याप्ति बाधित विषय, हेत्वाभास, अकिंचित्कर हेत्वाभास; बाधित हेत्वाभास, दृष्टान्त, हेतु, सामान्य; विशेष, प्रमाणाभास ।

३ निम्न मे अन्तर दर्शाओ—

प्रत्यक्ष व परोक्ष प्रमाण, स्वार्थ व परार्थ प्रमाण, सम व विषम व्याप्ति; असिद्ध साध्य व असिद्ध हेत्वाभास; बाधित साध्य व बाधित हेत्वाभास; उदाहरण व दृष्टान्त, अन्वय व व्यतिरेकी दृष्टान्त; केवलान्वयी व अन्वयव्यतिरेकी हेतु; सामान्य व विशेष, सहभावी व क्रमभावी विशेप, साध्य व साधन, प्रमाणाभास व हेत्वाभास, उपनय व निगमन ।

४ निम्न ज्ञान कौनसा है—

सम्मेद शिखर पर जिस व्यक्ति को देखा था वह बडा सज्जन था; क्या तुम मुझे पहचानते हो, हा हा पहचानता हूँ आप देवदत्त हैं, कल आप दौडे हुए कहा जा रहे थे, यह मोटर वही है जिसका कल ऐक्सीडैण्ट हुआ था, यह मोटर अवश्य नेहरू की है, आपका पैन वैसा ही है जैसा कि मेरा, मेरी व उसकी घड़ी में दिन रात का अन्तर है; जब हम पहले यहा आये थे तो इस धर्मशाला मे ठहरे थे; क्योकि कव्वो की आवाज सुनाई दे रही है अत. समुद्र का किनारा आ गया,

तुम मे प्रशम गुण दिखाई देता है, इसलिये अवश्य सम्यग्दृष्टि हो।

५. निम्न वाक्य स्वार्थ है या परार्थ—

घडे लिये स्त्रिया जा रही है अतः गाव आ गया; इस मुनि की चर्या दिखावटी है इसलिये यह मिथ्यादृष्टि प्रतीत होता है; क्योकि स्कन्ध टूटते व मिलते दिखाई देते है इसलिये परमाणु भी कोई वस्तु है, क्योकि सम्यग्दर्शन से आशिक शान्ति आती प्रतीत होती है इसलिये अवश्य इससे मोक्ष होनी सम्भव है; चीन की सेना भारत की सीमा पर एकत्रित हो रही है अत. युद्ध अवश्यम्भावी है।

६. निम्न मे कौनसी व्याप्ति है:—

धूम व अग्नि, सम्यग्दर्शन व सम्यग्चारित्र; वायु व वृक्षो का हिलना, मेघ व वर्षा, अग्नि का प्रकाश व अग्नि; नदी का पूर तथा ऊपरी क्षेत्र में अधिक वर्षा, रूप व रस, सम्यग्दर्शन व मनुष्य; चन्द्र व सूर्य, चन्द्र व तारे, सूर्य व धूप; बिन्ध्याचल व सह्याचल, अग्नि व ईन्धन।

७. निम्न मे साधन साध्य बताओ—

इस गुफा मे मृग नही है क्योकि इसमे से सिंह की गर्जन आ रही है, कहीं आग लगी है क्योकि फायर ब्रिगेड की गाडियो के घण्टे सुनाई दे रहे हैं; यह अवश्य सम्यग्दृष्टि है क्योकि वीत-राग है; गाव निकट है क्योकि मुर्गा बोलता है; आज अवश्य कोई उत्सव है क्योकि बच्चों मे नई उमग देखी जाती है। इस व्यक्ति को अवश्य मोक्ष होगी क्योकि महाव्रतधारी है।

८. निम्न साध्यो में क्या दोष है.—

मैं पूछना नही चाहता फिर भी कोई मुझे कह रहा है कि निश्चय धर्म ही यथार्थ है क्योंकि वही मुक्ति का साधन है, वीतरागी देव पर पूरी पूरी श्रद्धा रखने वाले को कोई कहे कि वीतराग देव ही सच्चे हैं क्योंकि वही निज स्वभाव में स्थित

हैं, अन्न खाने से मृत्यु हो जाती है क्योकि रामलाल अन्न खाने से मर गया, जल में अग्नि का निवास है इसी लिये जल का स्वभाव गर्म है, आवश्यकता पडे तो चोरी भी कर लेना चाहिये क्योकि उस समय वही धर्म है; मैं अवश्य सम्यग्दृष्टि हूँ क्योकि इतने कठिन कठिन तपश्चरण करता हूँ, हड्डी पवित्र है क्योकि प्राणी का अग है।

६. निम्न हेतुओ मे क्या दोष है:—

अग्नि ठण्डी है क्योकि देखी जाती है, मनुष्य की खोपडी पवित्र है क्योंकि प्राणी का अग है जैसे शख; पाप से सुख होता है, मेरी माता वन्ध्या है क्योकि उसको गर्भ नही रहता, मैं आज मौन से हूँ; शब्द अपरिणामी है क्योकि किया जाता है, मैत्रेयी का गर्भस्थ पुत्र श्याम है क्योकि उसके अन्य पुत्र भी श्याम है, यह व्यक्ति बडा क्रोधी है क्योकि ऐसा प्रसिद्ध है, कही अवश्य आग लगी है क्योकि फायर ब्रिगेड के घण्टो की अटूट ध्वनि आ रही है, राम आज इन्दौर गया है क्योकि अभी अभी अपनी दुकान की ओर जा रहा था, आज अवश्य कोई उत्सव है क्योकि बच्चो मे नया उत्साह देखा जाता है; इस घर मे अवश्य कोई मर गया है क्योकि एक स्त्री के रोने की आवाज आ रही है, जीवराज अवश्य कोई व्यापारी है क्योकि प्राय' बैंक मे रुपया लेता देता देखा जाता है, आप अवश्य भोजन करके आये हो क्योकि डकार आ रही है; चन्द्रमा अवश्य बहुत गर्म होगा क्योकि आज रात्रि को बहुत गर्मी है; मै अभी अभी इन्दौर से आ रहा हूँ और तुम्हारे भाई का सन्देशा लाया हूँ (जब कि भाई कल दिन स्वय आ चुका है); जीव का सुख दुख कर्म के आधीन नहीं है क्योकि कर्म दिखाई नही देता; यद्यपि रात को घर पर अकेला रहते मुझको डर लगता है, परन्तु उस रोज चोर को इतनी बहादुरी से पकडा कि सब दग रह गए; यह भगवान की मूर्ति नही है क्योकि केवल एक पत्थर का टुकडा है।

१० निम्न दृष्टान्त किस-किस नाम वाले हैं—
जो किया जाता है वह परिणामी होता है जैसे घर, जो किया नही जाता वह परिणामी भी नही होता जैसे आकाश; जहा इच्छा होती है वहा अवश्य मायाचारी होती है जैसे लोभी राम; जहा इच्छा नही होती वहा अन्य कषाय भी नही होती जैसे वीतरागदेव; मेहनती व्यक्ति खूब कमाता है जैसे वृद्धिचन्द्र; जो काम नही करता वह कुछ कमाता नही जैसे मगतराय।

११ पाच अंग लागू करके दिखाओ—
यह रोगी अभी मरा नही है, शब्द परिणामी है, अग्नि गर्म है, अन्न प्राण है; जगत किसी ईश्वर का बनाया हुआ नही है।

१२ बताओ निम्न हेतु किस-किस नाम के हैं—
वस्तु अनेकान्त स्वरूप है क्योकि सत् है, इस मनुष्य मे आत्मा है क्योकि चेष्टा देखी जाती है, जीव चेतन होता है क्योकि जानता देखता है; अग्नि दाहक है क्योकि उससे वस्तुयें जल जाती है, यह व्यक्ति अवश्य पागल है क्योकि पागलों की सी चेष्टा कर रहा है, यह घर अवश्य बसा हुआ है क्योकि इसमे रात्रि को प्रकाश देखा जाता है।

१३ निम्न के उदाहरण देकर समझाओ—
केवल अन्वयी हेतु; केवल व्यतिरेकी हेतु; अन्वय व्यतिरेकी हेतु, बाधित विषय; अकिंचित्कर हेतु; असिद्ध हेतु, विरुद्ध हेतु; अनैकान्तिक हेतु, प्रत्यभिज्ञान, स्मृति, तर्क; समव्याप्ति; विषमव्याप्ति; स्वार्थ प्रमाण; परार्थ प्रमाण, साध्य, साधन, संशय; विपर्यय, अनध्यवसाय, प्रतिज्ञा हेतु; उपनय; निगमन; तिर्यक् सामान्य; ऊर्ध्व सामान्य, एक द्रव्यगत सहभावी विशेष; अनेक द्रव्यगत सहभावी विशेष, क्रमभावी विशेष, सिद्ध साधन हेत्वाभास; अनुमान बाधित हेत्वाभास; लोक बाधित हेत्वाभास, आगमबाधित हेत्वाभास; प्रत्यक्ष बाधित हेत्वाभास।

१४. जोड रूप ज्ञान से क्या समझे ?

१५. साध्य मे कितनी शर्ते होनी चाहिये, कारण सहित खुलासा करके बताओ।

१६. अनुमान के कितने अग है उन सबको एक ही वाक्य मे पृथक-पृथक प्रयोग करके दिखाओ।

१७. अनुमान मे पाच अगो की बजाय तीन अग हो तो क्या बाधा आती है ?

१८. साध्य के लक्षण मे से दृष्ट, अबाधित व असिद्ध इन मे से कोई एक शर्त हटा लेने से क्या बाधा आती है ?

१/४ नय-अधिकार

(१) नय किसे कहते है ?

वस्तु के एक देश जानने वाले ज्ञान को नय कहते हैं ।

(२) नय के कितने भेद है ?

दो है—एक निश्चय दूसरा व्यवहार अथवा उपनय ।

(३) निश्चय नय किसे कहते है ?

वस्तु के किसी एक असली अश को ग्रहण करने वाले ज्ञान को निश्चय नय कहते है, जैसे मिट्टी के घडे को मिट्टी का घडा कहना ।

(४) व्यवहार नय किसको कहते है ?

किसी निमित्त के वश से एक पदार्थ को दूसरे पदार्थ रूप जानने वाले ज्ञान को व्यवहार नय कहते है, जैसे मिट्टी के घडे को घी के रहने से घी का घडा कहना ।

(५) निश्चय नय के कितने भेद है ?

दो है—एक द्रव्यार्थिक नय दूसरा पर्यायार्थिक नय ।

६. द्रव्यार्थिक व पर्यायार्थिक की भांति तीसरा गुणार्थिक नय क्यों नहीं कहा ?

नही । क्योकि गुण स्वय सहभावी पर्याय होने के कारण, उसका अन्तर्भाव पर्यायार्थिक नय में हो जाता है । पर्याय शब्द यहाँ 'विशेष' का वाचक है । (विशेष देखिये द्वि० अध्याय २/१ सामान्य अधिकार, ४ पर्याय का प्रश्न न० १०)

(७) द्रव्यार्थिक नय किसको कहते है ?

द्रव्य अर्थात जो सामान्य को ग्रहण करे ।

(८) पर्यायार्थिक नय किसे कहते है ?

जो विशेष को अर्थात गुण व पर्याय को विषय करे ।

(९) द्रव्यार्थिक नय के कितने भेद है ?

तीन है—नैगम, सग्रह, व्यवहार ।

(१०) नैगम नय किसको कहते हैं ?

दो पदार्थो मे से एक को गौण व दूसरे को प्रधान करके भेद अथवा अभेद को विषय करने वाला तथा पदार्थ के सकल्प को ग्रहण करने वाला ज्ञान नैगम नय है, जैसे—कोई आदमी रसोई मे चावल चुन रहा था । उस से पूछा कि तुम क्या कर रहे हो । तब उसने कहा कि भात बना रहा हूँ । यहाँ चावल और भात मे अभेद विवक्षा है । अथवा चावलो मे भात का सकल्प है ।

(११) संग्रह नय किसे कहते है ?

अपनी जाति का विरोध नही करके अनेक विपयो को एकपने से ग्रहण करे उसे सग्रह नय कहते है, जैसे जीव कहने से चारो गति के जीवो का ग्रहण हो जाता है ।

(१२) व्यवहार नय किसे कहते हैं ?

जो सग्रह नय से ग्रहण किये हुए पदार्थों को विधिपूर्वक भेद करे सो, व्यवहार नय है, जैसे जीव का भेद त्रस स्थावर आदि करना ।

(१३) पर्यायार्थिक नय के कितने भेद हैं ?

चार हैं—ऋजुसूत्र नय, शब्द नय, समभिरूढ नय व एवभूत नय

(१४) ऋजुसूत्र नय किसे कहते है ?

भूत भविष्यत की अपेक्षा न करके वर्तमान पर्याय मात्र को (पूर्ण सत् के रूप में) ग्रहण करे सो ऋजुसूत्र नय है ।

(१५) शब्द नय किसे कहते है ?

लिंग, कारक, वचन, काल, उपसर्गादिक के भेद से जो पदार्थ को भेद रूप ग्रहण करे सो शब्द नय है, जैसे—दार भार्या कलत्र

ये तीनो भिन्न-भिन्न लिग के शब्द एक ही स्त्री पदार्थ के वाचक है, सो यह नय स्त्री पदार्थ को (शब्द भेद से) तीन भेद रूप ग्रहण करता है। इसी प्रकार कारकादि के भी दृष्टान्त जानना।

(नोट —शब्दादि चार नयो का व्यापार पदार्थ के वाचक शब्द मे होता है, पदार्थ मे नही, इसी लिये ये चारो शब्द या व्यजन नए कहलाते है और पदार्थ ग्राहक होने से नैगमादि तीन अर्थ नय है।)

(१६) समभिरूढ़ नय किसे कहते है ?

लिगादि का भेद न होने पर भी पर्याय(वाची)शब्द के भेद से जो पदार्थ को भेद रूप ग्रहण करे, जैसे—इन्द्र शक्र पुरन्दर ये तीनो एक ही लिंग के पर्याय (वाची) शब्द है। देवराज के वाचक है। सो यह नय देवराज को तीन भेद रूप ग्रहण करता है।

(१७) एवंभूत नय किसे कहते है ?

जिस शब्द का जिस क्रिया रूप अर्थ है, उस क्रिया रूप परिणमे पदार्थ को ग्रहण करे, सो एवंभूत नय है, जैसे पुजारी को पूजा करते समय ही पुजारी कहना।

१८ इन सातों नयो के अन्य प्रकार विभाग करो।

दो विभाग है—अर्थ नय और दूसरा शब्द या व्यञ्जन नय।

१९. अर्थ नय किसे कहते हैं ?

जो पदार्थ के सामान्य व विशेष अशो को ग्रहण करे सो अर्थ नय है।

२०. शब्द या व्यञ्जन नय किसे कहते है ?

जो पदार्थ के वाचक शब्द मे व्यापार करे सो व्यञ्जन नय है।

२१. सातो में अर्थ नय कौन है ?

नैगम, सग्रह, व्यवहार व ऋजु सूत्र ये चारों पदार्थ के स्वरूप को ग्रहण करने के कारण अर्थ नय है।

२२ सातो में व्यञ्जन नय कौन है ?

तीन शब्द, समभिरूढ व एवंभूत इन तीन नयो का व्यापार

पदार्थ के स्वरूप मे न होकर उनके वाचक शब्दो के प्रति होता है, इसलिये तीनो शब्द नय या व्यञ्जन नय कहलाते है।

२३. सातो मे स्थूल व सूक्ष्म विषय ग्राहकता दर्शाओ।

सामान्य ग्राहक होने से नैगमादि तीन द्रव्यार्थिक नय स्थूल है और विशेष ग्राहक होने से ऋजु आदि चार पर्यायार्थिक नय सूक्ष्म। पर्यायार्थिक चारो मे भी पदार्थ ग्राहक होने से ऋजु सूत्र स्थूल है और वाचक शब्द ग्राहक होने से शब्दादि तीन सूक्ष्म। द्रव्यार्थिक मे भी भेद व अभेद दोनो को ग्रहण करने से नैगम स्थूल है, उसमे जाति भेद करने से सग्रह नय उसकी अपेक्षा सूक्ष्म और उसमे भी विधि पूर्वक भेद करने से व्यवहार नय उससे भी सूक्ष्म है। वर्तमान पर्याय मात्र ग्राही होने से ऋजुसूत्र उससे भी सूक्ष्म है। व्यञ्जन नयो मे शब्द नय ऋजुसूत्र से सूक्ष्म है क्योकि लिंगादि के भेद से उसके विषय में भी भेद कर देती है। एक-एक लिंगादि मे उत्तर भेद करने से समभिरूढ उससे सक्ष्म और क्रिया व परिणति की अपेक्षा भेद कर देने से एवभूत सबसे सूक्ष्म है।

(२४) व्यवहार नय या उपनय के कितने भेद है ?

तीन है—सद्भूत व्यवहार नय, असद्भूत व्यवहार नय तथा उपचरित व्यवहार नय (अथवा उपचरित असद्भूत व्यवहार नय)।

(२५) असद्भूत व्यवहार नय किसे कहते है ?

एक अखण्ड द्रव्य को भेद रूप विषय करने वाले ज्ञान को सद्भूत व्यवहार नय कहते है, जैसे जीव के केवलज्ञानादि व गतिज्ञानादि गुण हैं।

(२६) असद्भूत व्यवहार नय किसे कहते है ?

भिन्न पदार्थों को जो अभेदरूप ग्रहण करे, जैसे—यह शरीर मेरा है अथवा मिट्टी के घडे को घी का घडा कहना।

(२७) उपचरित असद्भूत व्यवहार नय किसे कहते है ?

अत्यन्त भिन्न पदार्थो को जो अभेद रूप ग्रहण करे, जैसे—हाथी, घोडा, महल, मकान मेरे हैं, इत्यादि।

२८. सद्भूत व असद्भूत व्यवहार नय में क्या अन्तर है ?

अभेद द्रव्य मे गुण गुणी भेद करके द्रव्य को गुण वाला आदि कहने की पद्धति सद्भूत व्यवहार नय है, और भिन्न द्रव्यों मे कारण भावो द्वारा या अहकार ममकार द्वारा स्वामित्व सम्बन्ध स्थापित करना अथवा उनमे कर्ता भोक्ता भाव उत्पन्न करना असद्भूत व्यवहार है। इस प्रकार अभेद मे भेद करना सद्भूत और भेद मे अभेद करना असद्भूत है।

२९. असद्भूत व उपचरित असद्भूत में क्या अन्तर है ?

एक क्षेत्रावगाही भिन्न पदार्थो मे अभेद करना असद्भूत या अनुपचरित असद्भूत है, जैसे शरीर व जीव मे। तथा भिन्न क्षेत्रावगाही भिन्न पदार्थो मे अभेद करना उपचरित असद्भूत है, जैसे जीव व मकान मे।

३०. सद्भूत व असद्भूत विशेषण का सार्थक्य क्या ?

गुण पर्याय वास्तव मे द्रव्य के अपने अश है इसलिये उनका सम्बन्ध सद्भूत है; पर भिन्न पदार्थ एक दूसरे के स्वभाव या अश नही है इसलिये उनका सम्बन्ध असद्भूत है। व्यवहारपना दोनो मे समान है क्योकि अभेद मे भेद करना भी व्यवहार है और भेद मे अभेद करना भी। कारण कि दोनों ही उपचार है वास्तविक नही।

३१ वास्तविक न होते हुये भी व्यवहार का प्रयोग क्यों ?

बिना विश्लेषण किये अभेद द्रव्य का परिचय देना असम्भव है तथा भिन्न द्रव्यों का वर्तन करने से ही लोक का सारा व्यवहार चलता है अत गुरु शिष्य व्यवहार में तथा लौकिक व्यवहार मे सर्वत्र इसी नय का आश्रय स्वाभाविक है। स्वभाव में स्थित ज्ञाता दृष्टा व्यक्ति को न बोलने की आवश्यकता और न लौकिक प्रयोजन की, इसलिये उसमे उसका आश्रय नही पाया जाता।

३२. निश्चय नय का लक्षण व कथन पद्धति बताओ।

गुण गुणी में अभेद करके वस्तु जैसी है वैसी ही कहना निश्चय

नय की पद्धति है, जैसे—जीव ज्ञानस्वरूप या ज्ञानमयी है अथवा ज्ञान ही जीव है।

३३. निश्चय नय व सद्भूत व्यवहार में क्या अन्तर है ?
गुण गुणी मे अभेद करके कहना निश्चय नय है और भेद करके कहना सद्भूत व्यवहार नय है जैसे—जीव को ज्ञान स्वरूप या ज्ञानमय कहना निश्चय नय है और ज्ञानवान या ज्ञान वाला कहना सद्भूत व्यवहार।

३४. अध्यात्म दृष्टि से निश्चय नय के कितने भेद हैं ?
वास्तव में निश्चय नय का कोई भेद नही, पर द्रव्य के स्वभाव का परिचय देने के लिये उपचार से उसके दो भेद कर दिये जाते हैं—शुद्ध निश्चय व अशुद्ध निश्चय।

३५ शुद्ध निश्चय नय किसे कहते है ?
शुद्ध द्रव्य के स्वभाव को बताने वाला शुद्ध निश्चय है, जैसे सिद्ध भगवान केवलज्ञान स्वरूप है, अथवा जीवज्ञान स्वरूप है।

३६. अशुद्ध निश्चय नय किसे कहते हैं ?
अशुद्ध द्रव्य के स्वभाव को बताने वाला अशुद्ध निश्चय है, जैसे ससारी जीव मतिश्रुत ज्ञान स्वरूप है अथवा रागमयी है।

३७. निश्चय नय के ये भेद उपचार कैसे है ?
वास्तव में द्रव्य तो न शुद्ध है न अशुद्ध। शुद्ध अशुद्ध तो उसकी पर्याय है। पर्याय को द्रव्य रूप से ग्रहण करके कहना उपचार है।

३८. क्या नय के इतने ही भेद है या और भी ?
और भी अनेक भेद प्रभेद है, जैसे द्रव्यार्थिक के १० भेद और पर्यायार्थिक के ६ भेद शास्त्रो मे प्रसिद्ध हैं। पर उन सबका कथन यहाँ करने से विषय की जटिलता बढती है। अत. यदि नय का विस्तृत व विशद ज्ञान प्राप्त करना है तो क्षु० जिनेन्द्र वर्णी कृत 'नय दर्पण' नामक ग्रन्थ देखिये। आगे इसी विषय का पृथक अध्याय भी दिया है।

प्रश्नावली

१ लक्षण करो –

नय, निश्चय नय, व्यवहार नय, द्रव्यार्थिक नय, पर्यायार्थिक नय, नैगम नय, संग्रह नय, व्यवहार नय, ऋजुसूत्र नय, शब्द नय, समभिरूढ नय, एवंभूत नय; सद्भूत व्यवहार नय, असद्भूत व्यवहार नय; उपचरित असद्भूत व्यवहार नय, शुद्ध निश्चय नय; अशुद्ध निश्चय नय ।

२. अर्थ नय व व्यञ्जन नय के लक्षण व भेद दर्शाओ।

३. नैगमादि को अर्थ नय तथा शब्दादि को व्यञ्जन नय कहने मे हेतु?

४. नैगमादि सात नयो के विषयों मे स्थूलता व सूक्ष्मता दर्शाओ।

५. निश्चय नय व व्यवहार नय तथा उनकी कथन पद्धति मे क्या अन्तर है ?

६. सद्भूत व्यवहार व असद्भूत व्यवहार मे क्या अन्तर है ?

७ सद्भूत व असद्भूत मे विशेषणो का सार्थक्य दर्शाओ।

८ निश्चय नय व सद्भूत व्यवहार मे क्या अन्तर है ?

९. निश्चय नय के भेद करना उपचार क्यो ?

१० उपचार होते हुए भी व्यवहार नय व उसके भेदों को कहने की क्या आवश्यकता है ?

११. नय से अतीत व्यक्ति कैसा होता है ?

१२ क्या नयो को जान लेने मात्र से अथवा व्यवहार की असत्यार्थता को जान लेने मात्र से उसका आश्रय छूट जाता है ?

१३ व्यवहार नय का आश्रय कैसे छूटे ?

द्वितीय अध्याय

(द्रव्य गुण पर्याय)

२/१ सामान्य अधिकार

परिचय –(सामान्य अधिकार को ६ भागों मे विभाजित किया गया है –विश्व, द्रव्य, गुण, पर्याय, धर्म व द्रव्य का विश्लेषण। इन का क्रम से कथन किया जायेगा)

(१. विश्व)

१. विश्व किसको कहते है ?
जो कुछ दिखाई देता है वह विश्व है, अथवा द्रव्यो के समह को विश्व कहते है।

२. दिखाई क्या देता है ?
सत्।

३. सत् किसको कहते है ?
जो है उसे सत् कहते है।

४. समूह से क्या तात्पर्य ?
अनेक पृथक-पृथक द्रव्यो का सग्रह समूह है, जैसे सेना।

(२. द्रव्य)

(५) **द्रव्य किसको कहते है ?**

गुणो के समूह को द्रव्य कहते है ।

६. **समूह किसको कहते है ?**

किसी न किसी सम्बन्ध से एकता को प्राप्त अनेक पदार्थों को समूह कहते है, जैसे—सेना ।

७. **सम्बन्ध कितने प्रकार का होता है ?**

चार प्रकार का—सयोग, सश्लेष, अयुत सिद्ध और तादात्म्य ।

८ **सयोग सम्बन्ध किसे कहते है ?**

जो सम्वन्ध किया गया हो, और सम्बन्ध को प्राप्त होकर भी द्रव्य पृथक-पृथक ही रहे उसे सयोग सम्बन्ध कहते है, जैसे अनाज की बोरी या सेना ।

९. **सश्लेष सम्बन्ध किसे कहते है ?**

जो सम्बन्ध किया गया हो परन्तु सम्बन्ध को प्राप्त होकर द्रव्य पृथक-पृथक न रहे उसे सश्लेष सम्बन्ध कहते है, जैसे दूध व पानी का सम्वन्ध ।

१०. **अयुत सिद्ध सम्बन्ध किसे कहते है ?**

जो सम्बन्ध किया न जाये पर उसमे द्रव्य पृथक-पृथक रहें, जैसे वृक्ष में डाली फूल फल आदि ।

११. **तादात्म्य सम्बन्ध किसे कहते हैं ?**

जो सम्वन्ध किया न जाये और उसमें पदार्थ भी पृथक-पृथक न रहे उसे तादात्म्य सम्वन्ध कहते हैं, जैसे अग्नि मे उष्णता प्रकाश आदि ।

१२. **संग्रह कितने प्रकार का होता है ?**

पांच प्रकार का होता है :—

(क) जो किया जाय और तोड़ा भी जाय, जिसमें पदार्थ पृथक-पृथक रहे और समूह से पृथक एक दूसरा स्वतंत्र पदार्थ भी है जिसमें कि वह समूह रहता हो, जैसे अनाज की बोरी (सयोग सम्बन्ध)

(ख) जो किया जाय और तोडा भी जा सके, जिसमे पदार्थ पृथक-२ भी रहते हो, पर समूह से पृथक दूसरा कोई स्वतत्न पदार्थ न हो जिसमे कि वह समूह रहे, जैसा सेना या लकड़ी का गट्ठा (सयोग)

(ग) जो किया जाय और तोड़ा भी जाय, परन्तु न तो उसमे पदार्थ पृथक-२ रह सके और समूह से पृथक दूसरा कोई स्वतन्न पदार्थ हो, जिसमे कि वह समूह रहे, जैसे--पावक (संश्लेष)

(घ) जो किया तो न जाये पर तोड़ा जा सके, जिसमे पदार्थ पृथक रहें पर समूह से पृथक अन्य कोई स्वतत्न पदार्थ न हो, जिसमे कि वह समूह रहे, जैसे—वृक्ष (अयुतसिद्ध)

(ङ) जो न किया गया हो और न तोडा जा सके, न ही उसमे पदार्थ पृथक-पृथक रहते है । और न ही समूह से पृथक कोई स्वतन्त्र पदार्थ हो जिसमे कि वह समूह रहे, जैसे अग्नि (तादात्म्य)

१३. द्रव्य के लक्षण मे कौन समूह इष्ट है ?

पाँचवा अर्थात अग्नि वाला, क्योकि गुणो-का समूह न किया जाता है, न तोडा जा सकता है, न गुण पृथक-२ रहते है, न ही उनके समूह से पृथक कोई अन्य स्वतत्न द्रव्य नाम की चीज है जिसमे कि गुणो का समूह रहे ।

१४. दूसरे प्रकार से द्रव्य का लक्षण करो ।

गुण पर्याय के समूह को द्रव्य कहते है ।

१५ गुण किसे कहते हैं ?

जो द्रव्य मे सर्वदा रहे उसे गुण कहते है, जैसे स्वर्ण मे पीला-पन । (विशेष परिचय आगे पृथक विभाग मे दिया जायेगा)

१६ पर्याय किसे कहते है ?

जो द्रव्य मे सर्वदा न रहे वल्कि क्षण भर के लिये या सीमित काल के लिये रहे, अथवा द्रव्य की परिवर्तनशील अवस्थाओ को पर्याय कहते है, जैसे स्वर्ण मे कडा कुण्डल आदि । (विशेष देखे आगे पृथक विभाग)

१७. द्रव्य का तीसरे प्रकार से लक्षण करो।

मत् ही द्रव्य का लक्षण है।

१८ सत् किसको कहते हैं ?

जिसमें तीन बात युगपत पाई जाये—उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य।

(१९) उत्पाद किसे कहते हैं ?

द्रव्यो मे नवीन पर्याय की प्राप्ति को उत्पाद कहते है, जैसे सोने में कुण्डल रूप पर्याय की प्राप्ति।

२०. व्यय किसे कहते हैं ?

द्रव्य की पूर्व पर्याय के त्याग को व्यय कहते है, जैसे सोने में कड़े रूप पर्याय का विनाश।

(२१) ध्रौव्य किसे कहते है ?

प्रत्यभिज्ञान की कारणभूत द्रव्य की किसी अवस्था की नित्यता को ध्रौव्य कहते हैं। जैसे—कड़े व कुण्डल में स्वर्ण की नित्यता।

२२. उत्पाद व्यय ध्रौव्य में तीनों एक ही समय होते हैं या पृथक पृथक ?

(क) यदि पूर्व व उत्तरवर्ती दो पर्यायो को लेकर देखे तो तीनो एक साथ रहते है, क्योंकि घड़े का व्यय, कपाल का उत्पाद और मिट्टीपने की ध्रुवता तीनो का एक ही काल है आगे पीछे नही। कारण कि घड़े का व्यय ही वास्तव मे कपाल का उत्पाद है।

(ख) यदि एक ही किसी विवक्षित पर्याय को लेकर देखे तो उत्पाद व व्यय का काल भिन्न है, जैसे—घड़े का उत्पाद और उसी घड़े का विनाश दोनो एक काल में नहीं हो सकते। मिट्टी की ध्रुवता तो दोनों अवस्थाओं में साथ है।

२३. एक ही द्रव्य में उत्पाद व्यय व ध्रौव्य ये तीन विरोधी बाते एक साथ कैसे रह सकती हैं ?

[illegible] कोई दोष नहीं है, क्योंकि ये तीनों एक ही काल में नहीं [illegible] है। उत्पाद किसी अन्य बात का होता है, व्यय

किसी अन्य का और ध्रौव्य किसी अन्य का। उत्पाद नवीन पर्याय का होता है, व्यय पूर्व पर्याय का और ध्रौव्य गुण व द्रव्य की।

२४. क्या पूर्व व उत्तर पर्यायें और गुण व द्रव्य पृथक-पृथक तीन बातें हैं ?

नही, एक ही द्रव्य मे दीखने वाले तीन तथ्य हैं, जैसे एक ही द्रव्य मे रहने वाले अनेक गुण।

२५ द्रव्य गुण पर्याय मे कौन सत् है और कौन असत् ?

तीनो ही सत् है। वहाँ द्रव्य व गुण त्रिकाली सत् है और पर्याय क्षणिक सत्। त्रिकाली न होने के कारण भले इसे असत् कहो।

२६. पर्याय में सत् का लक्षण घटित करो।

पर्याय का प्रथम समय मे उत्पाद होता है, उत्तर समय मे व्यय होता है और एक समय के लिये वह ध्रुव रहती है, अत सत् है।

२७. द्रव्य मे अंश अंशी भेद दर्शाओ—

(क) द्रव्य अशी है और गुण पर्याय उसके अश, क्योकि जिस मे अश रहे वही अशी।

(ख) उपरोक्त प्रकार ही द्रव्य अगी है और गुण पर्याय उसके अग।

(ग) द्रव्य अवयवी हैं और गुण पर्याय उसके अवयव।

(घ) द्रव्य गुणी है और गुण उसके गुण।

(ङ) द्रव्य पर्यायी है और पर्याय उसकी पर्याय।

इस प्रकार द्रव्य गुण पर्याय मे यथा योग्य अश-अशी, अग-अगी, अवयव-अवयवी, गुण-गुणी, पर्याय-पर्यायी, आदि युगल भाव घटाये जाने चाहिये।

२८ द्रव्य गुण पर्याय मे कौन सामान्य है और कौन विशेष ?

द्रव्य सामान्य है और गुण-पर्याय उसके विशेष। इसी प्रकार गुण सामान्य है और गुण-पर्याय उसके विशेष। द्रव्य सामान्य ही है विशेष नही, क्योकि उसमे ही गुण पर्याय रहती है, वह किसी मे नही रहता। गुण सामान्य व विशेष दोनो है, द्रव्य की अपेक्षा विशेष और पर्याय की अपेक्षा सामान्य। पर्याय विशेष ही है, क्योकि पर्याय मे अन्य गुण या पर्याय नही रहते।

२९. द्रव्य के तीनो लक्षणों का समन्वय करो—

द्रव्य मे गुण सामान्य अश है और पर्याय उसके ही विशेष है, जेसे रस सामान्य है और खट्टा, मीठा उसके विशेष। इसलिये पहिला व दूसरा लक्षण एक है। गुणो का समूह कहो या गुण पर्यायों का एक ही बात है, क्योकि विशेष को छोड़कर सामान्य या पर्याय को छोडकर गुण नही रहता।–गुण ध्रुव है और पर्याय उत्पाद व्ययवाली। इसलिये गुण व पर्याय दो का समूह कहने से वह स्वत उत्पाद व्यय व ध्रौव्य तीनो से युक्त हो जाता है और वही सत् का लक्षण है। अत दूसरा व तीसरा लक्षण एक है। गुण पर्यय वाला कहो या सत् एक ही बात है।

३० द्रव्य को सत्, द्रव्य, वस्तु, पदार्थ व अर्थ आदि नाम कैसे दे सकते है ?

द्रव्य का अस्तित्व है इसलिये वह 'सत्' है। वह सत् उत्पाद व्यय युक्त होने से 'द्रव्य' है क्योकि नित्य परिणमन ही द्रव्यत्व का लक्षण है। इसी उत्पाद व्यय के कारण अर्थ क्रिया होती रहने से अथवा कोई न कोई प्रयोजनभूत कार्य होता रहने से वह 'वस्तु' है, क्योकि अर्थ क्रिया ही वस्तुत्व का लक्षण है। गुणों व पर्यायो को प्राप्त होने से वह 'अर्थ' है क्योकि अर्थ का लक्षण प्राप्त होना है। अर्थ पद युक्त होने से पदार्थ है।

३१. अर्थ किसे कहते हैं ?

अर्थ शब्द 'ऋ' धातु से बना है, जिसका अर्थ प्राप्त करना या प्राप्त होना है। जो अपने गुण पर्यायो को प्राप्त होता है, होता था व होता रहेगा, अथवा जिसे गुण पर्याय प्राप्त करते है, करते थे व करेगे, वह अर्थ है। अथवा द्रव्य गुण पर्याय तीनों को युगपत कहने वाला एक शब्द 'अर्थ' है।

३२. पदार्थ किसको कहते है ?

अर्थ या पदार्थ एकार्थवाची है।

३३. सत्ता कितने प्रकार की है ?

दो प्रकार की है—एक महासत्ता दूसरी अवान्तर सत्ता।

३४ महासत्ता किसे कहते है ?

(सर्व द्रव्य सन्माव है। इस प्रकार विश्व मे एक सत् ही दिखाई देता है। ऐसी विश्व-व्यापिनी एक अखण्ड सत्ता को महासत्ता कहते हैं) समस्त पदार्थों के अस्तित्व गुण के ग्रहण करने वाली सत्ता को महासत्ता कहते है।

३५. अवान्तर सत्ता किसे कहते है ?

किसी एक विवक्षित पदार्थ की सत्ता को अवान्तर सत्ता कहते हैं।

३६ द्रव्य के स्वचतुष्टय दर्शाओ।

द्रव्य मे चार बाते पाई जाती है—द्रव्य, क्षेत्र, काल व भाव। इन्हे ही द्रव्य का स्वचतुष्टय कहते है।

३७ स्वचतुष्टय के पृथक-पृथक लक्षण करो।

गुणो का अधिष्ठान वह द्रव्य ही स्वय 'द्रव्य' है, क्योकि गुण द्रव्य के आश्रय रहते है। द्रव्य की लम्बाई चौडाई मोटाई आदि अथवा उसके आकार की रचना करने वाले उसके अपने प्रदेश ही उसका 'स्वक्षेत्र' है। द्रव्य की परिवर्तनशील पर्याय काल सापेक्ष होने से उसका 'स्व काल' है। तथा द्रव्य के गुण का अथवा उसकी वर्तमान पर्याय को उसका 'स्व-भाव' कहते है।

३८. क्या द्रव्यादि चतुष्ट पर भी होते है, जो कि यहाँ 'स्व' विशेषण लगाने की आवश्यकता पडी ?

हॉ, विवक्षित द्रव्य के अतिरिक्त जितने भी जीव अजीव अन्य द्रव्य है वे ही 'पर द्रव्य' है। अपने प्रदेशो से या तद्रचित आकृति से अतिरिक्त नगर ग्राम घर बर्तन सन्दूक आदि जितने भी क्षेत्र वाचक पदार्थ है वे सब 'पर-क्षेत्र' है। अपनी पर्याय के अतिरिक्त दिन रात घण्टा घडी पल आदि सब 'पर-काल' है। एक द्रव्य के गुण व वर्तमान पर्याय दूसरे द्रव्य के लिये 'परभाव' है, जैसे कि दूध मे तरलता, क्योकि वास्तव मे दूध की नही बल्कि उसके साथ रहने वाली पानी की है, जो अग्नि पर रखने से उससे निकल जाती है।

३६. **स्वचतुष्टय को दो भागों में करके दिखाओ।**

गुणों का अधिष्ठान होने से द्रव्य क्षेत्रात्मक है, इसलिये 'स्व-क्षेत्र' को द्रव्य में गर्भित कर दीजिये। गुण या भाव परिणामी होने से 'स्व-काल' को उसमे गर्भित कर दीजिये। इस प्रकार 'द्रव्य' व 'भाव' दो ही प्रधान विभाग है।

४०. **गर्भित ही करना है तो भाव व काल को भी द्रव्य मे ही गर्भित करके एक ही विभाग रहने दो।**

नही, क्योकि क्षेत्र व भाव मे अन्तर है। क्षेत्र तो प्रदेशों की रचना का नाम है और भाव रस स्वरूप होते है। जीव व अजीव दोनो ही द्रव्यो का क्षेत्र तो प्रदेशात्मक मात्र होने से एक प्रकार से जड़ ही है और भाव जीव द्रव्य मे चेतन होते है तथा अजीव द्रव्य मे चेतन के उपभोग्य। क्षेत्र द्रव्य का बाहरी रूप है और भाव उसका भीतरी रूप। क्षेत्र या प्रदेशों में हलन चलन होता है और भावो में बिना हिले जुले ही परिणमन होता है। द्रव्य की क्षेत्र परिवर्तन में कोई हानि वृद्धि नही होती पर भाव परिवर्तन मे हानि वृद्धि होती है। (विशेष आगे बताया जायेगा)

४१. **द्रव्य कितने प्रकार का होता है ?**

छ प्रकार का—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश व काल। (नोट—इनका पृथक २ विस्तार से विवेचन आगे किया जायेगा)

(३. गुण)

४२. **गुण किसे कहते हैं ?**

जो द्रव्य के सम्पूर्ण हिस्सो में व सर्व हालतो में रहे उसे गुण कहते हैं।

४३. **गुण की व्याख्या में स्वचतुष्टय दर्शाओ।**

व्याख्या के चार भाग हैं— १. द्रव्य के, २. सम्पूर्ण हिस्सो मे, ३. व सर्व हालतों मे रहे, ४. उसे गुण कहते हैं। वहा नं० १ से 'द्रव्य', नं० २ से 'क्षेत्र' नं० ३ से 'काल' और नं० ४ से 'भाव' कहा गया है।

४४. गुण की व्याख्या में से 'सर्व अवस्थाओ मे' इतना भाग काट दें तो क्या दोष प्राप्त हो ?

लक्षण अव्याप्त हो जायेगा, क्योकि द्रव्य की जिस अवस्था मे गुण रहेगा उस अवस्था में तो वह द्रव्य कहलावेगा, पर अन्य अवस्था मे उसका अभाव ही हो जायेगा, क्योकि तब वहा गुणो का समूह प्राप्त न होने से द्रव्य का लक्षण घटित न हो सकेगा।

४५ 'जो तादात्म्य रूप से द्रव्य में रहे उसे गुण कहते हं' ऐसा कहे तो ?

लक्षण मे अव्याप्त व अतिव्याप्त दोनो दोष प्राप्त होते हैं —

(क) तादात्म्य कहने से क्षेत्र तो आ जाता है पर काल नही आता। इसलिये लक्षण अव्याप्त रहता है।

(ख) यह लक्षण गुण व पर्याय दोनो मे चरितार्थ होता है, क्योकि पर्याय भी द्रव्य के साथ तादात्म्य रहती है। इसलिये लक्षण अतिव्याप्त हो जाता है।

४६. गुण की व्याख्या से से 'सर्व भागो मे' इतना भाग काट दे तो क्या हानि ?

लक्षण अव्याप्त हो जायेगा, क्योकि द्रव्य के एक कोने मे गुण रहेगा और दूसरे मे नही। उस खाली वाले कोने या भाग मे गुणो का समूह प्राप्त न होने से द्रव्य का लक्षण घटित न होगा।

४७ 'सर्व भागो मे' इतने पद द्वारा क्या घोषित होता है ?

द्रव्य का 'स्व-क्षेत्र' बताया जाता है।

४८ 'सर्व अवस्थाओं मे' इतने पद द्वारा क्या घोषित होता है ?

द्रव्य का 'स्व-काल' बताया जाता है।

४९ गुण की व्याख्या मे भाववाची शब्द कौनसा है ?

तहा कहा गया 'गुण' शब्द ही 'भाव' को प्रगट करता है ?

५० उत्पन्न ध्वंसी भाव गुण है या पर्याय कारण सहित बतायें।

गुण नही पर्याय है, क्योकि वे सर्व अवस्थाओ मे नही रहते।

५१. आम एक तरफ खट्टा होता है और दूसरी तरफ मीठा। सो उसका मिठास गुण उसके सर्व भागों में क्यों नहीं रहता ?

मीठापन उसका गुण नही पर्याय है। इस नाम का गुण है जो सर्व भागो में रहता है। दूसरी बात यह भी है कि आम कोई एक अखण्ड मौलिक द्रव्य नही है बलिक अनेक परमाणुओ का पिण्ड है। प्रत्येक परमाणु स्वय मौलिक द्रव्य है। उन्हे पृथक पृथक देखे तो प्रत्येक मे एक एक ही रस है दो नही।

(४. पर्याय)

५२ पर्याय किसको कहते हैं ?

गुण के विकार को (अर्थात विशेष कार्य को) पर्याय कहते है।

५३. विकार या विशेष कार्य किसे कहते हैं ?

उत्पाद व्यय होना ही विकार या विशेष कार्य है।

५४. कार्य किसको कहते है ?

जो नया उत्पाद हो वही 'कार्य' हुआ कहा जाता है।

५५. पर्याय कहां रहती है ?

जहा जहा गुण रहता है वहा वहा ही उसकी पर्याय भी रहती है, क्यों कि कार्य कारण से पृथक होकर नही रहता। अत. गुण की भाति द्रव्य के सर्व भागों में ही पर्याय भी रहती है।

५७ पर्याय कितने काल तक रहती है ?

सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर प्रत्येक पर्याय एक समय से अधिक नही रहती, परन्तु स्थूल दृष्टि से देखने पर कुछ वर्ष पर्यन्त रहती है।

५७ पर्याय का भाव कैसा होता है ?

जो भाव गुण का होता है वही उसकी पर्याय का होता है, क्योकि कारण सदृश्य ही कार्य होना न्याय सगत है।

५८. गुण की व्याख्या में पर्याय का लक्षण घटित करो।

"जो द्रव्य के सर्व भागो मे परन्तु केवल एक अवस्था में रहे उसे पर्याय कहते है'।

५९. गुण व पर्याय में क्या क्या बात समान है ?

द्रव्य, क्षेत्र व भाव समान है परन्तु काल मे अन्तर है।

६० यदि गुण के क्षेत्र से पर्याय का क्षेत्र छोटा हो तो क्या दोष ?
पर्याय से बाहर स्थित गुण का भाग बिना परिवर्तन वाला रह जायेगा इसमें असम्भव दोष आता है, क्योंकि एक तो अखण्ड वस्तु में ऐसा द्वैत सम्भव नही और दूसरे गुण का स्वभाव ही परिणामी है।

६१. द्रव्य मे गुण अधिक हैं या पर्याय ?
गुण व पर्याय दोनो समान है, क्योकि गुण हर समय अपनी किसी न किसी पर्याय के साथ ही रहता है।

६२ पर्याय का दूसरी प्रकार लक्षण करो ?
द्रव्य के विशेष को पर्याय कहते है।

६३. द्रव्य के विशेष से क्या तात्पर्य ?
अंग, अंश, विशेष, अवयव, पर्याय ये सब एकार्थ वाची हैं।

६४. पर्याय या विशेष कितने प्रकार के होते हैं ?
दो प्रकार के—सहभावी पर्याय व क्रम-भावी पर्याय।
(इनके लक्षण पहिले किये जा चुके हैं। देखो १/३ परोक्ष प्रमाणाधिकार मे प्रश्न न० ६८ व ७२)
अथवा तिर्यक् व ऊर्ध्व विशेष

६५ तिर्यक् व ऊर्ध्व विशेष किसको कहते है ?
एक ही काल मे भिन्न भिन्न क्षेत्र मे स्थित अनेक पदार्थ तिर्यक् विशेष है, जैसे गाय, घोडा, आदि पशु के तिर्यक् विशेष है। एक द्रव्य की आगे पीछे होने वाली भिन्न काल स्थित पर्यायें उसके ऊर्ध्व विशेष है; जैसे बालक युवा वृद्ध एक ही व्यक्ति के ऊर्ध्व विशेष है।

६६ पर्याय के दोनो लक्षणो का समन्वय करो ?
द्रव्य के विशेष को पर्याय कहते है। गुण द्रव्य के सहभावी विशेष है। गुण के भी विशेष कार्य को पर्याय कहते है, सो द्रव्य के क्रमभावी विशेष हैं। अत दोनो लक्षण एक है, क्योकि द्रव्य का विशेष कहो या कहो गुण का विकार एक ही बात है।

६७ क्रमभावी पर्याय कितने प्रकार की होती है ?
दो प्रकार की—परिणमन रूप व परिस्पन्दन रूप।

६८ परिणमन रूप पर्याय किसे कहते है ?

गुणो मे होने वाले क्षणिक परिवर्तन को परिणमन कहते हैं, जैसे—रूप गुण मे लाल पीला आदि ।

६९ परिस्पन्द रूप पर्याय किसे कहते है ?

द्रव्य के प्रदेशों का अपने स्थान से च्युत होकर कम्पन करना या हिलना डुलना परिस्पन्दन है ।

७०. परिणमन व परिस्पन्दन में क्या अन्तर है ?

परिणमन गुण मे होता है और परिस्पन्दन द्रव्य के प्रदेशो में । परिणमन में हिलन डुलन क्रिया नही होती केवल गुण की शक्ति मे हानि वृद्धि होती है; परिस्पन्दन मे हिलन डुलन होती है हानि वृद्धि नही । परिणमन से गुणो मे परिवर्तन होता है और परिस्पन्दन से द्रव्य के आकार मे । (विशेष देखो आगे अधिकार नं० ४)

(५. धर्म)

७१ द्रव्य में कितने प्रकार की विशेषताये पाई जाती है ?

छ प्रकार की— गुण, स्वभाव, शक्ति, पर्याय, व्यक्ति व धर्म ।

७२ गुण किसको कहते है ?

द्रव्य के विशेष मे नित्य विकार या परिवर्तन होता रहे, अर्थात जिसमे सदा कोई न कोई पर्याय उत्पन्न व नष्ट होती रहे उसे गुण कहते है, जैसे जीव मे ज्ञान ।

७३ स्वभाव किसे कहते है ?

(क) जिस विशेष मे कोई पर्याय प्रगट न होती है, अर्थात जो सदा वैसा का वैसा जानने मे आता है उसे स्व-भाव कहते है ; जैसे जीव मे जीवत्व या चेतनत्व ।

(ख) 'त्व' प्रत्यय लगाने से प्रत्येक गुण उसका स्व-भाव बन जाता है । गुण की प्रत्येक पर्याय मे गुणत्व वह का वह रहताहै , जैसे खट्टे मे भी वही रसत्व और मीठे मे भी वही रसत्व ।

७४ शक्ति किसको कहते है ?

द्रव्य के वे विशेष शक्ति कहलाते हैं जिनकी अपनी कोई स्वतंत्र व्यक्ति या पर्याय नही होती, बल्कि अन्य गुणो की सामर्थ्य

के ही विशेष प्रकार से द्योतक हों , जैसे ईंधन में दहन शक्ति अथवा वह विशेष जो निमित्तादि मिलने पर कदाचित व्यक्त हो तो हो अन्यथा यू ही पडी रहे।

७५. पर्याय किसको कहते हैं ?

द्रव्य के उत्पन्न ध्वसी अश को पर्याय कहते है।

७६ व्यक्ति किसको कहते है ?

जो निरन्तर उत्पन्न होती रहे उसे पर्याय कहते हैं और जो कदाचित उत्पन्न हो उसे व्यक्ति , जैसे ईन्धन मे दहन।

७७ धर्म किसको कहते हैं ?

द्रव्य का जो विशेष न गुण हो, न स्वभाव, न शक्ति, न पर्याय और न व्यक्ति, परन्तु जो द्रव्य मे अपेक्षावश देखे जा सकें, धर्म कहलाते है, जैसे—द्रव्य का नित्यत्व अनित्यत्व आदि। गुण की अपेक्षा देखने पर द्रव्य नित्य है और पर्याय की अपेक्षा देखने पर अनित्य ।

७८ 'धर्म' शब्द की विशेषता दर्शाओ।

'धर्म' शब्द का प्रयोगक्षेत्र अत्यन्त व्यापक है, क्यो कि यह अपने उपरोक्त अर्थ के अतिरिक्त गुण, स्वभाव, पर्याय, शक्ति व व्यक्ति सबका प्रतिनिधित्व करता है। इसी लिये द्रव्य अनन्त धर्मात्मक कहा जाता है, अनत गुणात्मक नही। गुण को धर्म कह सकते है पर धर्म को गुण नही। कही-कही स्वभाव, धर्म व शक्ति समान अर्थ मे प्रयोग कर दिये जाते है।

७६ गुण, स्वभाव, शक्ति, पर्याय, व्यक्ति व धर्म में परस्पर अन्तर दर्शाओ।

गुण मे पर्याय होती है और शक्ति मे व्यक्ति । इसलिये गुण सदा ही अपनी पर्याय द्वारा व्यक्त रहता है, जैसे जीव मे कोई न कोई ज्ञान अवश्य व्यक्त रहता है। शक्ति की व्यक्ति कभी होती है कभी नही, जैसे जीव कभी चलता है कभी नही। गुण मे पर्याय होती है, पर स्वभाव व धर्म मे नही । वे अपेक्षावश द्रव्य मे देखे मात्र जाते है, जैसे ज्ञानत्व व नित्यत्व की कोई अपनी स्वतन्त्र पर्याय नही है। यद्यपि धर्म स्वभाव व शक्ति

कदाचित एकार्थ माने जाते है परन्तु विशेष देखने पर स्वभाव गुण की, पर्यायो द्वारा परिचय मे आता है जैसे ज्ञान का ज्ञानत्व, और धर्म केवल अपेक्षाकृत है जैसे द्रव्य मे नित्यत्व । पर्याय सदा रहती है जैसे रस मे खट्टी या मीठी कुछ न कुछ पर्याय अवश्य रहती है, परन्तु व्यक्ति कदाचित होती है और कदाचित नही, जैसे जीव मे गमन क्रिया की व्यक्ति कदाचित होती है कदाचित नही ।

८० पर्याय किसकी होती है और व्यक्ति किसकी ?

पर्याय गुण की होती है और व्यक्ति शक्ति की ।

८१ द्रव्य में गुण कितने प्रकार के होते हैं ?

मुख्यता से दो प्रकार के—सामान्य गुण व विशेष गुण (इनका विस्तार आगे किया जायेगा । दे. अधिकार न० ३)

८२ द्रव्य में स्वभाव कितने हैं ?

चार हैं—चेतनत्व, अचेतनत्व, मूर्तत्व ,अमूर्तत्व । इनके अतिरिक्त जड़ व चेतन पदार्थों के सर्व विशेष गुण उन उनके स्वभाव कहे जा सकते है, जैसे रसत्व, ज्ञानत्व आदि ।

८३ द्रव्य मे धर्म कितने है ?

आठ है—अस्तित्व, नास्तित्व, नित्यत्व, अनित्यत्व, एकत्व, अनेकत्व, भेदत्व, अभेदत्व ।

८४ आठो धर्मो के लक्षण करो।

(क) अपने द्रव्यादि स्व-चतुष्टय की अपेक्षा द्रव्य का सद्भाव उसका 'अस्तित्व' धर्म है और पर-चतुष्टय की अपेक्षा उसका अभाव 'नास्तित्व' धर्म ।

(ख) द्रव्य व गुण की अपेक्षा द्रव्य मे 'नित्यत्व' है और पर्याय की अपेक्षा 'अनित्यत्व' क्योकि द्रव्य व गुण त्रिकाल स्थायी है और पर्याय क्षणध्वसी ।

(ग) अपनी सम्पूर्ण पर्यायो मे अनुस्यूत रहने की अपेक्षा 'एकत्व' है और विभिन्न पर्यायो मे अन्य-अन्य दिखने की अपेक्षा 'अनेकत्व' ।

(घ) अनेक गुणो के भावो की अपेक्षा द्रव्य मे 'भेदत्व' है और उन सबकी अखण्डता की अपेक्षा 'अभेदत्व'।

८५ चारों स्वभावो के लक्षण करो।

(क) ज्ञान दर्शन स्वभाव 'चेतनत्व' है।

(ख) ज्ञान दर्शन का अभाव 'अचेतनत्व' है।

(ग) रूप रस गन्ध व स्पर्श के सद्भाव को 'मूर्तत्व' कहते है, क्योकि इनके बिना इन्द्रिय ग्राह्यत्व नही बन सकता।

(घ) मूर्तत्व के अभाव को 'अमूर्तत्व' कहते है।

८६ सामान्य व विशेष गुण किस द्रव्य मे रहते है ?

सामान्य गुण सभी द्रव्यो मे रहते हैं और विशेष गुण अपनी-अपनी जाति के द्रव्यो मे।

८७ चारो स्वभाव किस किस द्रव्य में रहते है ?

चेतनत्व जीव मे रहता है और अचेतनत्व शेष पाच द्रव्यो मे। मूर्तत्व पुद्गल मे रहता है और अमूर्तत्व शेष पाच द्रव्यो मे।

८८ आठो धर्म किस किस द्रव्य मे रहते हैं ?

सभी द्रव्यो मे सभी धर्म अपेक्षावश देखे जा सकते है।

(६. द्रव्य का विश्लेषण)

८९ द्रव्य का विश्लेषण कितनी अपेक्षाओ से किया जाता है ?

दो अपेक्षाओ से किया जाता है—कथन क्रम की अपेक्षा और वस्तु स्वभाव की अपेक्षा।

९० कथन क्रम मे कितने विभाग है ?

चार है—सज्ञा, सख्या, लक्षण, प्रयोजन।

९१ सज्ञा किसको कहते है ?

द्रव्य गुण आदि के सामान्य व विशेष नाम को 'सज्ञा' कहते है।

९२ सख्या किसे कहते है ?

द्रव्य मे गुण व पर्याय कितनी-कितनी है, उसें 'सख्या' कहते है।

९३ लक्षण किसे कहते हैं ?

द्रव्य गुण पर्याय के प्रति किये गये लक्षण ही 'लक्षण' है।

९४ **प्रयोजन किसे कहते हैं ?**
किस द्रव्य या गुण व पर्याय से हमारा कौनसा स्वार्थ सिद्ध होता है, सो 'प्रयोजन' है ।

९५ **वस्तु स्वभाव के कितने विभाग है ?**
चार है—स्व-द्रव्य, स्व-क्षेत्र, स्व-काल व स्व-भाव ।

९६ **स्व-द्रव्य किसे कहते है ?**
गुण पर्यायो के प्रदेशात्मक अधिष्ठान को उनका 'स्व-द्रव्य' कहते हैं ।

९७ **स्व-क्षेत्र किसे कहते है ?**
द्रव्य के प्रदेशो को अथवा उसकी लम्बी चौडी आकृति को उसका 'स्व-क्षेत्र' कहते है ।

९८ **स्व-काल किसे कहते हैं ?**
द्रव्य व गुण में उस उसकी अपनी पर्याय उस उसका 'स्वकाल' है । अथवा द्रव्य गुण व पर्याय की अवधि अर्थात् निज-निज स्थिति को उस उसका 'स्व-काल' कहते है ।

९९ **स्व-भाव किसे कहते है ?**
द्रव्य के गुण उसके 'स्व-भाव' है । अथवा द्रव्य गुण आदि का अपना-अपना स्वरूप उस उसका 'स्व-भाव' है ।

१०० **स्व-चतुष्टय की अपेक्षा द्रव्य मे क्या प्रधान है और गुण व पर्याय में क्या ?**
द्रव्य में क्षेत्र प्रधान है क्योकि वह गुण व पर्यायो का अधिष्ठान है । गुण में भाव की प्रधानता है क्योकि वे स्वभाव है । पर्याय मे काल प्रधान है, क्योकि वे आगे पीछे क्रम से उत्पन्न होती है और नष्ट होती है । तथा पर्यायो से ही काल जाना जाता है ।

१०१ **स्वचतुष्टय में सामान्य व विशेषपना दर्शाओ ।**
द्रव्य सामान्य है और क्षेत्र उसका विशेष, क्योकि द्रव्य आकार-प्रधान है । भाव सामान्य है और काल उसका विशेष, क्योकि गुण नित्य परिणमनशील है, आकार नित्य परिवर्तनशील नही है ।

१०२. **'संज्ञा' की अपेक्षा द्रव्य व गुण में भेद है या अभेद ?**
भेद है, क्योकि द्रव्य की सज्ञा 'द्रव्य' है और गुण की सज्ञा 'गुण' ।

१०३. 'संख्या' की अपेक्षा द्रव्य व गुण में भेद है या अभेद ?
भेद है, क्योकि द्रव्य एक है और उसमे गुण अनेक है ।

१०४ 'लक्षण' की अपेक्षा द्रव्य व गुण मे भेद है या अभेद ?
भेद है, क्योकि द्रव्य का लक्षण है 'गुणो का समूह' और गुण का लक्षण है 'जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागो व सर्व अवस्थाओ मे रहे' ।

१०५. 'प्रयोजन' की अपेक्षा द्रव्य व गुण मे भेद है या अभेद ?
भेद है, क्योकि द्रव्य मे सारे गुणो के कार्य एक दम सिद्ध हो जाते है, परन्तु किसी एक गुण से तो मात्र एक उसका ही कार्य सिद्ध होता है, जैसे आम से सर्व इन्द्रियो की तृप्ति होती है पर उसके रस से केवल जिह्वा की ।

१०६. 'स्व-द्रव्य' की अपेक्षा द्रव्य व गुण मे भेद है या अभेद ?
अभेद है, क्योकि जो प्रदेशात्मक आधार द्रव्य का है वही उसके गुण का है, जैसे जीव व ज्ञान का आधार एक ही है ।

१०७. 'स्व-क्षेत्र, की अपेक्षा द्रव्य व गुण मे भेद है कि अभेद ?
अभेद है, क्योकि जो प्रदेश या क्षेत्र द्रव्य का है वही गुण का है, जैसे जीव व ज्ञान एक क्षेत्रावगाही हैं ।

१०८ द्रव्य व गुण का क्षेत्र समान है यह कैसे जाना ?
'गुण द्रव्य के सर्व भागो मे रहते हैं' गुण के इस लक्षण पर से ।

१०९. 'स्व-काल' की अपेक्षा द्रव्य व गुण में भेद है या अभेद ?
अभेद है, क्योकि दोनो का काल त्रिकाल है, जैसे जीव व उस का ज्ञान त्रिकाल है ।

११० द्रव्य व गुण का काल समान है यह कैसे जाना ?
'गुण द्रव्य की सर्व अवस्थाओ मे रहता है' गुण के इस लक्षण पर से ।

१११ 'स्व—भाव' की अपेक्षा द्रव्य व गुण में भेद है या अभेद ?
यहाँ दो विकल्प हैं—१. अभेद है, क्योकि द्रव्य का आंशिक स्व-भाव वही है जो कि उसके एक गुण का । २ भेद है, क्योकि

द्रव्य का भाव सर्वगुणात्मक है और गुण का भाव एक गुणात्मक ।

११२. आठों अपेक्षाओं से द्रव्य व पर्याय में भेदाभेद दर्शाओ ।

(क) सज्ञा की अपेक्षा भेद है, क्योकि दोनो को भिन्न नामों से व्यक्त किया जाता है । एक का नाम 'द्रव्य' है और दूसरे का 'पर्याय' ।

(ख) सख्या की अपेक्षा भेद है, क्योंकि द्रव्य एक है और उसमे रहने वाली पर्याये अनेक । जितने गुण उतनी ही पर्यायें ।

(ग) लक्षण की अपेक्षा भेद है, क्योकि द्रव्य का लक्षण है 'गुणो का समूह' और पर्याय का लक्षण 'गुण का विकार' ।

(घ) प्रयोजन की अपेक्षा भेद है, क्योंकि द्रव्य से त्रिकालगत अनेक कार्य की सिद्धि होती है, परन्तु पर्याय से केवल एक कार्य की, जैसे पुद्गल से लोहा सोना आदि सब की सिद्धि होती है पर सोने से केवल सोने की ।

(च) स्वद्रव्य की अपेक्षा अभेद है, क्योंकि जो विवक्षित आधार द्रव्य का वही उसकी पर्याय का । जैसे जीव अपनी मतिज्ञान पर्याय का स्वय आधार है ।

(छ) स्वक्षेत्र की अपेक्षा अभेद है, क्योकि गुणो की भाति वे भी द्रव्य के सम्पूर्ण भागो में रहती हैं, इस लिये जो प्रदेश द्रव्य के है वही उसकी पर्याय के है । जैसे मतिज्ञान जीव मे सर्वत्र रहता है ।

(ज) स्वकाल की अपेक्षा दो विकल्प हैं—१ पर्याय व्यक्ति के काल मे दोनों का काल समान होने से अभेद है, २ स्थिति की अपेक्षा भेद है, क्योकि द्रव्य त्रिकाल स्थायी है पर्याय क्षण स्थायी ।

(झ) स्वभाव की अपेक्षा दो विकल्प है—१. आंशिक रूप से अभेद है ; २ सर्वपूर्ण रूप से भेद । जैसे कि द्रव्य व गुण की तुलना करते हुए कह दिया गया ।

११३. आठों अपेक्षाओं से गुण व पर्याय में भेदाभेद दर्शाओ ।

(क) संज्ञा की अपेक्षा भेद है, क्योंकि दोनो को भिन्न शब्दो द्वारा व्यक्त किया जाता है। एक का नाम 'गुण' है और दूसरे का 'पर्याय'।

(ख) संख्या की अपेक्षा दो विकल्प हैं—१ भेद है, क्योंकि गुण एक है और उसकी त्रिकाली पर्याये अनेक। जैसे रस गुण एक है और उसकी खट्टी मीठी पर्याय अनेक। २ अभेद है, क्योंकि गुण भी एक है और वर्तमान समय मे उसकी पर्याय भी एक है।

(ग) लक्षण की अपेक्षा भेद है, क्योंकि गुण का लक्षण है 'जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागो व सर्व हालतो मे रहे' और पर्याय का लक्षण है 'गुण का विकार'।

(घ) प्रयोजन की अपेक्षा भेद है, क्योंकि गुण से उसकी सर्व पर्यायो की कार्य सिद्धि होती है और पर्याय से केवल एक अपनी। जैसे रस से खट्टे मीठे आदि सभी स्वाद सिद्धि होते हैं। पर खट्टे से केवल खट्टा।

(च) 'स्व द्रव्य' की अपेक्षा अभेद है, क्योंकि गुण व पर्याय दोनों का आधार वही एक विवक्षित द्रव्य है। आम का रस गुण व मीठी पर्याय दोनो ही का आधार वही एक आम है।

(छ) 'स्व क्षेत्र' की अपेक्षा अभेद है, क्योंकि दोनो ही द्रव्य के सम्पूर्ण भागो मे रहते है। आम मे रस भी सर्वत्र है और उसका मीठा स्वाद भी।

(ज) 'स्व काल' की अपेक्षा दो विकल्प है—१ अभेद है, क्योकि वर्तमान समय मे दोनो की सत्ता है। २. भेद है; क्योंकि गुण त्रिकाली है और उसकी पर्याय क्षण स्थायी। जैसे आम मे रस सर्वदा रहता है पर मीठा-पना कुछ समय मात्र।

(झ) 'स्व-भाव' की अपेक्षा दो विकल्प हैं—१ अभेद है

क्योकि वर्तमान अश की ओर देखने पर दोनो का भाव एक है। २. भेद है क्योकि गुण का भाव सर्व- पर्यायात्मक है और पर्याय का केवल एक पर्यायात्मक।

११४ आठों अपेक्षाओं से भेदाभेद दर्शाने से क्या समझे ?

कथन क्रम की अपेक्षा तो द्रव्य गुण व पर्याय मे भेद है पर वस्तु स्व-रूप की अपेक्षा तीनो मे अभेद है। कही कही ही कथचित भिन्नता है।

११५ द्रव्य गुण व पर्याय मे कौन बड़ा है ?

स्वद्रव्य की अपेक्षा तीनो समान हैं, स्व-क्षेत्र की अपेक्षा तीनों समान है। स्व-काल की अपेक्षा द्रव्य व गुण त्रिकाल स्थायी होने से बडे हैं, और पर्याय क्षण स्थायी होने से छोटी। इसी प्रकार स्व-भाव की अपेक्षा सर्व गुण पर्यायात्मक होने से द्रव्य सबसे बड़ा है, द्रव्य का अश होने से गुण उससे छोटा है और गुण का भी अश होने से पर्याय सबसे छोटी है।

११६ द्रव्य गुण पर्याय मे से कौन पहिले है ?

त्रिकाल पर्याय माला को देखने पर तो कोई पहले पीछे नही। परन्तु एक विवक्षित पर्याय को देखने पर द्रव्य व गुण पहले है और वह विवक्षित पर्याय पीछे।

प्रश्नावली

(१—२ विश्व व द्रव्य)

१ निम्न के लक्षण करो —

विश्व; द्रव्य; सत्; समूह; सयोग सम्बन्ध; सश्लेष सम्बन्ध; अयुतसिद्ध सम्बन्ध; तादात्म्य सम्बन्ध; गुण, पर्याय; अर्थ; पदार्थ; उत्पाद; व्यय; ध्रौव्य; द्रव्य के स्व पर चतुष्टय; स्वक्षेत्र, स्व द्रव्य; स्व-काल; स्व-भाव; पर-क्षेत्र; पर-काल; पर-भाव; महा सत्ता; अवान्तर सत्ता।

२. निम्न के भेद करो: —

सम्बन्ध, समूह, द्रव्य।

३. विशेषता व अन्तर दर्शाओ —
पाच प्रकार का समूह, चार प्रकार का सम्बन्ध ।
४ द्रव्य गुण पर्याय मे कौन सत् है, कौन असत् ।
५ पर्याय मे सत् का लक्षण घटाओ ।
६ द्रव्य के समूह मे कौन सा समूह इष्ट है, कारण सहित बताये ।
७ द्रव्य का अनेक प्रकार से लक्षण करो, तथा उनमे समन्वय भी ।
८. द्रव्य को निम्न नाम क्यो दिये गये ?
सत्, द्रव्य, वस्तु, पदार्थ, अर्थ ।
९. उत्पाद व्यय ध्रौव्य इन तीनो का काल समान है या असमान । ठीक प्रकार समझाओ ।
१०. जो उत्पन्न होता है वही नष्ट हो जाये और वही टिका भी रहे, यह कैसे सम्भव हैं । उदाहरण देकर समझाओ ।
११. उत्पाद व्यय तथा ध्रौव्य एक ही बात का होता है या भिन्न भिन्न बातो का ?
१२ अपने अन्दर उत्पाद व्यय ध्रौव्य दर्शाओ ।
१३ घडा उत्पन्न हुआ, घडे का व्यय हुआ और घडा ध्रुव रहा, क्या यह कहना ठीक है ? नही तो क्या ठीक है बताओ ।
१४. उत्पाद व्यय तथा ध्रौव्य मे कौन प्रधान है ?
१५ क्या निश्चय से निम्न वाक्य ठीक हैं, यदि नही तो ठीक करो— तुम नसीराबाद मे रहते हो; शान्तिस्वरूप प्रतिदिन प्रात छ. बजे मन्दिर मे आता है, ससारी जीव शरीरवान होता है; भगवान नेमिनाथ का रग काला था ।
१६. द्रव्य मे अश-अशी आदि द्वैत दर्शाओ ।
१७. द्रव्य गुण पर्याय मे कौन सामान्य है और कौन विशेष ?

(३. गुण)

१. गुण किसको कहते हैं ?
२ गुण की व्याख्या मे स्वचतुष्टय दर्शाओ ।
३. गुण की व्याख्या मे से निम्न शब्द काट देने पर क्या दोष आता है ?

सर्व भागो मे, सर्व अवस्थाओ में ।

४. क्या निश्चय से निम्न वाक्य ठीक है; नही तो ठीक करो ।
आम मे मिठास गुण है, जीव का गुण हर्ष विशाद करना है भारत के मनुष्यो मे काला रग पाया जाता है और अग्रेजों मे गोरा ।

५. निम्न दृष्टान्तो मे गुण की व्याख्या ठीक-ठीक घटित करो—
आम एक ओर से खट्टा होता है और दूसरी ओर से मीठा, सो इसका गुण सर्व भागों मे नही रहता । कच्चा आम खट्टा होता है और पक कर मीठा हो जाता है सो इसका गुण सर्व अवस्थाओ मे नही रहता ।

६. जीवित शरीर मे चेतना या ज्ञान होता है, ऐसा कहने मे क्या हानि ?

७. गुण सत् है या असत् कारण सहित बताओ ।

८. गुण मे सत् का लक्षण घटित करो ।

९ द्रव्य गुण व पर्याय मे कौन सामान्य है, कौन विशेष ? कारण सहित बताओ ।

१० गुण व पर्याय ये दोनो किस किस जाति के विशेष हैं, और द्रव्य किस प्रकार का सामान्य ?

(४ पर्याय)

१ लक्षण करो—
पर्याय, विशेष, कार्य, सहभावी विशेष, क्रमभावी विशेष, तिर्यक् विशेष, ऊर्ध्व विशेष, परिणमन, परिस्पन्दन ।

२. पर्याय या विशेप कितने प्रकार के होते है ?

३ पर्याय का क्षेत्र काल व भाव बताओ ।

४. परिणमन व परिस्पन्दन मे क्या अन्तर है ?

५. गुण व पर्याय मे समानता व असमानता दर्शाओ ।

६. पर्याय के दोनो लक्षणो का (‘गुण का विकार’ व ‘द्रव्य के विशेष’) समन्वय करो ।

७. यदि गुण के क्षेत्र से पर्याय का क्षेत्र छोटा हो तो क्या दोष है ?

८. ऐसा द्रव्य बताओ जिसमे गुण तो हो पर पर्याय न हो। हेतु देकर अपने उत्तर की पुष्टि करो।

(५. धर्म)

१. द्रव्य मे कितने प्रकार की विशेषताये पाई जाती हैं ?

२ लक्षण करो—

गुण, स्वभाव, शक्ति, पर्याय, धर्म, व्यक्ति, अस्तित्व, नास्तित्व, नित्यत्व, अनित्यत्व, एकत्व, अनेकत्व, भेदत्व, अभेदत्व, चेतनत्व, अचेतनत्व, मूर्तत्व, अमूर्तत्व।

३. अन्तर दर्शाओ—

गुण व धर्म, धर्म व स्वभाव, गुण व स्वभाव, गुण व शक्ति; धर्म व शक्ति, स्वभाव व शक्ति, पर्याय व व्यक्ति।

४. क्या धर्म को गुण कह सकते है, कारण सहित बताओ ?

५. छहो विशेषताओ का एक प्रतिनिधि शब्द क्या ?

६. आप अपने मे छहो बाते दर्शाओ।

७ कौन व्यापक है—

गुण, स्वभाव व धर्म मे, पर्याय व व्यक्ति मे।

८ क्या द्रव्य को अनन्त गुणात्मक कह सकते है ? कारण सहित बताओ।

९. आगम मे द्रव्य को अनन्त गुणात्मक न कहकर अनन्त धर्मात्मक क्यो कहा गया है ?

१० द्रव्य मे गुण, स्वभाव व धर्म कितने कितने व कौन कौन से है, उनके नाम व लक्षण बताओ।

११ गुण स्वभाव व धर्म का द्रव्य मे अवस्थान बताओ, कि किस द्रव्य विशेष मे कितने कितने व कौन कौन से रहते है ?

(६. द्रव्य का विश्लेषण)

१ द्रव्य का विश्लेषण कितनी अपेक्षाओ से किया जाता है ?

२ कथनक्रम व वस्तुस्वरूप मे पृथक पृथक कितनी कितनी अपेक्षाये लागू होती है ?

३. लक्षण करो—

सज्ञा, सख्या, लक्षण, प्रयोजन; स्व-द्रव्य, स्व-क्षेत्र; स्व-काल; स्व-भाव ।

४. किसमें कौन अपेक्षा प्रधान है, कारण सहित बताओ ?

द्रव्य, गुण, पर्याय, परिस्पन्दन, रूप पर्याय, परिणमनरूप पर्याय ।

५ द्रव्यादि चतुष्टय को दो भागों में गर्भित करो तथा उसकी पुष्टि करो ।

६. चतुष्टय में सामान्य व विशेष दर्शाओ ।

७. आठो अपेक्षाओ से भेद अभेद दर्शाओ—

द्रव्य व गुण में, द्रव्य व पर्याय में, गुण व पर्याय मे ।

८ द्रव्य गुण व पर्याय मे कौन बडा है ?

द्रव्य की अपेक्षा, क्षेत्र की अपेक्षा, काल की अपेक्षा, भाव की अपेक्षा ।

९. द्रव्य गुण व पर्याय मे से कौन पहिले व कौन पीछे ?

२/२ द्रव्याधिकार

(१. जीव द्रव्य)

१. **जीव द्रव्य किसे कहते हैं ?**
जिसमे चेतना गुण पाया जावे उसको जीव द्रव्य कहते हैं ।

२ **जीव का लक्षण अमूर्त करे तो क्या दोष है ?**
अतिव्याप्ति दोष आता है, क्योकि आकाश आदि अन्य अमूर्तीक द्रव्यो मे भी वह लक्षण चला जाता है ।

३ **जीव का लक्षण रागी करें तो क्या दोष है ?**
अव्याप्त दोष आता है, क्योकि यह लक्षण ससारी जीवो मे पाया जाता है, मुक्त में नही ।

४ **जीव का लक्षण शरीरी करें तो क्या दोष आता है ?**
असम्भव दोष आता है, क्योकि जीव चेतन है और शरीर अचेतन ।

५. **जीव के निश्चय से कितने भेद हैं ?**
कोई भेद नही है । चेतन स्वभावी जीव निश्चय से एक ही प्रकार का है, जैसे तालाव, वावडी आदि का जल वास्तव में एक ही प्रकार का है ।

६. **जीव के आगम कथित भेद वास्तव में किसके हैं ?**
शरीर के हैं जीव के नही; जिस प्रकार कि जल के भेद वास्तव मे तालाव आदि आधारो के हैं जल के नही ।

७ संसारी व मुक्त में निश्चय से क्या अन्तर है ?
कोई अन्तर नही क्योकि दोनो चेतन स्वभावी हैं।

८. दो हाथ व दो पांव वाला मनुष्य जीव होता है ?
नही, वह शरीर है जीव नही, क्योकि इन्द्रियगोचर है ।

९. आपको जो कुछ दिखाई दे रहा है उसमें जीव कौन है ?
कोई नही, क्योंकि आखो से दिखाई देने वाला सब पुद्गल द्रव्य है जीव नही ।

१०. शान्तिलाल जीव है या अजीव ?
अजीव है, क्योंकि शरीर को लक्ष्य करके नाम रखने का व्यवहार है, जीव को लक्ष्य करके नही ।

११. भगवान नेमिनाथ का रंग कैसा था ?
वर्ण भगवान के शरीर का था भगवान का नही, क्योंकि वह जीव थे। जीव अमूर्तीक होता है।

१२ आप दोनो में से क्षेत्र काल व भाव तीनों अपेक्षाओं से निश्चय मे कौन बड़ा है ?

(क) क्षेत्र की अपेक्षा समान है, क्योकि दोनो असख्यात प्रदेशी है।

(ख) काल की अपेक्षा समान हैं, क्योकि दोनो त्रिकाली है ।

(ग) भाव की अपेक्षा समान है क्योकि दोनो चेतन स्वभावी है।

१३. व्यवहार से आप दोनों में कौन वडा व उत्तम है ?

(क) क्षेत्र की अपेक्षा शान्ति लाल वड़ा है, क्योंकि इसका कद वड़ा है ।

(ख) काल की अपेक्षा मैं वड़ा हूँ, क्योकि मेरी आयु इससे अधिक है।

(ग) भाव की अपेक्षा दोनों समान है, क्योकि दोनो सम्यग्दृष्टि व धर्मात्मा है, अथवा शान्तिलाल वडा है क्योंकि मुझ से अधिक सौम्य है।

१४ आप दोनों में अधिक गुणी कौन ?
निश्चय से दोनो समान, क्योकि दोनो मे उतने उतने ही गुण है। व्यवहार से शान्तिलाल अधिक गुणी है, क्योकि मुझ से अधिक शास्त्रज्ञ है।

१५. निश्चय से पिता पहले होता है या पुत्र ?
कोई पहिले पीछे नही, क्योकि दोनो ही त्रिकाली द्रव्य हैं।

१६ एक जीव कितना बड़ा होता है ?
एक जीव प्रदेशो की अपेक्षा लोकाकाश के बराबर (असंख्यात प्रदेशी) है, परन्तु सकोच विस्तार के कारण अपने शरीर के प्रमाण है। और मुक्त जीव अन्तिम शरीर के प्रमाण है।

१७ लोकाकाश के बराबर कौन सा जीव है ?
मोक्ष जाने से पूर्व समुद्घात करने वाला जीव लोकाकाश के बराबर है।

१८ जीव छोटे बडे शरीर मे कैसे समाता है ?
उसमे सिकुडने व फैलने की विशेष शक्ति है।

१९ सुकड जाने से जीव मे क्या कमी पड़ती है ?
कुछ नही, क्योकि उसके प्रदेश उतने के उतने ही रहते है।

२०. फैल जाने से जीव मे कुछ वृद्धि हो जाती होगी ?
नही, उसके प्रदेश उतने के उतने ही रहते है।

२१ आप कितने बड़े हैं ?
निश्चय से लोक प्रमाण और व्यवहार से शरीर प्रमाण।

२२ लोक प्रमाण जीव इतने छोटे से शरीर मे कैसे आवे ?
सुकडने के कारण उसके प्रदेश एक दूसरे मे समा जाते है।

२३ प्रदेश एक दूसरे मे कैसे समा सकते है ?
अमूर्तीक व सूक्ष्म पदार्थों को एक-दूसरे मे समाने मे कोई बाधा नही।

२४ एक स्थान मे शरीरधारी जीव एक ही रहता है ?
नहीं, यद्यपि स्थूल शरीरधारी तो एक ही रह सकता है, पर सूक्ष्म शरीरधारी अनन्त रह सकते हैं।

२५. एक-क्षेत्र मे अनेक सिद्ध या शरीरधारी-कैसे रहते है ?

सिद्ध अमूर्तीक होने के कारण और शरीरधारी सूक्ष्मशरीरी होने के कारण एक दूसरे मे समाकर रहते है।

२६ क्या जीव का कोई आकार है ?

निश्चय से कोई आकार नही, व्यवहार से शरीर का आकार ही उसका आकार है, जैसे भाजन का आकार ही उसमे पड़े जल का आकार है। क्योकि जीव शरीर मे सर्वत्र व्याप कर रहता है।

२७ यदि आकार है तो जीव को मूर्तीक कहना चाहिये ?

नही, क्योकि इन्द्रिय ग्राह्य को मूर्तीक कहा है, आकारवान को नही।

२८ क्या तुम्हारा चित्र या फोटो खेचा जा सकता है ?

चित्र खेचा जा सकता है पर फोटो नही, क्योकि चित्र कल्पना से खेचा जाता है और फोटो केमरे से। केमरे मे मूर्तीक पदार्थ का ही प्रतिबिम्ब पड सकता है, अमूर्तीक का नही।

२९ व्यवहार से जीव कितने प्रकार का है ?

दो प्रकार का—एक ससारी दूसरा मुक्त।

३० संसारी जीव कितने प्रकार का है ?

दो प्रकार का—एक त्रस दूसरा स्थावर।

३१ स्थावर जीव कितने प्रकार का है ?

पाच प्रकार का—पृथिवी, जल, अग्नि, वायु व वनस्पति।

३२ त्रस जीव कितने प्रकार का है ?

पाच प्रकार का—द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, सज्ञी-पचेन्द्रिय और असज्ञी पचेन्द्रिय।

३३. जीव कितनी काय के है ?

छ काय के है—पृथिवी, अप, तेज, वायु, वनस्पति और त्रस।

३४ जीव व काय के भेदों मे यह अन्तर क्यो ?

जीव के भेद उसके जानने की शक्ति व साधनो की अपेक्षा है, और काय के भेद शरीर जातियो की अपेक्षा।

३५ काय के भेदों मे स्थावर के सर्व भेद गिना दिये पर त्रस का कोई भेद न गिनाया ?

हा, क्योकि पाच स्थावरो के शरीर भिन्न-भिन्न जाति के है पर सभी त्रसो का शरीर एक मास जाति का है ।

३६ जीव द्रव्य को 'जीव' व 'आत्मा' क्यो कहते हैं ?

प्राण धारण करने की अपेक्षा 'जीव' और अपने गुण पर्यायो को प्राप्त करने की अपेक्षा 'आत्मा' है ।

३७ क्या आत्मा के अवयव होते हैं ?

निश्चय से नही, व्यवहार से उसके गुण पर्याय तथा प्रदेश ही उसके अवयव है ।

३८ जीव कितने हैं ?

जीव द्रव्य अनन्तानन्त है ।

३९ जीव द्रव्य कहां हैं ?

समस्त लोकाकाश मे भरे हुए है ।

४० अनन्तानन्त जीव इस लोक मे कैसे समाये ?

सूक्ष्म शरीरधारी जीव एक दूसरे मे समाकर एक ही क्षेत्र मे अनन्तो रह जाते हैं । स्थूल शरीरधारी एक दूसरे मे नही समा सकते ।

४१ सिद्ध लोक में केवल मुक्त जीव ही रहते होगे ?

नही, वहा अनन्तानन्त सूक्ष्म जीव भी रहते है, क्योकि ये सर्वत्र लोक मे ठसाठस भरे हुए है ।

(२. पुद्गल द्रव्य)

४२ पुद्गल द्रव्य किसे कहते हैं ?

जिसमे स्पर्श रस गन्ध व वर्ण पाया जायें ।

४३ पुद्गल शब्द का सार्थक्य समझाओ ।

'पुद' अर्थात पूर्ण होना और 'गल' अर्थात गलना । जो पूर्ण हो सके और गल सके, अर्थात मिलकर या बन्धकर स्कन्ध बन सके

और टूट कर परमाणु तक बन जाये। पूरण जलन स्वभावी होने के कारण 'पुद्गल' है।

४४. पुद्गल का लक्षण मूर्तीक करे तो क्या हानि ?
नही, क्योकि प्राथमिक जन इतने मात्र से समझ नही सकते, अथवा मूर्तीक मे आकार मात्र की भ्रान्ति हो जायेगी।

४५. जिसकी कोई मूर्ती या आकार हो सो मूर्तीक, क्या ठीक है ?
नही, क्योकि मूर्ती आकार को कहते है और मूर्तीकपना इन्द्रिय-ग्राह्यता को। मूर्ती छहो द्रव्यो मे है पर मूर्तीकपना केवल पुद्गल मे।

४६ जिसमे रूप पाया जाये सो रूपी क्या यह ठीक है ?
केवल रूप नही बल्कि जिसमे रूप रस गन्ध व स्पर्श चारो पाये जाये सो रूपी।

४७. जो नेत्र से दिखाई दें सो रूपी क्या यह ठीक है ?
नेत्र ही से नही, बल्कि किसी भी इन्द्रिय के गम्य हो सो रूपी।

४८ शब्द कर्ण इन्द्रिय गोचर है, क्या वह रूपी है ?
हा, शास्त्रो मे शब्द को रूपी माना गया है।

४९. क्या तुमने कभी अपना फोटो खिचवाया है ?
खिचवाया है पर अपना नही शरीर का।

५०. आकारवान द्रव्य रूपी होता है ?
नही, आकार तो अरूपी द्रव्यो मे भी होता है।

५१. विश्व में जो कुछ भी दृष्टि है वह वास्तव मे क्या है ?
सब पुद्गल है, क्योकि इन्द्रियो द्वारा पुदगल के अतिरिक्त कुछ भी ग्रहण नही हो सकता; अथवा सब किसी न किसी जीव के जीवित या मृत शरीर ही दृष्टिगत हो रहे हैं। 'जैसे—मेज व पुस्तक वनस्पति कायिक जीव के मृतक कलेवर है और यह डब्बा पृथिवी कायिक का।

५२. पुद्गल द्रव्य के कितने भेद हैं ?
दो भेद है—एक परमाणु, दूसरा स्कन्ध।

५३. परमाणु किसको कहते हैं ?
सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते है ।

५४ स्कन्ध किसको कहते हैं ?
अनेक परमाणुओ के बन्ध को स्कन्ध कहते है।

५५ स्कन्ध मे कितने परमाणु होते हैं ?
दो परमाणु का भी स्कन्ध होता है, तीन चार का भी । इसी प्रकार सख्यात, असख्यात व अनन्त परमाणुओ तक के भी स्कन्ध होते है।

५६ स्कन्ध का क्या आकार होता है ?
छोटे, बडे, लम्बे, मोटे, गोल, चौकोर आदि अनेक आकार होते है ।

५७ जो इन्द्रिय द्वारा ग्रहण होता है वह परमाणु है या स्कन्ध ?
वह सब स्कन्ध है परमाणु नही ।

५८ क्या परमाणु भी इन्द्रियों द्वारा देखा जा सकता है ?
नही ।

५९ परमाणु दिखाई नहीं देता अत. वह अरूपी है ?
नही, क्योकि उसके कार्यभूत स्कन्ध इन्द्रियो द्वारा देखे जा रहे है। स्कन्ध कार्य है और परमाणु उसका कारण। कारण के अनुसार ही कार्य होता है। जब कार्य रूपी है तो कारण (परमाणु) भी रूपी ही है।

६० स्कन्ध कितने प्रकार के हैं ?
दो प्रकार के—एक स्थूल दूसरा सूक्ष्म ।

६१ स्थूल किसे कहते हैं ?
जो एक दूसरे मे समा न सके ।

६२ स्थूल स्कन्ध में परमाणु कितने होते हैं ?
अनन्त ही होते है ।

६३ सूक्ष्म किसे कहते हैं ?
जो एक दूसरे मे समा सके ।

६४. सूक्ष्म स्कन्ध में कितने परमाणु होते है ?

दो, तीन अथवा सख्यात, असख्यात व अनन्त तक होते है ।

६५ स्थूलता व सूक्ष्मता की अपेक्षा स्कन्ध के भेद दर्शाओ ।

छ भेद है—स्थूल स्थूल, स्थूल, स्थूल सूक्ष्म, सूक्ष्म स्थूल, सूक्ष्म, सूक्ष्म सूक्ष्म ।

६६. छहों स्कन्धों के उदाहरण देकर समझाओ ।

सर्व ठोस पदार्थ स्थूल स्थूल है, तरल व वायवीय पदार्थ स्थूल है, नेत्रगम्य छाया प्रकाशादि स्थूल सूक्ष्म है, अन्य चार इन्द्रियों के विषय शब्द आदि सूक्ष्म स्थूल है, वर्गणा रूप स्कन्ध सूक्ष्म है, वर्गणा से आगे दो परमाणुपर्यन्त के स्कन्ध सूक्ष्म सूक्ष्म है ।

६७. छहों स्कन्धों में स्थूलता व सूक्ष्मता के लक्षण घटित करो ।

(क) पृथिवी पत्थर आदि ठोस पदार्थ अत्यन्त स्थूल है क्योकि किसी भी वस्तु मे से पार नही हो सकते, इसी से स्थूल स्थूल कहे गये ।

(ख) तरल व वायवीय पदार्थ छिद्रों मे से पार हो जाते है पर पदार्थों मे से नही, इसलिये पहले की अपेक्षा कुछ कम स्थूल होने से केवल स्थूल कहे गए ।

(ग) नेत्र के विषयभूत प्रकाश आदि छिद्रो के अतिरिक्त वस्त्र झीने कागज व पारदर्शी शीशे आदि ठोस पदार्थो मे से पार कर जाने की अपेक्षा यद्यपि कुछ सूक्ष्म है, पर अन्य पदार्थों मे से पार न होने से स्थूल ही हैं। इसी से स्थूल सूक्ष्म कहे गये ।

(घ) अन्य विषय शब्द आदि कुछ अधिक स्थूल पदार्थो मे से भी पार हो जाने के कारण सूक्ष्म है और पूर्ण रीतयः पार नही हो सकते इस लिये कुछ स्थूल भी है, इसी से सूक्ष्म स्थूल कहे गये ।

(च) वर्गणाये प्रत्येक सूक्ष्म व स्थूल पदार्थ मे से पार हो जाने के कारण सूक्ष्म है।

(छ) वर्गणाओ से भी छोटे तथा अव्यवहार्य स्कन्ध तो उनसे

भी सूक्ष्म होने के कारण सूक्ष्म सूक्ष्म कहे गए है।

६८. बन्ध किसको कहते हैं ?

अनेक चीजो मे एकपने का ज्ञान कराने वाले सम्बन्ध विशेष को बन्ध कहते है।

६९ बन्ध कितने प्रकार का है ?

तीन प्रकार का—जीव बन्ध, अजीव बन्ध व उभय बन्ध।

७० जीव बन्ध किसे कहते हैं ?

जीव मे जो रागद्वेष होते हैं वे जीव बन्ध है। इसे भाव बन्ध भी कहते है।

७१ अजीव बन्ध किसे कहते है ?

परमाणु का परमाणु के साथ तथा अन्य पुद्गल स्कन्ध के साथ सश्लेष रूप से बन्धना अजीव बन्ध है। इसे द्रव्य बन्ध भी कहते हैं।

७२ उभय बन्ध किसे कहते हैं ?

जीव प्रदेशो का पुद्गल कर्म वर्गणाओ के साथ अथवा शरीर के साथ बन्ध होना उभयबन्ध है। प्रदेश बन्ध होने के कारण इसे भी द्रव्य बन्ध कहते हैं।

७३. संश्लेष रूप से बन्धने का क्या अर्थ ?

दूध पानीवत् एकमेक हो जाना सश्लेप वन्ध है।

७४ बन्ध किस कारण से होता है ?

स्निग्धता व रूक्षता के कारण से। पुद्गल मे स्निग्धता व रूक्षता नाम वाले स्पर्श जनित गुण होते है और जीव मे इनके स्थान पर क्रमश राग व द्वेष होते है। राग स्निन्ध है और द्वेष रूक्ष।

७५ कौन से वन्ध से स्कन्ध बनता है ?

अजीव वन्ध से।

७६ स्कन्ध वन जाने पर भी क्या परमाणु पृथक २ रहते है ?

वन्ध की अपेक्षा वे सब घुल मिल एक हो जाते है, जैसे ताम्वा

व सोना मिलकर एक हो जाते है, परन्तु सत्ता की अपेक्षा अब भी वे पृथक-पृथक, क्योकि पदार्थ की स्वतन्त्र सत्ता का कभी नाश नही होता ।

७७. **क्या स्कन्ध में रहने वाले परमाणु को शुद्ध कह सकते हैं ?**

नही, वह अशुद्ध कहा जाता है, क्योकि अन्य के साथ मिले हुए सर्व पदार्थ अशुद्ध कहलाते हैं । खोटे सोने मे स्वर्ण भी अशुद्ध है और ताम्बा भी ।

७८. **स्कन्ध बनाने में जीव का भी कुछ हाथ है क्या ?**

जितने भी स्थूल स्कन्ध दृष्ट है, वे सभी किसी न किसी जीव के जीवित या मृत शरीर है, जैसे—यह वस्त्र वनस्पति कायिक का मृत शरीर है और यह मकान पृथ्वी कायिक का । यद्यपि वर्गणा रूप सूक्ष्म स्कन्ध स्वभाव से ही वन जाते है, पर स्थूल स्कन्ध जीव का शरीर वने बिना उत्पन्न होता नही देखा जाता । अत. जीव ही स्थूल स्कन्धो का मूल निर्माता है ।

७९. **शरीर कितने प्रकार के है ?**

पांच प्रकार के—औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण ।

८०. **वर्गणा किसे कहते है ?**

स्थूल शरीरो के या स्कन्धो के मूल कारणभूत जो सूक्ष्म स्कन्ध (Elements) होते है, उन्हे वर्गणा कहते हैं ।

(८१) **वर्गणारूप स्कन्धों के कितने भेद हैं ?**

आहार वर्गणा, तैजस वर्गणा, भापा वर्गणा, मनो वर्गणा व कार्माण वर्गणा आदि २२ भेद है (ये पाच प्रधान हैं) ।

(८२) **आहार वर्गणा किसको कहते है ?**

औदारिक, वैक्रियक व आहारक इन तीन शरीर रूप जो परिणमै उसे आहारक वर्गणा कहते है।

(८३) **औदारिक शरीर किसको कहते हैं ?**

मनुष्य, तिर्यञ्च के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते है ।

(८४) वैक्रियक शरीर किसको कहते हैं ?

जो छोटे वडे एक अनेक आदि नाना क्रिया को करें ऐसे देव व नारकियो के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

(८५) आहारक शरीर किसे कहते हैं ?

छटे गुणस्थानवर्ती मुनि के तत्वो मे कोई शंका होने पर केवली व श्रुतकेवली के निकट जाने के लिये, मस्तक मे से एक हाथ का (धवल) पुतला निकलता है। उसे आहारक शरीर कहते हैं।

(८६) क्या आहारक शरीर दिखाई देता है ?

नही, सूक्ष्म होने से वह इन्द्रिय ग्राह्य नही होता।

(८७) तैजस वर्गणा किसे कहते हैं ?

औदारिक व वैक्रियक शरीरो को कान्ति देने वाला तैजस शरीर है। वह जिस वर्गणा से बने सो तैजस वर्गणा है।

८८. दृष्ट पदार्थों में तैजस शरीर कौनसा है ?

सूक्ष्म होने से वह दृष्ट नही है। वह औदारिक व वैक्रियक शरीरो के भीतर घुल मिलकर रहता है।

(८९) भाषा वर्गणा किसे कहते हैं ?

जो शब्द रूप परिणमै उसे भाषा वर्गणा कहते है।

९०. मनो वर्गणा किसे कहते हैं ?

शरीर के भीतर आठ पाखुडी वाले कमल के आकारवाला जो सूक्ष्म मन होता है उस रूप जो परिणमै उसे मनो वर्गणा कहते हैं।

(९१) कार्माण वर्गणा किसे कहते हैं ?

जो कार्माण शरीर रूप परिणमै उसे कार्माण वर्गणा कहते है।

(९२) कार्माण शरीर किसे कहते हैं ?

ज्ञानावरणादि अष्ट कर्मो के समूह (पिण्ड) को कार्माण शरीर कहते है।

(९३) तैजस व कार्माण शरीर किसके होते हैं ?
चारो गति के सव संसारी जीवो के तैजस और कार्माण शरीर होते है।

९४. आत्मा के निश्चय से कौनसा शरीर होता है ?
आत्मा को कोई शरीर नही होता अथवा ज्ञान ही उसका शरीर है।

९५. तुम्हारा शरीर किस जाति का है ?
औदारिक।

९६. जितने भी दृष्ट पदार्थ हैं वे कौन से शरीर हैं ?
ये सव षट्कायिक जीवों के औदारिक शरीर है या थे।

९७. क्या तुम्हारे इसके अतिरिक्त शरीर भी है ?
हां, कार्माण व तैजस ये दो शरीर सभी संसारी जीवों को सामान्य रूप से होते है, वे मेरे भी है।

९८ तैजस व कार्माण शरीर कहां रहते हैं तथा दिखाई क्यों नहीं देते ?
वे इस वाह्य औदारिक व वैक्रियक शरीर के भीतर उनके साथ ओत प्रोत होकर रहते है। सूक्ष्म होने से दिखाई नही देते।

९९. लोक में जो कुछ भी दृष्ट है वह सव क्या है ?
किसी न किसी जीव के जीवित या मृत शरीर ही दृष्ट है, अन्य कुछ नही। जैसे—यह मकान पृथिवीकायिक जीव का मृत शरीर है और यह शान्ति लाल का जीवित शरीर। यह जूता त्रस जीव का मृत शरीर है और यह वस्त्र वनस्पति कायिक का।

१००. पांचों इन्द्रियों के विषय कौन कौन वर्गणायें हैं ?
स्पर्श रसना घ्राण व नेत्र इन चार इन्द्रियो के द्वारा जो कुछ भी ग्रहण होता है वह सव आहारक वर्गणा है, क्योंकि वह सव स्थूल जीवित या मृत औदारिक शरीर है। कर्ण इन्द्रिय द्वारा भाषा वर्गणा का ग्रहण होता है। मनो वर्गणा, तैजस वर्गणा और कार्माण वर्गणा ये तीनों तथा उनके द्वारा निर्मित मन और तैजस कार्माण शरीर सूक्ष्म होने के कारण किसी

भी इन्द्रिय से ग्रहण होने शक्य नही।

१०१ निम्न वस्तुये क्या हैं ?

पुस्तक, चौकी, स्तम्भ, जूता, वायु, घडी, मोटरकार, वस्त्र।

१०२. पांचभूत कौन से हैं ?

पृथिवी, अप्, तेज, वायु, आकाश। आकाश भौतिक नही है इसलिये कोई कोई चार ही भूत कहता है।

१०३ पृथिवीभूत से क्या तात्पर्य ?

सभी ठोस पदार्थ अर्थात स्थूल स्थूल स्कन्ध पृथिवी कहे जाते है; जैसे मिट्टी, पत्थर, लोहा, सोना, रत्न आदि।

१०४ अप्भूत से क्या समझे ?

सभी तरल पदार्थ अर्थात् स्थूल स्कन्ध अप् कहे जाते हैं; जैसे जल, तेल, घी, दूध आदि।

१०५. तेजभूत से क्या समझे ?

ऊष्णता व कान्तिरूप से जो कुछ प्रतीत होता है वह सब तेज या अग्निभूत है, जैसे-अग्नि, सोने की कान्ति आदि।

१०६ वायुभूत से क्या समझे ?

वायुवत् प्रतीति मे आने वाले सब पदार्थ वायुभूत के अन्तर्गत है, जैसे—सभी प्रकार की वायु, गैस, वाष्प, धूम आदि।

१०७. क्या ये दृष्ट ठोस व तरल आदि पदार्थ ही पंचभूत हैं ?

यद्यपि समझाने के लिये ऐसा ही वताया जाता है, परन्तु वास्तव मे ऐसा नही। ये सभी उपरोक्त पदार्थ तो पाचो भूतो के सम्मेल व सघात से उत्पन्न स्थूल स्कन्ध है। 'भूत' तो सूक्ष्म है; जिन्हे आहारक वर्गणा के ही उत्तर भेद रूप से ग्रहण किया जा सकता है। दृष्ट पृथिवी मे भी वे पाचों हीनाधिक रूप से देखे जा सकते है और दृष्ट जल व वायु आदि मे। जिस 'भूत' का अश अधिक होता है, वह भूत वैसे ही लक्षण वाला कहा जाता है।

१०८. तुम्हारे शरीर में कितने भूत हैं दर्शाओ ?
पांचो भूतो से मिलकर शरीर बना है। चमड़ा हड्डी व मांस ठोस होने से पृथिवी है; रक्त मूत्र पसेव जल हैं; भीतर संचार करने वाली वायु है, उदराग्नि जठराग्नि व कान्ति तेज है और शरीर की भीतरी पोलाहट आकाश है। यह सब स्थूल रूप से बताया गया है, वास्तव मे हड्डी आदि ये सभी पदार्थ पृथक पृथक पंच भौतिक है।

१०९. पुद्गल के भेदों में वास्तविक द्रव्य क्या है ?
परमाणु

११०. पुद्गल द्रव्य कितने हैं ?
अनन्तानन्त हैं।

१११ पुद्गल स्कन्ध कितने हैं ?
सूक्ष्म स्कन्ध अनन्त है और स्थूल स्कन्ध असख्यात।

११२. पुद्गल द्रव्य की स्थिति कहां है ?
समस्त लोकाकाश में भरे हुए है।

११३. अनन्तानन्त द्रव्य छोटे से लोक में कैसे समावे ?
सूक्ष्म होने के कारण एक दूसरे में समाकर रह जाते हैं; स्थूल होकर नही रह सकते।

११४. क्या पुद्गल द्रव्य सिद्ध लोक में है ?
हां, सूक्ष्म स्कन्ध व परमाणु यहां भी है।

(३. धर्म द्रव्य)

(११५) धर्म द्रव्य किसको कहते हैं ?
गति रूप परिणमे जीव और पुद्गल को जो गमन मे सहकारी हो, उसे धर्म द्रव्य कहते हैं, जैसे—मछली को जल।

११६. धर्म द्रव्य के लक्षण में से 'गति रूप परिणमे' ये शब्द निकाल दें तो क्या दोष आवे ?
धर्म द्रव्य सहकारी न रहकर प्रेरक बन जावे अर्थात् जबरदस्ती गमन कराने लगे।

११७. धर्म द्रव्य के लक्षण में से 'जीव व पुद्गल' ये शब्द निकाल दें

तो क्या दोष आये ?

लक्षण अति व्याप्त हो जायें अर्थात जीव व पुद्गल के अतिरिक्त अन्य चारो द्रव्यो को भी सहकारी बन बैठे।

११८. धर्म द्रव्य किस किस द्रव्य को सहाई है और क्यों ?

केवल जीव व पुद्गल को, क्योकि वे दोनो ही गमन करने का समर्थ है।

११९ गतिरूप परिणमन कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—परिस्पन्दन व क्रिया।

१२०. परिस्पन्दन किसे कहते है ?

द्रव्य अपने स्थान से न डिगे पर उसके प्रदेश अन्दर ही अन्दर काम्पते रहे, उसे परिस्पन्दन कहते है।

१२१ क्रिया किसे कहते हैं ?

द्रव्य अपना स्थान छोडकर स्थानान्तर को प्राप्त हो जाये तो उसे क्रिया कहते है।

१२२ द्रव्य के आकार निर्माण मे धर्म द्रव्य का क्या स्थान है ?

जीव व पुद्गल के प्रदेशो का फैलना इसी के निमित्त से होता है।

१२३. धर्म द्रव्य कहां रहता है ?

लोकाकाश मे सर्वत्र व्यापकर।

(१२४) धर्म द्रव्य खण्ड रूप है किंवा अखण्ड रूप और इसकी स्थिति कहां है ?

धर्म द्रव्य एक अखण्ड द्रव्य है। यह समस्त लोक मे रहता है।

१२५. धर्म द्रव्य को लोक व्यापक क्यों माना ?

जीव व पुद्गल की एक समय की गति आकाश के एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश पर्यन्त भी हो सकती है और उत्कृष्टतः सर्व लोक मे भी।

१२६ सिद्ध भगवान लोक के ऊपर क्यों नहीं जाते ?

क्योकि वहां धर्म द्रव्य नही है।

१२७ क्या सिद्ध भगवान में लोक के ऊपर जाने की शक्ति नहीं है ?

उनमें तो गमन की शक्ति है पर सहकारी कारण के बिना गमन सम्भव नही, जैसे जल बिना मछली।

१२८ धर्म द्रव्य की सिद्धि कैसे होती है ?
यह न होता तो जीव व पुद्गल को लोकाकाश के बाहर चला जाने से कौन रोकता, और तब लोक व अलोक का विभाग भी कैसे हो सकता।

१२६. धर्म द्रव्य के उदासीन सहकारीपने को उदाहरण से समझाओ।
जैसे जल मछली को बलपूर्वक नही चलाता बल्कि जल में वह स्वय चाहे तो चले, वैसे ही धर्म द्रव्य जीव को बलपूर्वक नही चलाता बल्कि उसमे रहता हुआ स्वय चाहे तो चले। जिस प्रकार जल के अभाव मे मछली यदि चाहे तो भी चल नही सकती, उसी प्रकार धर्म द्रव्य के अभाव जीव यदि चाहे तो भी चल नही सकता।

(४. अधर्म द्रव्य)

१३०. अधर्म द्रव्य किसको कहते है ?
गति पूर्वक स्थितिरूप परिणमै जीव और पुद्गल की स्थिति मे सहकारी हो उसे अधर्म द्रव्य कहते है।

१३१. अधर्म द्रव्य के लक्षण में से 'गति पूर्वक स्थिति' ये शब्द निकाल दे तो क्या दोष ?
जीव पुद्गल के अतिरिक्त शेष चार द्रव्य नित्य स्थित है। उनकी स्थिति मे भी कारण बन वैठे और इस प्रकार अति व्याप्ति आ जाये।

१३२. अधर्म द्रव्य के लक्षण में से 'जीव पुद्गल' ये शब्द निकाल दें तो क्या दोष ?
तब भी लक्षण अतिव्याप्त हो जाये, क्योंकि उनके अतिरिक्त शेष चार द्रव्यों मे भी उसका व्यापार होने का प्रसग आये।

१३३. अधर्म द्रव्य किस किस द्रव्य को सहाई है और क्यों ?
केवल जीव व पुद्गल को, क्योंकि वे दोनों ही गमन करने में

समर्थ है।

१३४. अन्य द्रव्यों की स्थिति में सहाई माने तो ?

नही, क्योकि वे त्रिकाल स्थित हैं, गमन पूर्वक स्थिति नही करते। जो नया उत्पन्न हो उसे कार्य कहते हैं। नई स्थिति उत्पन्न न होने से वह उनका कार्य नही स्वभाव है और स्वभाव मे किसी की सहायता नही हुआ करती।

१३५ द्रव्य के आकार निर्माण मे अधर्म द्रव्य का क्या स्थान है ?

द्रव्य के प्रदेशो का मुड़ना उसके निमित्त से होता है, क्योकि गमनशील प्रदेश विना रुके मुड नही सकते, और उनके मुडे बिना तिकोन चौकोर आदि आकार नही बन सकते।

१३६. अधर्म द्रव्य और किस किस प्रकार सहाई होता है ?

चलते हुए जीव व पुद्गल को मुडने मे सहाई होता है, क्योकि बिना रुके मुड़ना हो नही सकता।

१३७. अधर्म का अर्थ पाप करें तो ?

अन्यत्र इसका पाप अर्थ मे भी प्रयोग किया गया है, पर यहा द्रव्य अधिकार मे यह एक विशेष जाति के द्रव्य का नाम है।

१३८. अधर्म द्रव्य कितना बड़ा है और उसका आकार क्या है ?

लोकाकाश जितना ही बडा है और उसी आकार का है।

(१३९) अधर्म द्रव्य खण्ड रूप है किंवा अखण्ड रूप और उसकी स्थिति कहां है ?

अधर्म द्रव्य एक अखण्ड द्रव्य है और समस्त लोकाकाश मे व्याप्त है।

१४०. अधर्म द्रव्य को लोक व्यापक क्यों माना गया है ?

चलते चलते जीव व पुद्गल लोक के किसी भी प्रदेश पर ठहर सकते है।

१४१. धर्म व अधर्म द्रव्यों में कौन छोटा है ?

दोनो लोकाकाश प्रमाण हैं। कोई छोटा बड़ा नही।

१४२. अधर्म द्रव्य की सिद्धि कैसे होती है ?

यदि यह न होता तो गतिमान जीव व पुद्‌गल सदा सीधे गमन ही किया करते, कभी न ठहर पाते और न मुड सकते।

१४३. **धर्म द्रव्य जीव पुद्‌गल को चलाता है और अधर्म ठहराता है। यदि दोनों में झगड़ा हो जाये तो क्या जीव बीच में ही पिस जायेगा ?**

नही, क्योंकि ये दोनो बल पूर्वक जीव पुद्‌गल को चलाते या ठहराते नही है। वह स्वय चले या ठहरे वे तो सहाई मात्र होते है।

१४४ **अधर्म द्रव्य के उदासीन सहकारीपने को उदाहरण से समझाओ।**

जैसे वृक्ष की छाया पथिक को वल पूर्वक नही रोकती, बल्कि पथिक उसे देखकर स्वय ही यदि चाहे तो रुक जाता है, उसी प्रकार अधर्म द्रव्य जीव पुद्‌गल को बलपूर्वक नही रोकता, बल्कि उसके निमित्त से स्वय चाहे तो रुक जाते है। यदि छाया न हो तो इच्छा होने पर भी पथिक न रुके, इसी प्रकार यदि अधर्म द्रव्य न हो तो जीव पुद्‌गल कभी भी रुक न सके।

१४५. **क्या सिद्ध भगवान को भी अधर्म द्रव्य सहकारी हैं ?**

केवल उस समय सहकारी हुआ था जब कि वे ऊर्ध्व लोक मे जा कर पहिले पहल ठहरे थे। उसके पीछे न वे कभी चलते है और न चलते चलते ठहरते है। अतः अन्य चार द्रव्यों वत् अब उन को भी अधर्म निमित्त नही है।

१४६. **अधर्म द्रव्य स्वयं ठहरा हुआ है, क्या वह स्वयं को भी निमित्त है ?**

नही, क्योकि वह गतिपूर्वक स्थित नही है।

(५. आकाश द्रव्य)

(१४७) **आकाश द्रव्य किसे कहते है ?**

जो जीवादि पाच द्रव्यो को रहने के लिए जगह दे।

१४८. **अवकाश या जगह देने से क्या समझे ?**

कोई भी द्रव्य इस महान आकाश (space) मे जहां व जिस प्रकार से चाहे रह सकते है, यही अवकाश या जगह देना है।

१४९. आकाश द्रव्य किस किस रूप में सहाई है ?
द्रव्यो को परस्पर मिलकर अर्थात एक दूसरे समाकर रहने मे तथा जीव पुद्‌गल द्रव्यो के प्रदेशों को सुकड़कर एक दूसरे मे समाने मे सहाई होता है ।

१५० द्रव्य के आकार निर्माण में आकाश द्रव्य का क्या स्थान है ?
प्रदेशो का सिकुड़ना आकाश द्रव्य के निमित्त से होता है, क्योंकि एक दूसरे मे अवकाश पाये बिना वह सम्भव नही ।

१५१. आकाश का रंग कैसा है ?
अमूर्तीक होने के कारण इसका कोई रग नही ।

१५२ यह नीला नीला क्या दीखता है ?
यह आकाश नही है, बल्कि उसमे स्थित पुद्‌गल कणों पर पड़े हुए सूर्य प्रकाश का प्रतिबिम्ब है ।

१५३. आकाश ऊपर और पृथिवी नीचे क्या यह ठीक है ?
नही, आकाश मे ऊपर नीचे की कल्पना सम्भव नही, क्योकि वह सर्वव्यापक है ।

१५४ यह पृथिवी किस चीज पर टिकी हुई है, क्या किसी स्तम्भ पर या शेष नाग के सर पर ?
आकाश मे टिकी है । स्तम्भ या शेषनाग के सहारे की आवश्यकता नही, क्योंकि आकाश मे स्वय अवकाशदान शक्ति है ।

१५५ सूर्य चन्द्र आदि अधर में कैसे लटक रहे हैं ?
सूर्य चन्द्र ही नही पृथिवी भी इसी प्रकार अधर मे लटक रही है। चन्द्र मे बैठकर देखे तो ऐसी ही दिखाई दे । यह सब आकाश की अवकाशदान शक्ति का माहात्म्य है ।

(१५६) आकाश कहां पर है ?
आकाश सर्वव्यापी है ।

१५७. पृथिवी के चारों ओर आकाश है पर उसके भीतर नहीं ?
नही पृथिवी के भीतर भी आकाश है, क्योकि वह अमूर्तीक व सूक्ष्म है।

१५८. क्या हमारे शरीर में भी आकाश है ?

हा, इसमे जो पोलाहट है अथवा रोम कूप है, वह सब आकाश है, तथा मास पेशियो व हड्डियो मे भी वह अवश्य स्थित है।

(१५९) आकाश के कितने भेद है ?

निश्चय से आकाश एक ही अखण्ड द्रव्य है। व्यवहार से इसके दो भेद है—लोकाकाश व अलोकाकाश।

(१६०) लोकाकाश किसे कहते है ?

जहां तक जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म व काल ये पाँचों द्रव्य है (दिखाई दे) उसको लोकाकाश कहते है।

(१६१) अलोकाकाश किसे कहते है ?

लोक से बाहर के सर्व अवशेष आकाश को अलोकाकाश कहते है।

१६२. लोकाकाश का आकार कैसा ?

पुरुषाकार है, अर्थात यदि पुरुप अपने दोनो हाथों को अपने दोनो कुल्हो पर रखकर पाव फैलाकर खड़ा हो जाये तो वैसा ही लोक का आकार है।

(१६३) लोक की मोटाई, लम्बाई, चौड़ाई और ऊंचाई कितनी है ?

लोक की मोटाई उत्तर दक्षिण दिशा मे सब जगह सात राजू है। चौडाई पूर्व व पश्चिम दिशा मे मूल मे (नीचे जड़ मे पाव के स्थान पर) सात राजू है। ऊपर क्रम से घटकर सात राजू की ऊचाई पर (कुल्हो के स्थान पर मध्य मे) एक राजू है। फिर क्रम से बढकर १०॥ राजू की ऊचाई पर (कुहनियो के स्थान पर) पाच राजू है। फिर क्रम से घट कर चौदह राजू की ऊचाई पर (सर के स्थान पर) एक राजू चौड़ाई है। ऊर्ध्व व अधो दिशा में (सर से पांव तक) ऊंचाई चौदह राजू है।

(१६४) धर्म तथा अधर्म द्रव्य खण्ड रूप है किंवा अखण्ड रूप, और इनकी स्थिति कहां है ?

धर्म व अधर्म द्रव्य दोनो एक एक अखण्ड द्रव्य है और दोनो

ही समस्त लोकाकाश मे व्याप्त है।

१६५. लोक और अलोक के बीच कौन सी दीवार खड़ी है ?

लोक और अलोक वास्तव मे किसी दीवार से विभाजित नही हैं बल्कि एक ही अखण्ड द्रव्य है। उसके जितने भाग मे जीवादि पाच द्रव्य रहते है तथा गमनागमन करते है उसे लोक कहा गया है तथा जहा वे आ जा नही सकते उसे अलोक कहते हैं।

१६६. लोक व अलोक ये आकाश के दो खण्ड है ?

नही, आकाश तो एक अखण्ड द्रव्य है। लोक उसी मे एक भाग या सीमा विशेष है, जिसमे कि जीवादि रहते है। शेष भाग को अलोक कहते है।

१६७. लोक व अलोक का विभाग करने वाला कौन व कैसे ?

धर्म व अधर्म द्रव्य के कारण ही लोक अलोक का विभाग है, क्योकि आकाश के जितने भाग मे ये दोनो द्रव्य हैं, उतने भाग मे ही जीव व पुद्गल गमनागमन कर सकते है, उससे बाहर नही। अत उतने भाग मे ही धर्म अधर्म स्वय तथा जीव व पुद्गल दिखाई देते है। काल द्रव्य भी उतने भाग मे ही है उससे बाहर नही। अत. उतने भाग मे ही पाचो द्रव्य दिखाई देने से वह लोकाकाश नाम पाता है।

१६८ यदि धर्म आदि द्रव्यों की स्थिति लोक के बाहर भी मान लें तो ?

धर्म द्रव्य की सीमा को उल्लघन न कर सकने से जितना बडा भी धर्म द्रव्य मानोगे उतना ही लोकाकाश होगा। अधर्म द्रव्य भी उतना ही बडा होगा क्योकि उसके बाहर गमन पूर्वक स्थिति करने वाला कोई है ही नही। काल भी उतनी ही सीमा में रहेगा, क्योकि उसके बाहर परिणमन करने वाला कोई भी न होने से वहा उसकी आवश्यकता ही नही है।

(१६९) प्रदेश किसको कहते हैं ?

आकाश के जितने हिस्से को एक पुद्गल परमाणु रोके उसे

प्रदेश कहते है।

१७०. **प्रदेश आकाश में ही होते है या अन्य द्रव्यों में भी ?**
आकाशवत् ही अन्य द्रव्यो मे भी जानना, क्योकि वे भी आकाश को अवगाह करके रहते है।

१७१. **क्या प्रदेश परमाणुवत् पृथक पृथक होते हैं ?**
नही, प्रदेश नाम का कोई पृथक पदार्थ नही होता, बल्कि द्रव्यों की लम्बाई चौडाई आदि मापने के लिये एक कल्पना मात्र है।

१७२. **लोक व अलोक इन दोनों के रगों में क्या अन्तर ?**
अमूर्तीक होने के कारण दोनो ही रग रहित है।

१७३. **लोक व अलोक इन दोनों मे कौन बड़ा ?**
अलोक अनन्त है। उसकी तुलना मे लोक अणुवत् है। जैसे घर के बीच लटका छींका।

१७४. **एक आकाश प्रदेश पर कितनी सृष्टि है ?**
एक आकाश प्रदेश पर एक कालाणु, एक धर्म द्रव्य का प्रदेश, एक अधर्म द्रव्य का प्रदेश, अनन्तो परमाणु, अनन्तो सूक्ष्म स्कन्धो के कुछ कुछ प्रदेश, अनन्तो सूक्ष्म शरीरधारी जीवो के तथा उनके शरीरो के कुछ कुछ प्रदेश, एक स्थूल स्कन्ध के या एक स्थूल शरीरधारी जीव के व उसके शरीर के कुछ प्रदेश। इतनी सृष्टि एक आकाश प्रदेश पर समाई हुई है।

१७५. **इतने द्रव्य एक आकाश प्रदेश पर कैसे समावें ?**
सूक्ष्म होने के कारण द्रव्य अथवा उनके प्रदेश एक दूसरे में समा कर रह सकते है, इसलिये कोई बाधा नही। स्थूल द्रव्यो मे ही ऐसी बाधा सम्भव है, कि एक स्थान पर एक से अधिक न रह सके।

१७६. **सूक्ष्म जीव कम से कम कितने प्रदेश पर आता है?**
छोटे से छोटे शरीर वाला जीव भी असख्यात प्रदेशो से कम मे नही समा सकता। इतनी बात अवश्य है कि यह 'असंख्यात', लोकाकाश के कुल असख्यात जो प्रदेश उसके असख्यातवे भाव

प्रमाण होते है, अर्थात अत्यल्प असंख्यात प्रमाण है।

१७७. सब द्रव्य तो आकाश में ठहरे हुए हैं, पर आकाश किसमें ठहरा हुआ है ?

आकाश स्वय अपने मे ठहरा हुआ है।

(६. काल द्रव्य)

(१७८) काल द्रव्य किसे कहते हैं ?

जो जीवादि द्रव्यों के परिणमन मे सहकारी हो उसे काल द्रव्य कहते है; जैसे कुम्हार के चाक को घूमने के लिये लोहे की कीली।

१७९ परिणमन किसे कहते हैं ?

प्रतिक्षण द्रव्य के गुणों मे जो भीतर ही भीतर सूक्ष्म परिवर्तन होता रहता है, वह परिणमन कहलाता है; जैसे कि आम का रूप गुण धीरे धीरे भीतर भीतर ही पीलेपने को प्राप्त होता रहता है, अथवा यह स्तम्भ प्रतिक्षण भीतर ही भीतर क्षीण हो रहा है।

१८० काल द्रव्य का आकार कैसा ?

एक परमाणु की भाति काल द्रव्य एक प्रदेशी है।

१८१ एक परमाणु जितना बड़ा दूसरा द्रव्य कौन सा है ?

कालाणु।

(१८२) काल द्रव्य कितने हैं और उनकी स्थिति कहां है ?

लोकाकाश के जितने प्रदेश हैं उतने ही कालद्रव्य (कालाणु) हैं। और लोकाकाश के एक एक प्रदेश पर एक एक कालाणु स्थित है।

१८३. क्या कालाणु भी अपने स्थान से अन्य स्थान पर जा आ सकता है ?

नही, कालाणु में क्रियावती शक्ति नही है।

(१८४) काल द्रव्य के कितने भेद है ?

दो है—एक निश्चय काल दूसरा व्यवहार काल ।

(१८५) निश्चय काल किसे कहते है ?

काल द्रव्य (कालाणु) को निश्चय काल कहते है ।

(१८६) व्यवहार काल किसको कहते हैं ?

काल द्रव्य की घडी, दिन, मास आदि पर्यायो को व्यवहार-काल कहते है ।

१८७. निश्चय व व्यवहार-काल में से वास्तविक द्रव्य कौन ?

निश्चय काल या कालाणु ही वास्तविक द्रव्य है ।

१८८. क्या व्यवहार काल भी द्रव्य है ?

नही, व्यवहार काल तो कल्पना है, क्योकि सूर्य नेत्रपुट व घड़ी की गति व क्रिया रूप पर्यायों पर से दिन निमेष घण्टा मिनट आदि का व्यवहार मात्र किया जाता है । अथवा व्यवहार काल द्रव्य नही पर्याय है, क्योकि उत्पन्नध्वसी है ।

१८९. घड़ी घन्टे आदि का निश्चय काल से क्या सम्बन्ध है ?

काल द्रव्य के निमित्त से सूर्य आदि मे अथवा अन्य व्यवहारगत द्रव्यो मे परिणमन होता है, जिसके कारण कि व्यवहार काल की कल्पना की जाती है । इस प्रकार क्योकि निश्चय काल व्यवहारकाल के कारण का भी कारण सिद्ध होता है, इसलिये व्यवहार काल उसकी पर्याय माना गया है ।

१९०. समय किसे कहते हैं ?

व्यवहारकाल के छोटे से छोटे भाग को समय कहते हैं ।

१९१. समय कैसे उत्पन्न होता है ?

एक पुद्गल परमाणु अति मन्द गति से एक आकाश प्रदेश पर से अनन्तरवर्ती दूसरे आकाश प्रदेश पर जितनी देर में जाये, वह एक समय है ।

१९२. क्या पुद्गल परमाणु एक समय में एक ही प्रदेश पार कर सकता है या अधिक भी ?

सबसे अधिक मन्दगति से गमन करे तो एक प्रदेश पार करता है, परन्तु तीव्रतम गति से तो वह एक समय मे सारे लोक का उल्लघन करने को समर्थ है।

१९३ एक समय में १४ राजू जाने वाले परमाणु के द्वारा एक समय के असंख्यात भाग हो जायेंगे ?

नहीं, क्योकि एक समय से कम की कोई भी गति या कार्य सम्भव नही, वह गति तीव्र हो या मन्द। तहा मन्द गति से एक प्रदेश और तीव्र गति से लोक का उल्लघन करता है, तहा कोई विरोध नही—अथवा प्रदेश का उल्लघन करना समय की उत्पत्ति का कारण नही, वह तो केवल अनुमान कराने का एक साधन है।

१९४. काल द्रव्य को खण्ड रूप क्यों माना गया ?

काल द्रव्य के निमित्त से होने वाला परिणमन एक समय से अधिक का नही होता, इसलिये उसे खण्डरूप माना गया, क्योंकि कार्य के अनुसार ही कारण होना चाहिये।

१९५. काल द्रव्य को धर्म द्रव्यवत् व्यापक क्यों न माना गया ?

धर्म द्रव्य के निमित्त से होने वाली गति तो तीव्र व मन्द अनेक प्रकार की हो सकती है, पर काल द्रव्य के निमित्त से होने वाला परिणमन नियम से एक एक समय का पृथक पृथक ही होता है। धर्म द्रव्य के निमित्त से होने वाला कार्य व्यापक भी हो सकता हैं और अव्यापक भी, इसलियें उसे व्यापक मानना ही न्याय सगत है। काल के निमित्त से होने वाला कार्य सर्वदा खण्डित ही होता है इसलिये उसे खण्डित ही माना गया है।

दूसरे प्रकार से यो समझिये कि धर्म द्रव्य क्षेत्र-प्रधान है और काल द्रव्य काल-प्रधान। द्रव्यो का क्षेत्र या अखण्ड आकार बड़ा छोटा सब प्रकार का हो सकता है, परन्तु काल का अखण्ड रूप एक समय से अधिक नही होता, इसीलिये वह व्यापक है और यह अणु रूप।

१९६. क्या अलोकाकाश में भी परिणमन होता है ?
हाँ, क्योकि वह भी द्रव्य है, परिणमन करना प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है।

१९७. काल द्रव्य के अभाव में अलोकाकाश कैसे परिणमन करे ?
क्योंकि आकाश अखण्ड द्रव्य है। लोक व अलोक कोई पृथक द्रव्य नही है। इसलिये लोक के परिणमन के साथ इसका भी परिणमन अवश्यम्भावी है, जैसे कि कुम्हार के चाक की कीली के ऊपर वाला चक्र का भाग जब घूमता है तो शेष भाग को भी घूमना पडता है।

१९८ अलोकाकाश मे परिणमन का निमित्त क्या ?
लोकाकाश वाला काल द्रव्य ही वहां निमित्त है; जैसे कि कुम्हार के सारे चाक को घूमने मे मध्य भाषा वाली कीली ही निमित्त है।

१९९ क्या काल द्रव्य भी परिणमन करता है ?
हाँ, क्योकि परिणमन करना द्रव्य का स्वभाव है।

२०० काल द्रव्य किसके निमित्त से परिणमन करता है ?
स्वय अपने निमित्त से।

२०१. काल द्रव्य मानने की क्या आवश्यकता, सभी द्रव्य कालवत् स्वयं स्वभाव से परिणमन कर ले ?
नही; सर्व द्रव्यो मे परिणमन करने का स्वभाव है परन्तु कराने का नही। काल द्रव्य मे परिणमन करने का व कराने का दोनो स्वभाव हैं। इस लिये काल द्रव्य विना किसी की सहायता के स्वय परिणमन कर सकता है, परन्तु अन्य द्रव्य नही।

(७. अस्तिकाय)

२०२ अस्तिकाय किसको कहते हैं ?
वहु प्रदेशी द्रव्य को अस्तिकाय कहते है।

२०३. 'अस्तिकाय' शब्द का अर्थ करो।

'अस्ति' का अर्थ है सत्ता रखना या होना तथा 'काय' का अर्थ है बहु प्रदेशी। अत जिस द्रव्य मे सत्ता व बहु प्रदेशीपना दोनो पाये जाये वह 'अस्तिकाय' है।

२०४ काय का अर्थ बहु प्रदेशी कैसे ?

काय शरीर को कहते हैं और वह नियम से बहु प्रदेशी होता है, परमाणुओ का सचय हुए विना स्कन्ध, पिण्ड या शरीर का निर्माण सम्भव नही।

(२०५) अस्तिकाय कितने है ?

पाच हैं—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश।

२०६ काल द्रव्य को अस्तिकाय मे क्यो नहीं गिना ?

वह अस्ति तो अवश्य है क्योकि उसकी सत्ता है, परन्तु कायवान नही है, क्योकि एक प्रदेशी है। अत उसे अस्ति कह सकते है पर अस्तिकाय नही।

(२०७) पुद्गल परमाणु भी (कालाणुवत्) एक प्रदेशी है, तो वह अस्तिकाय कैसे हुआ ?

पुद्गल परमाणु शक्ति की अपेक्षा अस्तिकाय है अर्थात स्कन्धरूप होकर वहु प्रदेशी हो जाता है। इसलिये उपचार से अस्तिकाय कहा गया है।

२०८ परमाणु की भांति कालाणु को भी उपचार से अस्तिकाय कह लीजिये ?

नही, क्योकि उसमे स्कन्ध वनने की शक्ति का भी अभाव होने से तहाँ उपचार सम्भव नही।

२०९. छहों द्रव्यो में कितने कितने प्रदेश हैं ?

जीव, धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय तीनो समान होते हुए असख्यात प्रदेशी है। आकाश स्वय अनन्त प्रदेशी है परन्तु लोकाकाश वाला भाग धर्मास्तिकाय के समान असख्यात प्रदेशी हैं। पुद्गल परमाणु एक प्रदेशी है और स्कन्ध सख्यात

असख्यात व अनन्त प्रदेशी भी होते है। कालाणु एक प्रदेशी ही है।

२१० द्रव्य मे उनके प्रदेश पृथक पृथक रहते होंगे ?

नही, द्रव्य तो अखण्ड होता है। उसका बडा व छोटापना जानने के लिये उसमे प्रदेशो की कल्पना मात्र की गई है।

२११ जीव कितने परमाणुओं से मिलकर बना है ?

जीव एक अखण्ड चेतन पदार्थ है। वह किन्ही परमाणुओ से मिलकर नही बना है। परमाणुओ से पुद्गल स्कन्ध बनता है जीव नही।

(८. द्रव्य सामान्य)

२१२ जीव व पुद्गल द्रव्य ही प्रत्यक्ष है, शेष चार को मानने की क्या आवश्यकता ?

जीव व पुद्गल दोनो द्रव्यो मे दो प्रकार के कार्य होते है—आकार बनाना व परिणमन करना। आकार बनाने के लिये उसे तीन कार्य करने पडते है—प्रदेशो या परमाणुओ का कही से मुडना, कही से बाहर की ओर निकलना या फैलना और कही से भीतर को प्रवेश करना या सुकडना। इन चार कार्यो के लिये निमित्त भी चार ही होने चाहिये। तहा फैलने या बाहर को गमन करने के लिये धर्मास्तिकाय, सुकड़ने या भीतर को अवकाश पाने के लिये आकाश और गतिपूर्वक ठहर ठहर कर मोड लेने के लिये अधर्मास्तिकाय की आवश्यकता है।

अथवा

जीव व पुद्गल के चार प्रकार के कार्य दृष्ट है—गति करना, ठहरना, एक दूसरे मे समाना या अवगाह पाना और भावात्मक परिणमन करना। इन चार कार्यो के निमित्त भी चार ही चाहिये। गति के लिये धर्म, स्थिति के लिये अधर्म, अवकाश के लिये आकाश और परिणमन के लिये।

२१३ छहों द्रव्यो को दो दो भागो मे विभाजित करो ।

(क) चेतन-अचेतन । जीव चेतन और शेष पाच अचेतन ।

(ख) मूर्तीक-अमूर्तीक । पुद्गल मूर्तीक और शेष पाच अमूर्तीक ।

(ग) एक प्रदेशी-बहु प्रदेशी । काल द्रव्य एक प्रदेशी शेष पाच बहु प्रदेशी ।

(घ) एक व अनेक । धर्म, अधर्म व आकाश एक एक, शेष अनेक अनेक ।

(च) सर्वगत व असर्वगत । आकाश सर्वगत शेष पाच असर्वगत

(छ) क्रियावान-अक्रियावान जीव । पुद्गल क्रियावान शेष अक्रियावान ।

(ज) परिणामी-अपरिणामी । जीव व पुद्गल परिणामी शेष अपरिणामी । क्योकि जीव पुद्गल मे ही स्थूल आकार विकार होते है अन्य मे नही ।

(झ) नित्य-अनित्य । जीव पुद्गल परिणामी होने से अनित्य और शेष चार अपरिणामी होने से नित्य शुद्ध ।

(ट) क्षेत्रात्मक-अक्षेत्रात्मक । आकाश क्षेत्र प्रधान होने से क्षेत्रात्मक अन्य पाच अक्षेत्रात्मक ।

(ठ) कारण-अकारण । जीव अकारण शेष पाच कारण । धर्मादि चार तो जीव पुद्गल दोनो के लिये कारण है और पुद्गल जीव के शरीरादि व रागादि का कारण है ।

(ड) कर्ता-अकर्ता । इच्छावान होने से जीवकर्ता और शेष अकर्ता ।

(ढ) भोक्ता-अभोक्ता । इच्छावान होने से जीव भोक्ता शेष अभोक्ता ।

(त) द्रव्यात्मक-भावात्मक । ज्ञानात्मक होने से जीव भावस्वरूप है और जड होने से शेष द्रव्य स्वरूप (विशेप देखो आगे प्रश्न न० २२१)

२१४ द्रव्यों के पृथक पृथक अवयव दर्शाओ ।

(क) जीव के अवयव ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्यादि भाव व उसके असख्यात प्रदेश ।

(ख) पुद्गल के अवयव रूप रस गन्ध स्पर्श आदि भाव व उसके प्रदेश या परमाणु।

(ग) धर्मास्तिकाय के अवयव उसका गति हेतुत्व भाव व उसके असख्यात प्रदेश।

(घ) अधर्मास्ति के अवयव उसका स्थिति हेतुत्व भाव और उसके असख्यात प्रदेश।

(च) आकाश द्रव्य के अवयव उसका अवगाहन हेतुत्व भाव और उसके अनन्त प्रदेश।

(छ) काल द्रव्य के अवयव उसका परिणमन हेतुत्व रूप भाव ही है प्रदेश नही।

२१५ सबसे बडा द्रव्य कौन सा ?

द्रव्य की अपेक्षा पुद्गल सबसे बडा है, क्योकि उसकी सख्या सबसे अधिक है। क्षेत्र की अपेक्षा आकाश सबसे बडा है क्योकि उसके प्रदेश सबसे अधिक है। काल की अपेक्षा सभी समान है, क्योकि सभी त्रिकाली है। भाव की अपेक्षा जीव सबसे बडा है क्योकि ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेद सबसे अधिक है तथा सर्वग्राहक है।

२१६ कौन से द्रव्य ऐसे हैं जो स्व व पर दोनों को निमित्त है ?

जीव पुद्गल आकाश व काल ये चारो स्व व पर दोनो को निमित्त है। जीव द्रव्य स्व व पर दोनो को जानता है, एक दूसरे का उपकार करता है तथा विवेक द्वारा अपना भी। पुद्गल द्रव्य शरीरादि के द्वारा जीव का उपकार करता है और स्कन्ध बनाकर अपना भी। आकाश द्रव्य स्व व पर दोनो को अवकाश देता है। काल द्रव्य स्व व पर दोनो को परिणमन कराता है।

२१७ कौन से द्रव्य ऐसे हैं जो पर को ही निमित्त हैं स्व को नहीं ?

धर्म व अधर्म द्रव्य जीव व पुद्गल को ही गति व स्थिति कराने मे निमित्त है, अपने को नही, क्योकि वे त्रिकाल स्थायी है।

२१८ ऐसे द्रव्य बताओ जो अरूपी भी हों और अचेतन भी।

चार है—धर्म, अधर्म, आकाश और काल।

२१६ अर्थ, पादार्थ, द्रव्य, तत्व, वस्तु व सत् इनमे क्या अन्तर है ?
द्रव्य, गुण, पर्याय तीनो पृथक पृथक अथवा युगपत 'अर्थ' व 'पदार्थ' शब्द वाच्य है। गुण व पर्याय का आश्रयभूत प्रदेशात्मक पदार्थ 'द्रव्य' शब्द वाच्य है। द्रव्य के स्वभाव व विभाव 'तत्व' शब्द वाच्य है। द्रव्य मे प्रयोजनभूतपने को 'वस्तु' शब्द प्रगट करता है। और द्रव्य का उत्पाद व्यय ध्रुवता को सत् शब्द से दर्शाया जाता है। (और भी देखे पीछे अध्याय २ मे प्रथम अधिकार के अन्तर्गत 'द्रव्य' की व्याख्या मे प्रश्न न० २१)

२२० द्रव्य को द्रव्य वस्तु अर्थ पदार्थ तत्व व सत् क्यों कहा जाता है ?
प्रदेशात्म होने के कारण अर्थात परिमनशील होने के कारण द्रव्य, प्रयोजनभूत कार्य करने से वस्तु, गुण-पर्यायवान होने से अर्थ व पदार्थ, स्वभाववान होने से तत्व और सत्तावान होने से सत् कहा जाता है।

२२१. द्रव्य के दो प्रधान अग कौन से है ? पृथक पृथक दर्शाओ ।
विश्लेषण द्वारा द्रव्य में दो प्रधान विभाग प्राप्त होते है—द्रव्य व भाव। (विशेप देखो पीछे सामान्याधिकार मे 'द्रव्य' नामक द्वितीय विभाग के अन्तर्गत प्रश्न न० ३६—४०)

२२२ परिस्पन्दन क्रिया व परिणमन मे क्या अन्तर है ?
(देखो पीछे सामान्याधिकार के 'पर्याय' नामक चतुर्थ विभाग में प्रश्न न० ६८—७०)

प्रश्नावली

नोट —सर्व अधिकार व विभाग ही स्वय प्रश्नावली है।

२/३ गुणाधिकार

(१ गुण सामान्य)

(१) गुण किसे कहते है ?
जो द्रव्य के पूरे हिस्से मे और उसकी सब हालतों मे रहे उसे गुण कहते है। (इस लक्षण सम्बन्धी तर्क वितर्क के लिये देखो पीछे सामान्याधिकार मे 'गुण' नामक तृतीय विभाग)

(२) गुण के कितने भेद हैं ?
दो है—एक सामान्य दूसरा विशेष।

(३) सामान्य गुण किसे कहते हैं ?
जो सर्व द्रव्यो मे न व्यापे (या पाया जाये) उसे सामान्य गुण कहते है।

(४) विशेष गुण किसे कहते है ?
जो सर्व द्रव्यों मे न व्यापे (न पाया जाये) वल्कि अपने अपने द्रव्यो मे (द्रव्य जातियो मे) रहे उसे विशेष गुण कहते है।

(५) सामान्य गुण कितने हैं ?
अनेक है लेकिन उनमे छः मुख्य है, जैसे—अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व व प्रदेशत्व।

६. विशेष गुण कितने हैं ?
अनेक है लेकिन उनमे १२ प्रधान है। जीव के चार—ज्ञान, दर्शन, सुख व वीर्य। पुद्गल के चार—रूप रस, गन्ध व स्पर्श। धर्मास्तिकाय आदि के चार—गति हेतुत्व, स्थिति—हेतुत्व, अवगाहना हेतुत्व व परिणमन हेतुत्व।

७ **कौन द्रव्य ऐसा है जिसमे सामान्य गुण न हो ?**
ऐसा कोई द्रव्य नही है, क्योकि सामान्य गुण सभी द्रव्यो मे व्याप्त है।

८. **कौन द्रव्य ऐसा जिसमे विशेष गुण न हो ?**
ऐसा कोई द्रव्य नही है, क्योकि प्रत्येक द्रव्य मे अपने अपने विशेष गुण अवश्य है।

९ **एक ही सामान्य गुण सब द्रव्यो मे आकाशवत् व्याप्त है ?**
नही, प्रत्येक द्रव्य मे अपना अपना सामान्य गुण पृथक पृथक है। सब द्रव्यो मे पाये जाने वाले सामान्य गुण जाति की अपेक्षा एक एक हैं, इसी लिये सब द्रव्यो मे व्यापना कहा है, आकाशवत् नही, जैसे—सर्व द्रव्यो मे अपना अपना अस्तित्व गुण है क्योकि वे सब सत् है।

१० **सामान्य गुण के मानने से क्या लाभ ?**
सामान्य गुण से द्रव्य की सिद्धि होती है।

११ **विशेष गुण को मानने से क्या लाभ ?**
विशेष गुणो से द्रव्य मे जाति भेद होता है।

१२ **सामान्य गुण न माने तो ?**
द्रव्य का अस्तित्व ही सिद्ध न हो।

१३ **विशेष गुण न माने तो ?**
द्रव्यो मे जाति भेद न हो। सर्व सकर का प्रसग आये।

१४ **सामान्य गुण को अन्य क्या नाम दे सकते हैं ?**
'त्व' प्रत्यय सहित होने से इसे स्वभाव कह सकते है, यथा अस्तित्व स्वभाव।

१५ **सामान्य व विशेष गुणों के लक्षणों को गुण की व्याख्या में लगाओ।**
जो सर्व द्रव्यो के पूरे हिस्से मे व उनकी सर्व अवस्थाओ में रहे उनको सामान्य गुण कहते है। और जो सर्व द्रव्यों मे न रह कर अपनी अपनी जाति के द्रव्यो के पूरे पूरे हिस्से मे और उनकी सर्व हालतो मे रहे, उसे विशेष गुण कहते हैं।

१६ सामान्य व विशेष गुणों की किस किस बात में अन्तर है ?

(क) सामान्य गुण सर्व द्रव्यो मे रहता है परन्तु विशेष गुण अपनी अपनी जाति के द्रव्यो मे ही ।

(ख) सामान्य गुण से द्रव्य की सिद्धि होती है और विशेष गुण से उनमे जाति भेद ।

(ग) यदि सामान्य गुण न हो तो द्रव्य ही न हो और यदि विशेष गुण न हो तो सर्व द्रव्य मिलकर एकमेक हो जाये ।

(घ) सामान्य गुण द्रव्य सामान्य का लक्षण करने के काम आते है और विशेष गुण पृथक पृथक जाति के द्रव्यो के लक्षण करने मे काम आते है, जैसे द्रव्य का लक्षण तो अस्तित्व है परन्तु जीव द्रव्य का लक्षण ज्ञान दर्शन ।

१७ सामान्य व विशेष गुणो में कौन अधिक है ?

दोनो अनेक अनेक हैं, कोई अधिक नही ।

१८. सामान्य व विशेष गुणों मे आठ अपेक्षाओं से भेदाभेद दर्शाओ ।

(क) 'सज्ञा' की अपेक्षा भेद है, क्योकि दोनो के नाम भिन्न भिन्न है ।

(ख) 'सख्या' की अपेक्षा अभेद है, क्योकि दोनो अनेक अनेक है ।

(ग) 'लक्षण' की अपेक्षा भेद है, क्योकि दोनो के लक्षण भिन्न भिन्न है ।

(घ) 'प्रयोजन' की अपेक्षा भेद है, क्योकि सामान्य गुण से द्रव्य की सिद्धि होती है और विशेष गुण से जाति की ।

(च) 'द्रव्य' की अपेक्षा अभेद है, क्योकि दोनो का आश्रय प्रत्येक द्रव्य है ।

(छ) 'क्षेत्र' की अपेक्षा अभेद है, क्योकि दोनो ही उस द्रव्य के सर्व हिस्से मे रहते है ।

(ज) 'काल' की अपेक्षा अभेद है, क्योकि दोनो द्रव्य की सर्व हालतो मे रहते है अर्थात् त्रिकाली है ।

(झ) 'भाव' की अपेक्षा भेद है क्योकि दोनो के लक्षण भिन्न है ।

१९. छहो सामान्य गुणो के क्रम का सार्थक्य दर्शाओ।

(क) किसी पदार्थ का अस्तित्व होने पर ही अन्य-अन्य बातों की चर्चा प्रयोजनीय है, इसलिये 'अस्तित्व गुण' सबसे पहिले है।

(ख) जो भी है उसका कुछ न कुछ प्रयोजनभूत कार्य अवश्य होना चाहिये अन्यथा वह वस्तु ही नही है। इसलिये दूसरे नम्बर पर 'वस्तुत्व' है।

(ग) वस्तु मे प्रयोजनभूत कार्य सम्भव नही जब तक कि उसमे परिणमन न हो, इसलिये तीसरे नम्बर पर 'द्रव्यत्व' गुण है।

(घ) उपरोक्त तीनो बातो की सिद्धि तभी हो सकती है जब वह किसी न किसी के ज्ञान का विषय बन रहा हो। इसलिये चौथे नम्बर पर 'प्रमेयत्व' है।

(च) परिणमन करते हुए उसे अपने स्वतन्त्र अस्तित्व की रक्षा अवश्य करनी चाहिये, ताकि बदलकर दूसरे रूप न हो जाये, अन्यथा सभी द्रव्य मिल जुलकर एकमेक हो जायेगे। इसी से पाँचवे नम्बर पर 'अगुरुलघुत्व' गुण कहा गया है।

(छ) द्रव्य की स्वतन्त्र सत्ता टिक नही सकती यदि गुणो का समूह न हो; और गुणो का समूह रह नही सकता जब तक कि उनका कोई आधार या आश्रय न हो। आश्रय प्रदेशवान ही होता है इसलिये अन्त मे 'प्रदेशत्व' गुण कहा गया है।

२० अपने मे छहों सामान्य व विशेष गुण घटित करके दिखाओ।
'मैं हूँ' यह मेरा अस्तित्व है। जानना देखना मेरा प्रयोजनभूत कार्य है, यही मेरा वस्तुत्व है। मैं प्रति क्षण बालक से वृद्धत्व की ओर जा रहा हूँ यह मेरा द्रव्यत्व है। मुझको मैं व आप सब जानते हैं यह मेरा प्रमेयत्व है। मैं कभी भी बदल कर

चेतन से जड नही बन सकता यही मेरा अगुरुलघुत्व है। मै मनुष्य की आकृति या सस्थान वाला हूँ यह मेरा प्रदेशत्व है। ज्ञान दर्शन आदि मेरे विशेप गुण सर्व प्रत्यक्ष है।

(२. अस्तित्व गुण)

(२१) अस्तित्व गुण किसे कहते है ?

जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य का कभी नाश न हो उसे अस्तित्व गुण कहते है।

२२ द्रव्य का नाश होने से क्या समझे ?

(क) न कोई नया द्रव्य उत्पन्न हो सकता है और न कोई पहिला द्रव्य नष्ट हो सकता है। जितने भी द्रव्य है वे अनादि काल से स्वत सिद्ध है, उतने ही रहेगे। उनमे हानि वृद्धि नही हो सकती।

(ख) अस्तित्व गुण के कारण द्रव्य ही नही बल्कि उसके गुण भी विनष्ट नही हो सकते, न ही हीनाधिक हो सकते है, क्योकि गुणो का समूह द्रव्य है।

२३ आप की आयु कितनी है ?

मैं अनादि अनन्त हूँ, क्योकि अस्तित्व गुण के कारण मैं कभी मरा न मरूगा।

२४. आदिनाथ भगवान के समय में क्या आप थे ?

हा था, क्योकि अस्तित्व गुण के कारण मेरा कभी भी विनाश नही हुआ।

२५. क्या भगवान महावीर आज भी है ?

हा, है क्योकि अस्तित्व गुण के कारण उनका कभी नाश नही हुआ।

२६. द्रव्य की उत्पत्ति स्थिति व संहार करने वाला कौन ?

अस्तित्व गुण के कारण द्रव्य स्वय अनादि सिद्ध है। न नया बनता है न नष्ट होता है। स्वय रक्षित की रक्षा का प्रश्न नही। अत उसकी उत्पत्ति स्थिति व सहार करने वाला कोई नही।

२७ अस्तित्व गुण को जानने का क्या प्रयोजन ?
व्यक्ति ज्ञाता दृष्टा व निर्भय बन जाता है। न किसी वस्तु को बनाने बिगाड़ने का विकल्प आ सकता है और न मरने का भय हो सकता है।

२८ द्रव्य को सत् क्यों कहते हैं ?
अस्तित्व गुण युक्त होने से द्रव्य 'सत्' सज्ञा को प्राप्त है।

२६ द्रव्य मे सभी गुण सभी अवस्थाओं मे रहते हैं। इसका क्या कारण है ?
अस्तित्व गुण के कारण जिस प्रकार द्रव्य नष्ट नही होता उसी प्रकार गुण भी नष्ट नही होते, क्योकि गुणो का समूह ही द्रव्य है। उनके नष्ट होने पर उनका समूह रूप द्रव्य कैसे रह सकता है।

(३. वस्तुत्व गुण)

(३०) वस्तुत्व गुण किसको कहते हैं ?
जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य मे अर्थ क्रिया हो उसे वस्तुत्व गुण कहते हैं, जैसे—घट की क्रिया जलधारण।

३१ अर्थ क्रिया से क्या समझे ?
प्रत्येक द्रव्य का कोई न कोई प्रयोजनभूत कार्य या Function अवश्य होता है, भले हमारे लिये इष्ट हो अथवा अनिष्ट या व्यर्थ। जैसे इन तृणो का भी प्रयोजन है पशुओ का पेट भरना अथवा चटाई आदि बनाने मे काम आना।

३२ वस्तुत्व शब्द का क्या अर्थ है ?
वस्तुत्व अर्थात् वास देने का स्वभाव।

३३ वस्तुत्व गुण के क्या क्या लक्षण हो सकते हैं ?
तीन प्रधान लक्षण हो सकते है—
(क) प्रत्येक द्रव्य मे अर्थ क्रिया होना।
(ख) प्रत्येक द्रव्य स्वचतुष्टय से सत् है और परचतुष्टय से असत्।

(ग) प्रत्येक द्रव्य अपने गुण पर्यायों को वास देता है ।

३४. वस्तुत्व गुण के उपरोक्त लक्षणों का समन्वय करो ।

अर्थ क्रिया या प्रयोजनभूत कार्य द्रव्य मे तभी सम्भव है जबकि उसमे अपने गुण पर्याय बसते हो तथा सदा अपने स्वरूप की रक्षा करता हुआ अन्य रूप न हो जाता हो । यदि द्रव्य स्वोचित कार्य को छोडकर अन्योचित कार्य करने लगे तो घट भी कल को पट का कार्य करने लगेगा और इस प्रकार घट भी पट बन जायेगा और पट मठ बन बैठेगा । द्रव्यो के स्वभाव की कोई व्यवस्था न बन सकेगी । अत प्रयोजनभूत कार्य से ही स्व-चतुष्टय मे स्थिति तथा गुण पर्यायो का वास जाना जाता है ।

३५ कूड़ा कचरा निकम्मा है ?

उसका भी प्रयोजनभूत कार्य है वदबू देना तथा मच्छर पैदा करना ।

३६ वस्तुत्व गुण जानने का क्या प्रयोजन ?

मेरा प्रयोजनभूत कार्य जानना देखना है, अत इसके अतिरिक्त अन्य कुछ करने का विकल्प व्यर्थ है ।

३७ भैया ! मै बीमार हूं, अतः मुझसे कोई काम नहीं होता ।

ऐसा नही है, क्योकि इस अवस्था मे भी जानने देखने का कार्य हो ही रहा है ।

३८. द्रव्य का नाम वस्तु क्यों पड़ा ?

वस्तुत्व गुण युक्त होने से द्रव्य 'वस्तु' कहलाता है ।

३९ आप जीव हैं शरीर नहीं ऐसा क्यों ?

मेरा और शरीर के प्रयोजनभूत कार्य जुदा-जुदा है, मेरा जानना देखना और उसका क्षीर्ण होना । अत. मैं अपने स्व-चतुष्टय में स्थित हूँ और शरीर मेरे स्वचतुष्टय से न्यारा है ।

(४. द्रव्यत्व गुण)

(४०) द्रव्यत्व गुण किसे कहते हैं ?

जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य सदा एकसा न रहे और उसकी

पर्याय निरन्तर बदलती रहे ।

४१ **द्रव्य एकसा न रहने से क्या समझे ? क्या वह बदल कर अन्य रूप हो जाता है ?**
द्रव्य नही वदलता, वल्कि उसकी हालते जल प्रवाहवत् सदैव वदलती रहती हैं ।

४२. **'द्रव्यत्व' शब्द से क्या तात्पर्य ?**
द्रव्यत्व अर्थात् प्रवाहित रहने या रिसते रहने का स्वभाव ।

४३ **द्रव्यत्व व वस्तुत्व गुण मे क्या अन्तर है ?**
वस्तुत्व गुण द्रव्य के कार्यक्षेत्र की सीमा बाँधता है कि वह अपना ही प्रयोजनभूत कार्य कर सकेगा, प्रत्येक कार्य नही । द्रव्यत्व गुण वस्तु के परिणमन स्वभाव की सिद्धि करता है, अर्थात् एक क्षण को भी रुके विना निरन्तर द्रव्य की अवस्थायें (पर्यायें) सूक्ष्म रूप से अन्दर ही अन्दर वदलती रहती है, ऐसा स्वभाव ही है ।

४४ **द्रव्यत्व गुण की व्याख्या मे निरन्तर शब्द का क्या महत्व ?**
परिणमन मे एक क्षण का भी अन्तराल नही पडता । एक क्षण को भी परिणमन नही रुकता । जल प्रवाहवत् उसकी सन्तति या धारा बरावर वनी रहती है । यही 'निरन्तर' शब्द वताता है ।

४५ **द्रव्य को 'द्रव्य' संज्ञा क्यो दी गई ?**
द्रव्यत्व गुण युक्त होने के कारण पदार्थ 'द्रव्य' कहलाता है ।

४६ **माता रो रही है कि उसका पुत्र मर गया । वह क्या भूलती है ?**
वह अस्तित्व व द्रव्यत्व गुण को भूल रही है । अस्तित्व गुण के कारण वह उसके पुत्र नाम वाला जीव नष्ट नही हुआ । द्रव्यत्व गुण के कारण केवल उसकी अवस्था बदली हे ।

४७. **संसार असार है यहां कुछ भी स्थायी नहीं । क्या भूल है ?**
अस्तित्व व द्रव्यत्व गुणो की भूल है । अस्तित्व गुण की तरफ देखे तो ससार नाम की कोई चीज ही नही हे । सत्ताधारी

छ मूल पदार्थ त्रिकाल स्थायी है। संसार नाम से जो प्रतीति मे आ रहा है वह उसी त्रिकाली सत् का परिणमन मात्र है। द्रव्यत्व गुण की तरफ देखे तो पर्याय रूप होने से ससार का स्वभाव ही ऐसा है, यही उसका सौन्दर्य है और यही सार।

४८ जगत की उत्पत्ति स्थिति संहार करने वाला कौन है ?

जगत नाम द्रव्य का नही पर्याय का है। नवीन पर्याय का उत्पाद और पुरानो का व्यय होते रहना ही उसका स्वभाव है। अत जगत की उत्पत्ति व संहार करना द्रव्यत्व गुण का कार्य है। मूल छ द्रव्य रूप से वह त्रिकाल ध्रुव है। अस्तित्व गुण ही उनकी स्थिति की रक्षा करता है।

४६ 'ब्रह्म सत् जगत् मिथ्या' क्या भूल है ?

अस्तित्व व द्रव्यत्व गुण की भूल है। अस्तित्व गुण के कारण कुछ भी मिथ्या नही, क्योकि उसे देखने पर जगत नही मूल छ पदार्थ दिखाई देते है, जो त्रिकाल सत् है, उनकी समष्टि ही 'ब्रह्म' शब्द वाच्य जाननी चाहिये। द्रव्यत्व गुण की तरफ देखने पर उसकी पर्यायभूत इस जगत का स्वभाव ही अस्थिर है, फिर उसमे मिथ्यापना क्या।

५० लोक मे कोई भी वस्तु टिकती प्रतीत क्यों नहीं होती ?

क्योंकि द्रव्यत्व गुण के कारण प्रत्येक पदार्थ नित्य परिणमन कर रहा है।

५१. अकृत्रिम चैत्यालय व सूर्य बिम्ब आदि त्रिकाल नित्य कहे जाते है ?

स्थूल रूप से नित्य दीखने से ऐसा कहा जाता है। वास्तव मे द्रव्यत्व गुण के कारण उनके भीतर भी बराबर सूक्ष्म परिणमन हो रहा है।

५२ संगेमरमर के इस स्तम्भ मे कोई परिवर्तन नहीं है ?

ऐसा वास्तव मे नही है। इसमे भी बराबर सूक्ष्म परिवर्तन हो रहा है, अन्यथा सहस्र वर्ष पश्चात् यह जर्जरित होकर समाप्त न

हो जाता। प्रतिक्षण नये से पुराना होता हुआ यह जर्जरित हुआ जा रहा है।

५३. द्रव्यत्व गुण को जानने से क्या प्रयोजन ?

(क) जगत मे निराशा के स्थान पर सौन्दर्य के दर्शन करना।

(ख) अपनी वर्तमान अज्ञान दशा से निराश न होना, क्योकि यह भी बदल कर एक दिन सम्यक्त्व पूर्वक तेरा परमार्थ कल्याण बन बैठेगा।

(५. प्रमेयत्व गुण)

५४ प्रमेयत्व गुण किसे कहते हैं ?

जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य किसी न किसी के ज्ञान मे विलय हो, उसे प्रमेयत्व गुण कहते है।

५५. 'किसी न किसी के ज्ञान मे' इससे क्या समझे ?

परोक्ष का नही तो प्रत्यक्ष का अथवा छद्मस्थ के ज्ञान का नही तो सर्वज्ञ के ज्ञान का विषय अवश्य होगा।

५६ 'प्रमेयत्व' शब्द का क्या अर्थ ?

प्रमाण अर्थात सच्चे ज्ञान मे आने की योग्यता ही प्रमेयत्व है।

५७ यह बात अत्यन्त गुप्त रखना, देखना कोई जानने न पावे ?

ऐसा नही हो सकता, क्योकि अपने प्रमेयत्व गुण के कारण वह बात अवश्य किसी न किसी के द्वारा जानी जा रही है।

५८ अलोकाकाश मे तो कोई नहीं, बताओ उसे कौन जाने ?

अपने प्रमेयत्व गुण के कारण वह सर्वज्ञ के ज्ञान का विषय हो रहा है।

५९ जगत मे कितने पदार्थ जाने जाने योग्य है ?

सत्ताभूत सभी पदार्थ जाने जाने योग्य हैं, क्योकि सभी प्रमेयत्व गुण युक्त है।

६० द्रव्य जाना जाये पर पर्याय नही ?

नही, द्रव्य गुण पर्याय तीनो ही जाने जाते हैं, क्योकि तीनो पृथक पृथक नही अखण्ड है। द्रव्य का प्रमेयत्व गुण ही उसके अन्य गुणों व पर्यायें को जनवाने मे कारण है।

६१ रूपी पदार्थ ही जाने जा सकते हैं अरूपी नही ?
नही, अरूपी पदार्थ यद्यपि इन्द्रिय ज्ञान गोचर नही पर योगज ज्ञान विशेष द्वारा अवश्य जाने जा रहे है। क्योकि उनमे भी प्रमेयत्व गुण है।

६२ जानने वाला स्वयं अपने को कैसे जाने ?
जानने वालो मे दो गुण है—ज्ञान व प्रमेयत्व। ज्ञान द्वारा वह जानता है और प्रमेयत्व द्वारा जनाया जाता है। इस प्रकार स्वय अपने को भी जानता है।

६३. ज्ञान होने व ज्ञात होने की ये दो शक्तियें किसमें हैं ?
जीव मे।

६४. प्रमेयत्व गुण को जानने का क्या प्रयोजन ?
समस्त विश्व अपने प्रमेयत्व द्वारा मेरे ज्ञान को अपना सर्वस्व अर्पण को स्वय तैयार है, फिर मैं जगत के पदार्थों के जानने के प्रति व्यग्र क्यो होऊ। साक्षी रूप से स्थित रहते हुए, ज्ञान को सहज अपना कार्य करने दूं।

(६. अगुरुलघुत्व गुण)

(६५) अगुरुलघुत्व गुण किसे कहते हैं ?
जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य की द्रव्यता कायम रहे अर्थात्—
(क) एक द्रव्य दूसरे द्रव्य रूप न परिणमै।
(ख) एक गुण दूसरे गुण रूप न परिणमै।
(ग) एक द्रव्य के अनेक या अनन्त गुण बिखर कर जुदे जुदे न हो जावे, उसको अगुरुलघुत्व गुण कहते है।

६६ 'अगुरुलघु' शब्द का क्या तात्पर्य ?
अ+गुरु+लघु। अ=नही, गुरु=भारी या बडा; लघु=हलका या छोटा। कोई भी द्रव्य प्रमाण या सीमा को उल्लघन करके भारी या हलका अथवा छोटा या बडा नही बन सकता।

६७. 'द्रव्य की द्रव्यता कायम रहे' इससे क्या समझे ?
द्रव्य गुणो का समूह है। उसकी द्रव्यता इसी मे है कि उसके

सर्व गुण सुरक्षित रहे; उनमे से एक भी न घटे न बढे न बदले। गुण घटने से वह लघु हो जायेगा, बढने से गुरु बन जायेगा और बदलने से वह द्रव्य ही बदलकर अन्य रूप हो जायेगा।

६८ अगुरुलघु के तीनों लक्षणो का समन्वय करो।

(क) द्रव्य परिणमन अवश्य करता है पर अन्य द्रव्य रूप से नही, जैसे कि जीव अजीव रूप नही हो सकता, अथवा अन्य जीव रूप भी नही हो सकता। यदि ऐसा होने लगे सभी द्रव्य धीरे धीरे अन्यरूप होकर अपनी सत्ता खो बैठे और विश्व द्रव्य-शून्य हो जाये, जो असम्भव है।

(ख) द्रव्य गुणो का समूह तभी रह सकता है जब कि वे भी द्रव्य की भाति एक दूसरे रूप न परिणमे, यथा रूप गुण रस गुण न बन जायें। यदि ऐसा होने लगे तो सभी गुण धीरे धीरे अन्य रूप होकर अपनी सत्ता खो बैठे और द्रव्य गुण-शून्य हो जाये, जो असम्भव है।

(ग) इसी प्रकार द्रव्य गुणो का समूह तभी रह सकता है जब कि उसके गुण उसे छोडकर बाहर न निकल सके। यदि ऐसा होने लगे तो सब गुण धीरे धीरे उसका त्याग कर देगे और वह गुण-शू·य हो जायेगा, जो असम्भव है। अथवा लघु हो जायेगा और वे गुण उसे छोडकर जिस दूसरे द्रव्य का आश्रय लेंगे वह गुरु हो जायेगा। गुणो का निराश्रय रहना सम्भव नही।

६९ दूध पानी मिलकर एकमेक हो गए ?

नही, दोनो अपने अपने स्वरूप मे स्थित हैं। दूध जलरूप या जल दूधरूप नही हो गया है। केवल सश्लेष बन्ध के कारण एक दीखते है। अगुरुलघु गुण के कारण दोनो की सत्ता पृथक २ है।

७० प्रत्येक द्रव्य की स्वतत्रता की मर्यादा काहे से है ?

अगुरुलघुत्व गुण से है, क्योकि उसी के कारण उसकी सत्ता

सुरक्षित है। वह न हो तो बडे द्रव्य छोटे को निगल जाये।

७१ द्रव्य की स्वतंत्रता का क्या अर्थ ?

द्रव्य अपने स्वरूप मे स्थित रहे, अन्य रूप न बने।

७२. द्रव्य स्वतन्त्र रूप से शुद्ध अशुद्ध सब प्रकार के कार्य कर सकता है, ऐसा कहें तो ?

नही, वस्तु स्वतन्त्रता का यह अर्थ नही है कि वह जो चाहे कर सके। कोई भी द्रव्य अपने कार्यक्षेत्र की सीमा को उल्लघन नही कर सकता। यही उसकी स्वतन्त्रता है, क्योकि अन्य का कार्य करने का अर्थ है उसे अपने आधीन करना।

प्रत्येक द्रव्य अपने योग्य ही प्रयोजनभूत कार्य कर सकता है, दूसरे के योग्य नही, क्योकि ऐसा होने लगे उसकी शक्ति मे बदल कर दूसरे रूप हो जाये जो असम्भव है। अगुरुलघुत्व के द्वितीय लक्षण से यह बात जानी जाती है।

७३ मुक्त आत्माये तेज में तेजवत् मिलकर एक हो जाती है ?

नही, वे एक दूसरे के क्षेत्र मे अवगाह भले पा ले पर उनकी अपनी अपनी सत्ता विनष्ट नही होती, जैसे कि दूध मे जल व खाण्ड की सत्ता। अगुरुलघुत्व के प्रथम लक्षण से यह बात जानी जाती है।

७४. गुरु ने मुझे ज्ञान दिया ?

गुरुने अपना ज्ञान मुझे नही दिया, मेरा ही ज्ञान गुण उनके निमित्त से मुझमे विकसित हुआ है। गुरु अपना ज्ञान देते वे लघु हो जाते और उनका ज्ञान मुझमे आने से मैं गुरु हो जाता। गुरु का ज्ञान उनसे पृथक नही हो सकता। अगुरुलघुत्व के तृतीय लक्षण से यह बात जानी जाती है।

७५ सम्यग्दृष्टि को चारित्रवान होना ही चाहिये ?

नही, सम्यग्दर्शन व चारित्र दोनो गुण पृथक २ है, इनका कार्य भी स्वतत्र है। यदि सम्यक्त्व गुण चारित्र गुण को बाध्य करने लगे तो चारित्र गुण सम्यक्त्व बन जाये। अगुरुलघुत्व गुण के

कारण एक गुण दूसरे गुण रूप नही हो सकता। अगुरुलघुत्व के द्वितीय लक्षण पर से यह बात जानी जाती है।

७६ बूढे व्यक्ति मे ज्ञान व विवेक नही रहता ?

ऐसा नहीं है, क्योंकि अगुरुलघुत्व गुण के कारण ये दोनो गुण उससे जुदा नही हो सकते। अगुरुलघुत्व के तृतीय लक्षण पर से यह जाना जाता है।

७७ एकेन्द्रिय जीव मे गुण कम होते हैं और पंचेन्द्रिय मे अधिक।

नही, सभी जीवो मे गुण समान होते है, भले ही किसी जीव मे वे कम व्यक्त और किसी मे अधिक। अगुरुलघुत्व गुण के कारण किसी के भी उसमे से निकल नही सकते और न किसी मे प्रवेश कर सकते हैं। अगुरुलघुत्व के तृतीय लक्षण पर से यह बात जानी जाती है।

७८ परमाणु मे स्पर्श के चार गुण कम होते हैं और स्कन्ध मे अधिक ऐसा आगम मे कहा है ?

परमाणु व स्कन्ध के गुणो मे हीनाधिकता नही है, बल्कि गुणो की पर्यायो के व्यक्त होने मे हीनाधिकता है। दूसरी बात यह भी है कि हलका भारी कठोर व कोमल ये चार जो स्पर्श कहे गये है वे स्पर्श गुण की पर्याय नही हैं, बल्कि स्कन्ध मे एक दूसरे की अपेक्षा रखकर देखे जाने वाले धर्म है। अगुरुलघु गुण के कारण गुण घट बढ नही सकते, यह बात अगुरुलघुत्व के तृतीय लक्षण पर से जानी जाती है।

७९ अगुरुलघु गुण से तुम्हारा क्या प्रयोजन ?

मैं जीव हूँ शरीर नही। सिद्ध भगवान के समान ही पूर्ण गुणो का भण्डार हूँ, इसलिये निराश न होकर शरीर मे से अपनत्व बुद्धि निकालूं और अपने स्वरूप के दर्शन करू।

(७ प्रदेशत्व गुण)

(८०) प्रदेशत्व गुण किसे कहते हैं ?

जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य का कुछ न कुछ आकार अवश्य हो।

८१ 'आकार' से क्या समझें ?

द्रव्य की कुछ न कुछ लम्बाई चौडाई मोटाई अथवा गोल चौकोर तिकोन आदि आकृति अवश्य होनी चाहिये, क्योकि सर्वथा आकृति रहित पदार्थ सम्भव नही । वह आकार बडा हो या छोटा यह दूसरी वात ।

८२ अमूर्तीक द्रव्यों का कोई आकार नहीं होता ?

नही, अमूर्तीक द्रव्यो का भी आकार अवश्य होता है, परन्तु मूर्तीक के आकारवत् वह दिखाई नही देता ।

८३ आत्मा को निराकार कहते हैं ?

निराकार का अर्थ यह नही है कि उसका द्रव्य आकार रहित है, बल्कि यह है कि उसे भावप्रधान होने से उसे ज्ञान स्वरूप या चिन्मात्र माना गया है । चेतन प्रकाश निराकार है ।

८४ क्या आत्मा भी साकार है ?

हा, उसका द्रव्य अर्थात प्रदेशात्य विभाग अवश्य कुछ न कुछ लम्बी चौडी मोटी छोटी आकृति वाला है ।

८५ आत्मा का आकार कैसा है ?

जैसे शरीर मे रहता है वैसा ही उसका आकार भी हो जाता है, जैसे घटाकाश का आकार भी घट जैसा होता है ।

८६. प्रदेशत्व गुण का क्या कार्य है ?

तीन कार्य है—आकार बनाना, परिस्पन्दन करना तथा क्रिया करना ।

८७ आकार परिस्पन्दन व क्रिया में क्या अन्तर है ?

आकार लम्बाई चौडाई मोटाई को कहते है और परिस्पन्दन प्रदेशो के भीतरी कम्पन को । परिस्पन्दन के कारण आकार मे परिवर्तन होता है । क्रिया तो प्रदेश प्रथमरूप, अखड द्रव्य के गमनागमन का नाम है ।

८८. प्रदेशत्व गुण को मानने की क्या आवश्यकता ?

द्रव्य गुणो व पर्यायो का आधार है। आधार या आश्रय को

अवश्य प्रदेशवान होना चाहिये, अन्यथा गुण व पर्याय कहा व कैसे ठहरें। अत द्रव्य को प्रदेशवान होना ही चाहिये।

८९. द्रव्य गुण व पर्याय तीनों के आकारों मे क्या अन्तर ?

तीनो का आकार समान है, क्योकि गुण व पर्याय द्रव्य के सर्व भागो मे व्यापकर रह रहे है।

९० आकार परिवर्तन किन द्रव्यों मे होता है और क्यो ?

जीव व पुद्गल के ही आकारो मे परिवर्तन होता है, क्योकि क्रियावान होने से उनके प्रदेशों मे ही परिस्पन्दन होता है, शेष चार मे नही।

(८. विशेष गुण)

(९१) विशेष गुण किसे कहते है और कौन कौन से है ?

जो सर्व द्रव्यो मे न व्यापे (अपने-अपने द्रव्यो मे रहे) उसको विशेष गुण कहते है। जैसे—

जीवमे चेतना, सम्यक्त्व, चारित्र (सुख वीर्य) आदि; पुद्गल मे स्पर्श रस गन्ध वर्ण,

धर्म द्रव्य मे गति हेतुत्व; अधर्म द्रव्य मे स्थिति हेतुत्व, आकाश द्रव्य मे अवगाहना हेतुत्व, और काल द्रव्य मे वर्तना हेतुत्व, वगैरह।

९२. रूप गुण किसे कहते हैं ?

चक्षु इन्द्रिय के विषय को अर्थात वर्ण को रूप गुण कहते है।

९३ रूप कितने प्रकार का है ?

पाच प्रकार का—काला, पीला, लाल, नीला, सफेद।

९४ क्या नेत्र इन्द्रिय का विषय वर्ण ही होता है ?

नही वर्ण व आकार दोनो नेत्र इन्द्रिय के विषय हैं परन्तु प्रधान होने से वर्ण को ही रूप गुण कहते है आकार को नही, क्योकि आकार तो कदाचित हाथो से टटोलकर भी जाना जा सकता है, पर वर्ण सर्वथा नेत्र का ही विषय है।

९५. रस गुण किसे कहते हैं ?
जिह्वा इन्द्रिय के विषय को रस गुण कहते है, अर्थात जो चखने मे आये सो रस है।

९६. रस कितने प्रकार का होता है ?
पाच प्रकार का है—खट्टा, मीठा, कडुआ, कसायला व चरपरा।

९७ क्या जिव्हा का विषय चखना ही है ?
नही बोलना भी है, पर रस गुण चखे जाने वाले विषय को ही कहते है।

९८. गन्ध किसे कहते है ?
घ्राण इन्द्रिय के विषय को गन्ध कहते है। अर्थात जो सूंघकर जाना जाय।

९९ गन्ध कितने प्रकार का होता है ?
दो प्रकार का —सुगन्ध व दुर्गन्ध।

१००. स्पर्श गुण किसे कहते हैं ?
स्पर्शन इन्द्रिय के विपय को स्पर्श गुण कहते है, अर्थात जो छू कर जाना जाये।

१०१. स्पर्श गुण कितने प्रकार का होता है ?
आठ प्रकार का—ठण्डा, गर्म, चिकना, रूखा, हलका, भारी, कठोर, कोमल।

१०२. गति हेतुत्व गुण किसे कहते है ?
जीव व पुद्गल को गमन मे सहकारी धर्मास्तिकाय के गुण को गति हेतुत्व कहते है।

१०३ स्थिति हेतुत्व गुण किसे कहते है ?
जीव व पुद्गल को गति पूर्वक स्थिति करने में सहकारी अधर्मास्तिकाय के गुण को स्थिति हेतुत्व कहते है।

१०४. अवगाहना हेतुत्व किसे कहते हैं ?
सर्व द्रव्यों को अवकाश देने मे समर्थ आकाश के गुण को अवगाहना हेतुत्व कहते है।

१०५. वर्तना हेतुत्व किसे कहते है ?
सर्व द्रव्यों को परिणमन करने में सहकारी काल द्रव्य के गुण को वर्तना हेतुत्व कहते है ।

१०६. गति हेतुत्व, स्थिति हेतुत्व, अवगाहना हेतुत्व व वर्तना हेतुत्व कितने कितने प्रकार के हैं ?
ये केवल एक-एक प्रकार के ही होते हैं ।

१०७. क्या गति हेतुत्व गुण अपने लिये भी निमित्त हो सकता है ?
नही, क्योंकि वह जीव व पुद्गल की गति मे निमित्त होता है, स्वय क्रियाविहीन होने से अपने को निमित्त नही हो सकता ।

१०८ क्या रस व गति हेतुत्व गमन कर सकते हैं ?
द्रव्य से पृथक होकर तो गुण का गमन सम्भव नही, हॉ गतिमान द्रव्य के साथ ही उसका गुण भी अवश्य गमन करता है । गतिमान होने से पुद्गल के साथ रस का गमन सम्भव है पर गति विहीन होने से धर्मास्तिकाय के गति हेतुत्व का गमन सम्भव नही ।

१०९ सभी पुद्गलो मे चारो गुण पाये जाते हैं या हीनाधिक भी ?
सभी पुद्गलो मे वे परमाणु हो या स्कन्ध रसादि चारो गुण होते है ।

११० जल में गन्ध, अग्नि मे गन्ध व रस और वायु मे रूप रस गन्ध नही पाये जाते ।
ऐसा वास्तव मे नही । स्थूल व्यक्ति न होने मे स्थूल इन्द्रियो द्वारा उनका ग्रहण वहा भले न हो, परन्तु वास्तव मे वे वहा है अवश्य: क्योकि अगुरुलघुत्व के कारण वे पृथक नही हो सकते ।

१११ परमाणु मे हलका भारी व कठोर नर्म स्पर्श नहीं होता ?
यह ठीक है, परन्तु ये स्पर्श की पर्याय है, गुण नही । इससे भी अधिक कहे तो ये केवल आपेक्षिक धर्म है जो स्कन्ध मे देखे जा सकते है, परन्तु स्पर्श गुण की पर्याय नही है । स्पर्श का ही विषय होने से इन्हे स्पर्श गुण की पर्याय कहने का उपचार है ।

११२ ऐसे विशेष गुण बताओ जो दो जाति के द्रव्यों में हों।

विशेष गुण अपनी जाति के द्रव्यों मे ही रहता है, इसलिये दो जाति के द्रव्यो मे एक विशेष गुण नही पाया जा सकता।

नोट —(जीव के गुणो के लिये आगे देखो पृथक अधिकार)

(६. अनुजीवी प्रतिजीवी गुण)

(११३) अनुजीवी गुण किसे कहते हैं ?

भाव स्वरूप गुणो को अनुजीवी गुण कहते है, जैसे जीव में सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, चेतना और पुद्गल में स्पर्श रस गन्ध वर्ण आदि।

(११४) प्रतिजीवी गुण किसे कहते हैं ?

वस्तु के अभावस्वरूप धर्म को प्रतिजीवी गुण कहते है जैसे— नास्तित्व, अमूर्तत्व, अचेतनत्व वगैरह।

११५ भाव स्वरूप व अभाव स्वरूप से क्या समझे ?

जिन गुणो की प्रतीति व व्याख्या स्वतन्त्र रूप से हो सके है वे भाव स्वरूप गुण है जैसे ज्ञान, रस आदि। जिन धर्मों की प्रतीति व व्याख्या स्वतन्त्र रूप से न हो सके बल्कि अन्य गुणो का प्रतिषेध करके ही जिनका परिचय दिया जाना सम्भव हो वे अभावस्वरूप धर्म है, जैसे वस्तु मे परचतुष्टय का अभाव ही उसका नास्तित्व धर्म तथा रूप रसादि का अभाव ही अमूर्तित्व धर्म है। वास्तव प्रतिजीवी नाम से कहे जाने वाले ये सब गुण नही 'धर्म है, क्योकि अपेक्षा वश जाने जाते है, स्वतन्त्र सत्ता वाले नही है। अनुजीवी गुण भी है और धर्म भी।

११६. अनुजीवी या प्रतिजीवी गुण सामान्य है या विशेष ?

दोनो ही दोनो प्रकार के है—ज्ञान रस आदि विशेष अनुजीवी गुण है और चेतनत्व मूर्तत्व आदि सामान्य। सूक्ष्मत्व अगुरुलघुत्व आदि छहो द्रव्यो मे पाये जाने से सामान्य प्रतिजीवी गुण है। अचेतनत्व अमूर्तत्व आदि विशेष भी है और सामान्य भी। यहा द्रव्यो मे न पाये जाने से विशेप है और पाच-पाच मे पाये जाने से सामान्य।

(११७) जीव के अनुजीवी गुण कौन से है ?

चेतना, सम्यक्त्व, चारित्र, सुख वीर्य, भव्यत्व, अभव्यत्व, जीवत्व, वैभाविक, कर्तृत्व, भोक्तृत्व वगैरह अनन्त गुण है।

(११८) जीव के प्रतिजीवी गुण कौन से हैं ?

अव्याबाधत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, सूक्ष्मत्व, नास्तित्व आदि।

११९ अजीव द्रव्यों के अनुजीवी गुण कौन से हैं ?

पुद्गल के—रूप रस गन्ध स्पर्श आदि। धर्म द्रव्य का गतिहेतुत्व, अधर्म द्रव्य का स्थिति हेतुत्व, आकाश द्रव्य का अवगाहना-हेतुत्व और काल द्रव्य का वर्तना हेतुत्व। इस प्रकार सब मिलकर अनन्त गुण हैं।

१२० अजीव द्रव्यो के प्रतिजीवी गुण कौन से हैं ?

अव्याबाधत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, सूक्ष्मत्व, नास्तित्व इत्यादि ये सब जीव व अजीव मे समान है। अचेतनत्व पाचो अजीव द्रव्यो मे समान हैं। अमूर्तत्व पुद्गलातिरिक्त शेष पाच द्रव्यो मे समान है।

२/४ जीव गुणाधिकार

(१. चेतना)

(१) चेतना किसको कहते हैं ?

जिसमे पदार्थो का प्रतिभास (प्रतिबिम्बित) हो उसको चेतना कहते है।

२ चेतन चेतना चैतन्य में क्या अन्तर है ?

चेतना स्वभाव है, उसका आधार जो जीव द्रव्य वह चेतन है। चेतन या चेतना के भाव को चैतन्य अर्थात चेतनत्व कहते है।

(३) चेतना के कितने भेद है ?

दो है—दर्शन चेतना और ज्ञान चेतना। (अथवा तीन ह— ज्ञान चेतना, कर्म चेतना और कर्मफल चेतना)

४ चेतना तथा दर्शन ज्ञान में क्या भेद है ?

चेतना गुण या स्वभाव है और दर्शन ज्ञान उसकी उपयोगात्मक पर्याये या व्यक्तिये ।

(५) उपयोग किसे कहते है ?

जीव के लक्षणरूप चैतन्यानुविधायी परिणाम को उपयोग कहते है (अर्थात चेतना की परिणति विशेष ही उपयोग शब्द वाच्य है)

(६) उपयोग के कितने भेद हैं ?

दो है—एक दर्शनोपयोग दूसरा ज्ञानोपयोग।

७. ज्ञानोपयोग व दर्शनोपयोग किसे कहते है ?
ज्ञेयो मे मवलित वाह्य चित्प्रकाश को ज्ञानोपयोग और अन्त-स्तत्वोपलब्धि रूप अन्तर्चित्प्रकाश को दर्शनोपयोग कहते है।
नोट'—विशेषता के लिये आगे पृथक-पृथक चर्चा की गई है।

८. ज्ञान चेतना किसको कहते हैं ?
साक्षी भाव से ज्ञेयो का जानना रूप ज्ञान चेतना, वीतरागी जनो मे ही सम्भव है।

९ कर्म चेतना किसे कहते हैं ?
अहकार रञ्जित कर्तृत्व व भोक्तृत्व के परिणाम कर्म चेतना है। यह सर्व रागी जीवों को होती हैं।

१० कर्म फल चेतना किसे कहते है ?
सुख दुख के कारण मिलने पर उनमे सुख दुख का वेदन करना रूप चेतना के परिणाम कर्म फल चेतना है। यह सामान्य रूप से सभी रागी जीवो को होती है, फिर भी प्रधानतया एकेन्द्रिय से असज्ञी पचेन्द्रिय तक के जीवो मे मानी गई है।

११ क्या संज्ञी जीवों को कर्मफल चेतना नहीं है ?
होती है, पर उनमे कर्म चेतना की प्रधानता है, क्योकि वे सुख दुख की कारणकूट सामग्री को अपने अनुकूल करने के प्रति ही सदा रत रहते है, असज्ञी पर्यंत के सर्व जीव उन्हे करने को समर्थ न होने से जैसा तैसा भी सुख दुख प्राप्त होता है भोग लेते है, अत वहाँ कर्मफल चेतना प्रधान है।

१२. प्रत्येक जीव प्रति समय कुछ न कुछ जानता तो है ही। तब क्या उन्हे ज्ञान चेतना होती है ?
नही, ज्ञान चेतना सर्व विकल्पो से अतीत सहज ज्ञाता द्रष्टा-मात्र भाव को कहते है। साधारण-जीवो का जानना इष्टा-निष्ट बुद्धिपूर्वक प्रयत्न विशेष के द्वारा होने से वैसा नही होता।

१३ आपको अब पढ़ते समय कौन सी चेतना है और क्यो ?
कर्म चेतना है, क्योकि ज्ञान प्राप्ति के विकल्प सहित प्रयत्न विशेष द्वारा हो रही है।

१४ आगमोपयुक्त भी आपको ज्ञान चेतना क्यों नहीं ?
क्योंकि कर्ता बुद्धि सहित है, ज्ञाता दृष्टा भाव रूप नही है ।

१५. संचेतना व सवेदना में क्या अन्तर है ?
सचेतना पदार्थो के प्रतिभास रूप से होती है और सवेदना सुख दुख रूप से प्रतीति मे आती है ।

(२. ज्ञानापयोग सामान्य)

(१६) ज्ञान चेतना (ज्ञानोपयोग) किसको कहते है ?
अवान्तर सत्ता विशिष्ट विशेष पदार्थ को विषय करने वाली चेतना (उपयोग) को ज्ञान चेतना या ज्ञानोपयोग कहते है ।

(१७) अवान्तर सत्ता किसे कहते है ?
किसी विवक्षित पदार्थ की सत्ता को अवान्तर सत्ता कहते है (जैसे मनुष्य, घर, पट आदि) ।

१८. ज्ञानोपयोग के कितने लक्षण प्रसिद्ध है ?
चार है—विशेष ग्रहण, साकार ग्रहण, सविकल्प ग्रहण और वाह्य चित्प्रकाश ।

१९. विशेष ग्रहण से क्या समझे ?
यह मनुष्य है, यह घर है, यह ज्ञानी है, यह धर्मात्मा है, यह काला है, यह पीला है इस प्रकार के विकल्पो सहित जानने को विशेष ग्रहण कहते है ।

२० साकार व सविकल्प ग्रहण से क्या समझे ?
देशकालावच्छिन्न पदार्थ साकार होता है । मनुष्य पशु घर पट आदि पदार्थ विशेष आकृति वाले होने से देशावच्छिन्न है और बड़ा छोटा अब तक आजकल आदि के विकल्पो सहित पदार्थ कालावच्छिन्न है । ज्ञानी धर्मात्मा काला पीला आदि विकल्पो सहित भावावच्छिन्न है । तात्पर्य यह कि विशेष आकार प्रकारो वाले पदार्थ साकार व सविकल्प है । ज्ञान मे उनका ग्रहण साकार ग्रहण है ।

'मै उस पदार्थ को जानू', अव 'इसे छोडकर इसे जानू' ऐसा प्रयत्न विशेष विकल्प कहलाता है। ऐसे विकल्प सहित जानने को सविकल्प ग्रहण कहते है।

२१. बाह्य चित्प्रकाश से क्या समझे ?

अन्तरग चेतना का झुकाव ज्ञेयो के प्रति रहना अर्थात उसका ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय रूप त्रिपुटी युक्त हो जाना ही बाह्यचित्प्रकाश है, क्योकि एक तो इस प्रकार के उपयोग मे बाह्य पदार्थो का ही प्रतिभास होता है और दूसरे अन्तर्चेतना का प्रयत्न व झुकाव बाहर की ओर होता है।

२२. तो क्या ज्ञानोपयोग स्वात्म ग्रहण को समर्थ नहीं ?

उसका आकृति सापेक्ष द्रव्यात्मक रूप ही उसका विषय है और सामान्य अन्तर्चेन प्रकाश के लिये वह भी स्वात्म नही परात्म ही है।

२३. ज्ञान के चारो लक्षणो का समन्वय करो।

विशेष ग्रहण स्वय विकल्पात्मक है। विकल्पो मे ज्ञेय पदार्थो के प्रति लक्ष्य रहने से वह साकार है। प्रतिबिम्ब रूप से बाह्य पदार्थ ही ज्ञान मे प्रतिभाषित होते है स्वय आत्मा नही, जैसे कि दर्पण मे बाह्य पदार्थ ही प्रतिबिम्बित होते है स्वय दर्पण नही। इसलिये उन आकारो या प्रतिबिम्बो का ग्रहण बाह्य चित्प्रकाश कहलाता है। अथवा रागी जनो के जानने का ढग बाह्य ज्ञेयो के प्रति लक्ष्य करके प्रयत्न पूर्वक होता है, इसीसे वह बाह्य चित्प्रकाश कहलाता है।

२४. ज्ञान व अनुभव में क्या अन्तर है ?

'मै इस पदार्थ को जानता हूँ' ऐसा बाह्य की ओर का विकल्प ज्ञान कहलाता है। और उस पदार्थ के निमित्त से जो सुख दुख की अन्तर्प्रतीति होती है वही उस पदार्थ का अनुभव कहलाता है। जैसे आख से अग्नि का ज्ञान होता है और हाथ द्वारा उसे छूने पर हाथ जलने के दु ख की प्रतीति उसका अनुभव है।

२५. अनुभव गुण का होता है या पर्याय का ?

पर्याय का होता है, क्योकि पर्याय के साथ ही उस उस समय उपयोग तन्मय होता है। द्रव्य व गुण तो पर्याय के कारण रूप से केवल जाने जाते हैं।

२६. क्या ज्ञान गुण अपने को भी जान सकता है ?

स्व पर प्रकाशक होने से अपने को भी जानना आवश्यक है, पर ज्ञेय रूप से प्राप्त व आत्मा का आकार भी चित्स्वभाव की अपेक्षा परपने को ही प्राप्त होता है।

२७. ज्ञान चेतना (ज्ञानोपयोग) कितने प्रकार की है ?

दो प्रकार की—परोक्ष व प्रत्यक्ष।

(२८) परोक्ष ज्ञान किसे कहते है ?

जो दूसरे की सहायता से (अर्थात इन्द्रिय मन व प्रकाशादि की सहायता से) पदार्थ को स्पष्ट जाने।

२९ परोक्ष ज्ञान के कितने भेद हैं ?

दो है—एक मति ज्ञान दूसरा श्रुत ज्ञान।

(३०) प्रत्यक्ष ज्ञान किसे कहते है ?

जो पदार्थ को स्पष्ट जाने।

३१. प्रत्यक्ष ज्ञान के कितने भेद हैं ?

दो है—एक साव्यवहारिक प्रत्यक्ष दूसरा पारमार्थिक प्रत्यक्ष।

(३२) साव्यवहारिक प्रत्यक्ष किसे कहते है ?

जो इन्द्रिय और मन की सहायता से पदार्थ को एक देश स्पष्ट जाने (इन्द्रिय ज्ञान साव्यवहारिक प्रत्यक्ष है)।

३३ इन्द्रिय ज्ञान को तो ऊपर परोक्ष कहा गया है ?

अन्य की सहायता की अपेक्षा रखने से वास्तव मे वह परोक्ष ही है, पर लोक व्यवहार मे प्रत्यक्ष माना जाने से ही उसे साव्यवहारिक प्रत्यक्ष कहा गया है।

(३४) पारमार्थिक प्रत्यक्ष किसे कहते हैं ?

जो विना किसी की सहायता के पदार्थ को स्पष्ट जाने।

(३५) पारमार्थिक प्रत्यक्ष के कितने भेद हैं ?
दो भेद हैं—एक विकल प्रत्यक्ष दूसरा सकल प्रत्यक्ष ।

(३६) विकल पारमार्थिक प्रत्यक्ष किसे कहते है ?
जो रूपी पदार्थों को विना किसी की सहायता के स्पष्ट जाने ।

(३७) विकल पारमार्थिक प्रत्यक्ष के कितने भेद है ?
दो है—एक अवधि ज्ञान दूसरा मन पर्याय ज्ञान ।

(३८) सकल पारमार्थिक प्रत्यक्ष किसे कहते है ?
केवल ज्ञान को ।

३९. प्रत्यक्ष व परोक्ष मे क्या अन्तर है ?
विषय के आकार की अपेक्षा कोई अन्तर नही । विशदता व अविशदता मे अन्तर है । प्रत्यक्ष विशद होता है और परोक्ष अविशद । जैसे अन्धे को गुलाब के फूल का ज्ञान होना अविशद है और नेत्रवान को विशद ।

(३. मति ज्ञान)

(४०) मति ज्ञान किसको कहते हैं ?
इन्द्रिय व मन की सहायता से जो ज्ञान हो उसे मति ज्ञान कहते है (जैसे आख से रूप का ज्ञान) ।

४१. मति ज्ञान किसको होता है ?
एकेन्द्रिय से सज्ञी पचेन्द्रिय तक के सब जीवो को अपने अपने योग्य मतिज्ञान होता है ।

४२ अपने अपने योग्य से क्या समझे ?
उपलब्ध इन्द्रियो विषयक ही ज्ञान होता है अन्य इन्द्रियो जनित नही ।

(४३) मति ज्ञान के कितने भेद है ?
चार हैं—अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा ।

(४४) अवग्रह किसे कहते हैं ?
इन्द्रिय और पदार्थ के योग्य स्थान मे (मौजूद जगह मे) रहने पर, सामान्य प्रतिभासरूप दर्शन के पीछे, अवान्तर सत्ता

सहित विशेष वस्तु के ज्ञान को अवग्रह कहते हैं। जैसे यह मनुष्य है (अथवा यह सफैद सफैद सा कुछ है तो सही) इत्यादि। (नोट —दर्शन का कथन आगे किया जायेगा)

(४५) ईहा ज्ञान किसको कहते है ?

अवग्रह से जाने हुए पदार्थ के विषय मे उत्पन्न हुए सशय को दूर करते हुए अभिलाष स्वरूप ज्ञान को ईहाज्ञान कहते हैं। जैसे—ये ठाकुरदास प्रतीत होते हैं। (अथवा यह ध्वजा या बक पक्ति सरीखी प्रतीत होती है)। यह ज्ञान इतना कमजोर होता है कि किसी पदार्थ की ईहा होकर छूट जाये तो कालान्तर मे सशय या विस्मरण हो जाता है।

(४६) अवाय किसे कहते है ?

ईहा से जाने हुए पदार्थ को यह वही है अन्य नही, ऐसे मजबूत ज्ञान को अवाय कहते है, जैसे—यह ठाकुरदास ही है अन्य नही हैं। (अथवा यह ध्वजा ही है बक पक्ति नही)। अवाय से जाने हुए पदार्थ मे सशय तो नही होता, परन्तु विस्मरण हो जाता है।

(४७) धारणा किसे कहते हैं ?

जिस ज्ञान से जाने हुए पदार्थ में कालान्तर मे सशय तथा विस्मरण नही होवे, उसे धारणा कहते है ?

४८ प्रति ज्ञान के इन चारों भावों का स्पष्ट रूप व क्रम दर्शाओ ?

(क) इन्द्रिय और पदार्थ का सयोग होते ही दर्शनोपयोग के अनन्तर प्रथम क्षण मे पदार्थ का धु धला सा सामान्य रूप ग्रहण होता है, जिसे अवग्रह कहते है। 'यह कुछ है तो सही' ऐसा प्रतिभास ही उसका रूप है ?

(ख) तदनन्तर द्वितीय क्षण में ईहा होता है, अर्थात उस पदार्थ की ओर उपयोग को कुछ केन्द्रित करके निर्णय करने का प्रयत्न होता है।

(ग) तदनन्तर तृतीय क्षण मे अवाय होता है अर्थात उस विषय का निश्चित ज्ञान हो जाता है।

(घ) तदन्तर धारणा होती है। अवाय और धारणा मे इतना अन्तर है कि जब तक उस निर्णीत ज्ञान का सस्कार दृढ नही होता तब तक वह अवाय कहलाता है और उसका सस्कार इतना दृढ हो जाये कि कालान्तर मे भी स्मरण किया जा सके तब वही ज्ञान धारणा नाम पाता है।

४६ अवग्रह आदि का यह क्रम प्रतीति मे क्यो नहीं आता ?

ये चारो बाते इतनी शीघ्रता के साथ हो जाती है कि साधारण बुद्धि से पकड मे नही आती। विशेष उपयोग देने पर अवश्य प्रतीति मे आती है।

५०. क्या मति ज्ञान का इतना ही कार्य है या कुछ और भी ?

मतिज्ञान दो प्रकार का होता है—प्रत्यक्ष व परोक्ष। उपरोक्त चार बातें तो उसका साव्यवहारिक प्रत्यक्ष रूप है। इसके पश्चात उसका परोक्ष रूप प्रारम्भ होता है, जिसके ३ भेद है—स्मृति, प्रत्यभिज्ञान व चिन्ता या तर्क। इन तीनो के लक्षण पहिले बता दियें गये है, देखो अध्याय १ अधिकार ३।

५१. मति ज्ञान के परोक्ष भेदों का क्रम दर्शाओ ?

धारणा के सस्कार मे बैठे हुए पदार्थ की कालान्तर मे कदाचित स्मृति हो सकती है। स्मृति होने पर ही प्रत्यभिज्ञान होना सभव है, क्योंकि वर्तमान प्रत्यक्ष से पूर्व स्मृति का जोड अन्यथा हो नही सकता। एक ही विषय का पुन' पुन प्रत्यभिज्ञान होता रहे तब उस विषय सम्बन्धी व्याप्ति या तर्क ज्ञान उत्पन्न हो जाता है; अर्थात ऐसी धारणा दृढ हो जाती है कि जब जब और जहा जहा भी यह होगा तब तब व तहा तहा ही यह भी होगा और यदि यह न होगा तो यह भी न होगा। तर्क या व्याप्ति ज्ञान का ही हेतु रूप से प्रयोग करने पर अनुमान ज्ञान होता है जो श्रुतज्ञान के अन्तर्गत है।

५२ क्या प्रत्येक पदार्थ विषय मति ज्ञान मे ये आठो बाते होती हैं ?

नही, किसी को अथवा किसी समय केवल अवग्रह होकर छूट

जाता है अर्थात अभी अवग्रह हुआ ही था कि उपयोग अन्य विषय की ओर खिंच गया। इसी प्रकार किसी को अवग्रह व ईहा होकर छूट जाते है, अवाय होने नहीं पाता। किसको अवग्रह ईहा अवाय ये तीनो हो जाने पर भी धारणा नही हो पाती। किसी को किसी समय धारणा सहित चारो ज्ञान भी हो जाते है; पर स्मृति का कभी काम ही नही पडता। इसी प्रकार किसी को स्मृति तो हो जाती है, पर प्रत्यभिज्ञान का अवसर प्राप्त नही होता। किसी को स्मृति व प्रत्यभिज्ञान हो जाने पर भी व्याप्ति या तर्क ज्ञान जागृत नही होता और किसी को व्याप्ति ज्ञान सहित उपरोक्त सर्वभेद हो जाते है। व्याप्ति हो जाने पर भी उसका अनुमान के लिए प्रयोग करे ही करे यह आवश्यक नही, पर कोई कोई कही कही उससे अनुमान भी कर लेता है।

इतनी वात अवश्य है कि आगे आगे के ज्ञान वालो को उससे पूर्व के सर्वज्ञान अवश्य होते है, क्योकि पूर्व भेद के अभाव मे अगला ज्ञान होना सम्भव नही। ऐसा नही हो सकता कि अवाय तो हो जाये और अवग्रह ईहा न हो। अवग्रह व ईहा होने पर ही अवाय सम्भव है, और इसी प्रकार धारणा होने पर ही स्मृति प्रत्यभिज्ञान आदि होने सम्भव हैं।

(५३) मति ज्ञान के विषयभूत पदार्थों के कितने भेद हैं ?
दो हैं—व्यक्त व अव्यक्त। (अथवा अर्थ व व्यञ्जन)

(५४) अवग्रहादि ज्ञान दोनों ही प्रकार के पदार्थों में होते हैं या कैसे ?
व्यक्त पदार्थों के अवग्रह आदि चारों होते हैं परन्तु अव्यक्त पदार्थ का केवल अवग्रह ही होता है।

(५५) अर्थावग्रह (व्यक्तावग्रह) किसे कहते हैं ?
व्यक्त पदार्थ के अवग्रह को अर्थावग्रह कहते है (जैसे नेत्र द्वारा देखना)

(५६) व्यञ्जनावग्रह किसे कहते है ?
अव्यक्त पदार्थ के अवग्रह को व्यञ्जनावग्रह कहते हैं (जैसे

रमे हुए नाक मे गन्ध का ग्रहण)।

(५७) व्यञ्जनावग्रह भी अर्थावग्रह की तरह सब इन्द्रियो और मन से होता हैं या कैसे ?

व्यञ्जनावग्रह चक्षु व मन के अतिरिक्त सभी इन्द्रियो से होता है।

(५८) व्यक्त व अव्यक्त पदार्थों के कितने भेद हैं ?

हर एक के १२ भेद हैं—बहु-एक, बहुविध-एकविध, क्षिप्र-अक्षिप्र, नि सृत-अनि सृत, उक्त-अनुक्त, ध्रुव-अध्रुव।

५९. अवाय होने वाले को कितने ज्ञान हैं ?

तीन हैं—अवग्रह, ईहा व अवाय।

६० देवदत्त को देखते ही पहिचान गया, बताओ मुझे कितने ज्ञान हुए ?

छह ज्ञान हुए—अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा, स्मृति व प्रत्य-भिज्ञान। कुछ काल पूर्व उसे देखा था तब अवग्रह आदि चार ज्ञान हुए थे और अब उसे देखा है तब छहो हुए हैं।

६१. उपरोक्त सर्व विकल्पों को मिलाने पर मति ज्ञान के कुल कितने भेद हुए ?

अर्थावग्रह योग्य १२ पदार्थों के छहों इन्द्रियो द्वारा अवग्रह आदि चारो होते है। अत ६×१२×४=२८८ हुए। व्यञ्जन या अव्यक्त १२ पदार्थ का नेत्र व मन रहित चार इन्द्रियो द्वारा केवल अवग्रह होता है। अत ४×१२×१=४८। कुल मिल-कर ३३६ भेद हुए। (ये तो प्रत्यक्ष मति ज्ञान के भेद हैं। इनमे ४८ की स्मृति आदि सम्भव नही। २८८ के स्मृति आदि तीनो परोक्ष भेद भी हो सकते है। अत, परोक्ष भेद कुल ४८+२८८×३=९१२ हुए। कुल मिलकर३३६+९१२=१२४८ हुए)

(४. श्रुत ज्ञान)

(६२) श्रुत ज्ञान किसे कहते हैं ?

मति ज्ञान से जाने हुए पदार्थ से सम्बन्ध लिये हुए किसी दूसरे पदार्थ के ज्ञान को श्रुत ज्ञान कहते है। जैसे घट शब्द सुनने के अनन्तर उत्पन्न हुआ कम्बुग्रीवादि रूप घटका ज्ञान (अथवा किसी व्यक्ति की आवाज सुनकर बिना देखे ही उस व्यक्ति का ज्ञान)।

६३. श्रुत ज्ञान के कितने भेद है ?

तीन भेद है—हिताहित ज्ञान; शब्द ज्ञान व कल्पना ज्ञान।

६४ हिताहित रूप श्रुत ज्ञान किसे कहते है ?

किसी पदार्थ को मतिज्ञान द्वारा जानकर 'यह मेरे लिये इष्ट है अथवा अनिष्ट, मै इस विषय को प्राप्त करूं अथवा त्याग करू, इत्यादि प्रकार का जो निर्णय अन्दर मे होता है उसे हिताहित ज्ञान कहते है। जैसे—सुगन्धि मात्र को नासिका द्वारा मति ज्ञान से ग्रहण करके, चीटी "खाद्य' मिष्टान्न है' यह न जानती हुई भी 'यह मेरा कोई इष्ट पदार्थ है' इतना मात्र जानकर, उस ओर चल देती है और अग्निको "यह मेरे लिये कुछ अनिष्ट है' ऐसा जानकर वहां से हट जाती है।

६५ शब्द ज्ञान किसे कहते है ?

कर्णेन्द्रिय से या नेत्रेन्द्रिय से मतिज्ञान द्वारा कोई शब्द सुन कर या पढकर उसके वाच्य का ज्ञान हो जाना शब्द ज्ञान है।

६६ शब्द ज्ञान कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—द्रव्य श्रुत व भाव श्रुत।

६७ द्रव्य श्रुत किसे कहते हैं ?

शास्त्रो का अथवा किन्ही पुस्तकों का अथवा केवल सुने व पढे शब्दो मात्र का ज्ञान द्रव्य श्रुत कहलाता है, जैसे अमुक शास्त्र मे यह बात लिखी है और अमुक व्यक्ति यह कहता था इत्यादि।

६८ भाव श्रुत किसे कहते हैं ?

शास्त्र आदि के शब्द पढकर अथवा किसी वक्ता से सुनकर, उन शब्दों का वाच्य वाचक सम्बन्ध जैसा पहिले समझ रखा है वैसा स्मरण करके, शब्द पर से वाच्य पदार्थ का निर्णय कर लेना भाव श्रुत कहलाता है।

६९. कल्पना ज्ञान किसे कहते हैं ?

किसी विषय को देखकर या सुनकर अथवा अन्य किसी इन्द्रिय से जानकर जो मन में तत्सम्बन्धी विकल्प आदि उत्पन्न होते है, उसे कल्पना ज्ञान कहा जाता है, जैसे घर को देखकर 'इसमें जल भर देने से वह ठण्डा हो जाता है; गर्मियो मे इसका प्रयोग अत्यन्त इष्ट है' इत्यादि।

७० कल्पना ज्ञान कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—शृंखलाबद्ध व्यर्थ विकल्प और अनुमान ज्ञान।

७१. शृंखलाबद्ध विकल्प कैसे होते हैं ?

शेखचिल्ली की कल्पनाओ का जो मन मे कदाचित एक के पीछे एक रूप से धारा प्रवाही कडीबद्ध कल्पनाये आने लगती हैं, वही यहाँ शृंखलाबद्ध विकल्प कहे गए है। जैसे—एक भिखारी को मतिज्ञान द्वारा देख व जानकर पहिले देश की भुखमरी का विकल्प जागृत हो जाता है और तदनन्तर 'सरकार मे घूसखोरी ही इसका कारण है' ऐसा विकल्प स्वतः सामने आ धमकता है। इसी प्रकार दलबन्दी, चीन की दुष्टता, अमरीका की सहानुभूति, भावी भय की आशका आदि अनेको धारावाही कल्पनाओ की शृंखला चल निकलती है।

कल्पना की यह अटूट शृंखला किस विषय पर से प्रारम्भ होकर कहाँ पहुँच जायेगी, यह कहा नही जा सकता, जैसे भिखारी से प्रारम्भ होकर अमरीका व रूस के युद्ध मे प्रविष्ट

हो ऐटम बमो द्वारा यह कल्पना एक क्षण मे इस पृथ्वी को प्रलयकर अग्नि में जलती देखने लगती है।

(७२) **अनुमान ज्ञान किसे कहते हैं ?**

साधन से साध्य के ज्ञान को कहते हैं जैसे—धूम देखकर अग्नि का ज्ञान अथवा किसी व्यक्ति की आवाज सुनकर उस व्यक्ति का ज्ञान।

७३. **अनुमान ज्ञान कितने प्रकार का होता है ?**

दो प्रकार का—स्वार्थानुमान और परार्थानुमान।

७४. **स्वर्थानुमान किसे कहते है ?**

बिना किसी अन्य के उपदेश के या हेतु आदि के या तर्क वितर्क के, जो ज्ञान स्वत. किसी पदार्थ को प्रत्यक्ष करने के अनन्तर हो जाता है, वह स्वार्थानुमान है, जैसे धूम को देखकर अग्नि का ज्ञान स्वय हो जाता है।

७५. **परार्थानुमान किसे कहते हैं ?**

किसी दूसरे व्यक्ति के द्वारा हेतु आदि देकर समझाये जाने पर जो ज्ञान होता है, वह परार्थानुमान है। (इस ज्ञान के अंगोपागों का विशेप विस्तार पहले अध्याय १ के अधिकार ३ मे किया है)।

७६ **श्रुत ज्ञान के होने का क्या क्रम है ?**

मतिज्ञान पूर्वक ही श्रुत ज्ञान होता है।

७७. **मतिज्ञान पूर्वक से क्या समझे ?**

पहले किसी इन्द्रिय द्वारा विषय का प्रत्यक्ष होता है और फिर उससे सम्बन्धित अन्य विकल्प होते है, भले ही वे विकल्प हिताहित रूप हों अथवा कल्पना रूप अथवा वाच्यवाचक रूप या अनुमान रूप। अथवा स्मृति द्वारा किसी विषय का परोक्ष ज्ञान करके इसी प्रकार के विकल्प होते है। अथवा किसी वक्ता के शब्द व वाक्यो को मति ज्ञान द्वारा सुनकर उसके

द्वारा दिये गये हेतु उदाहरण आदि पर मे किसी अन्य विषय का निर्णय किया जाता है, इत्यादि।

७८. क्या मतिज्ञान पूर्वक ही श्रुत ज्ञान होता है या अन्य प्रकार भी ?

कल्पना ज्ञान में पहिली कल्पना तो मतिज्ञान पूर्वक होती है और आगे आगे की सर्व कल्पनायें अपने से पूर्व वाली कल्पनाओ के आधार पर होने से श्रुतज्ञान पूर्वक होती है।

७९ मति ज्ञान व श्रुत ज्ञान मे क्या अन्तर है ?

इन्द्रिय प्रत्यक्ष द्वारा या स्मृति द्वारा जो प्रथम ज्ञान होता है वह तो मतिज्ञान है। उस विषय से सम्बन्ध रखने वाला अगला जो कड़ीवद्ध ज्ञान होता है, वह सब श्रुतज्ञान है।

८०. मति व श्रुतज्ञान में कौन प्रत्यक्ष है और कौन परोक्ष ?

इन्द्रिय प्रत्यक्ष वाला मतिज्ञान साव्यवहारिक प्रत्यक्ष है, स्मृति आदि रूप मतिज्ञान परोक्ष है और श्रुतज्ञान के सारे विकल्प परोक्ष है।

८१. श्रुत ज्ञान किस इन्द्रिय के निमित्त से होता है ?

हिताहित रूप श्रुतज्ञान मे कोई इन्द्रिय विशेष निमित्त नही है, क्योकि वह सस्कारवश केवल हिताहित के अभिप्राय की अवधारणा रूप से होता है, पदार्थ के आकार रूप से नही। श्रुत ज्ञान के अन्य सर्व विकल्प मन के निमित्त से होते है। अन्य कोई भी इन्द्रिय श्रुतज्ञान में निमित्त नही।

८२. तब मनोमति ज्ञान व श्रुतज्ञान मे क्या अन्तर है ?

पूर्व दृष्ट श्रुत या अनुभूत पदार्थ की स्मृति प्रत्यभिज्ञान व तर्क तो मनोमति ज्ञान के विकल्प है और तदाश्रित अन्य अन्य विषयो का ज्ञान श्रुत है।

८३; श्रुत ज्ञान किसे होता है ?

सभी जीवो को होता है।

८४ एकेन्द्रियादि असंज्ञी पर्यंत जीवो को मन के अभाव में वह कैसे सम्भव है ?

उन्हे केवल हिताहित रूप ही श्रुत ज्ञान होता है अन्य नही। और संस्कारवश होने से उसमे मन का निमित्त होता नही।

८५ श्रुत ज्ञान का क्या विषय है ?

रूपी व अरूपी, चेतन व अचेत सभी द्रव्यो की स्थूल सूक्ष्म कुछ पर्याये इसका विषय है। अत वह लगभग केवल ज्ञान के बराबर है।

८६ मोक्ष मार्ग में श्रुत ज्ञान का क्या स्थान है ?

केवल ज्ञान की बराबरी करने से छद्मस्थ के ज्ञानो मे इसका मूल्य सर्वोपरि है। अवधि व मन पर्यय ज्ञान यद्यपि चमत्कारिक है पर आत्मानुभूति मे समर्थ होने से श्रुत ज्ञान ही मोक्ष मार्ग मे प्रयोजनीय है, अवधि व मन. पर्यय नही।

(५. अवधिज्ञान)

(८७) अवधिज्ञान किसे कहते है ?

द्रव्य क्षेत्र काल व भाव की मर्यादा लिये जो रूपी पदार्थों को स्पष्ट जाने। (नोट —द्रव्य क्षेत्रादि की मर्यादा; रूपी पदार्थ आदि का क्या तात्पर्य है यह बात पहिले अध्याय १ अधिकार २ मे बता दी गई)

८८. अवधिज्ञान प्रत्यक्ष है या परोक्ष ?

देश प्रत्यक्ष है सर्व प्रत्यक्ष नही, क्योकि सकल द्रव्य क्षेत्र काल भाव को नही जानता। लक्षण मे आये मर्यादा शब्द से यह बात सूचित होती है।

८९ क्या अवधिज्ञानभूत भविष्यत की भी बात को जानता है ?

हा, सात आठ भवो आगे पीछे तक की बात जान सकता है, परन्तु केवल पुद्गल द्रव्य की या उसके निमित्त से होने वाले अशुद्ध भावो की ही जान सकता है, शुद्ध जीव व उसके भावों

की नही । (अशुद्ध जीव व उसके भावो को कैसे जान सकता है, यह बात पहले अध्याय १ अधिकार २ मे बता दी गई)।

९० स्मृति व अवधिज्ञान मे क्या अन्तर है ?

यद्यपि किन्ही जीवो को अपने व अपने से सम्बन्ध रखने वाले कुछ अन्य जीवो के पूर्व भवो की स्मृति हो जाती है, पर वह मति ज्ञान है और मन के निमित्त से होने के कारण परोक्ष है। अवधिज्ञान प्रत्यक्ष होता है। स्मृति ज्ञान के लिये पूर्व धारणा या संस्कार की आवश्यकता है, अवधि ज्ञान को उसकी आवश्यकता नही। वह नवीन व अदृष्ट विषय को भी जान सकता है।

९१ अनुमान व अवधिज्ञान मे क्या अन्तर है ?

अनुमान मे भी पूर्व स्मृति आदि की अपेक्षा पडती है, तथा उसके लिये विशेष रूप से बुद्धि पूर्वक विचार करना पडता है। परन्तु अवधिज्ञान मे विचार करने की आवश्यकता नही। जैसे पदार्थ के प्रति नेत्र जाते ही बिना विचारे उसका प्रत्यक्ष हो जाता है, उसी प्रकार विषय के प्रति अवधिज्ञान के उपयुक्त होते ही बिना विचारे उसका प्रत्यक्ष हो जाता है।

९२ ज्योतिष ज्ञान से भी भूत भविष्यत का ज्ञान हो जाता है ?

ठीक है, पर वह श्रुत ज्ञान है, अवधिज्ञान नही। क्योकि वह भी कुछ बाह्य लक्षणो आदि को देखकर ही अनुमान द्वारा उसका फलादेश करता है। अवधिज्ञान मे लक्षण आदि का आश्रय लेने की आवश्यकता नही।

९३. अवधिज्ञान कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—क्षयोपशम निमित्तक व भव प्रत्यय।

९४ क्षयोपशम निमित्तक अवधिज्ञान किसे कहते हैं ?

सम्यक्त्व व चारित्र के प्रभाव से ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशमविशेष हो जाने पर जो मनुष्य व तिर्यञ्चो को

कदाचित उत्पन्न हो जाता है, वह क्षयोपशम निमित्तक कहलाता है ।

९५. क्षयोपशम निमित्तक अवधिज्ञान कितने प्रकार का होता है ?

तीन प्रकार का होता है—देशावधि, परमावधि व सर्वावधि ।

९६ देशावधि किसे कहते है और किसे होता है ?

अत्यन्त अल्प शक्ति का धारण करने वाला देशावधि कहलाता है । तिर्यंच व मनुष्य दोनो को हो जाता है ।

९७ देशावधि ज्ञान कितने प्रकार का होता है ?

छ प्रकार होता है—वर्द्धमान-हीयमान, अवस्थित-अनवस्थित, अनुगामी-अननुगामी ।

९८ वर्द्धमान अवधिज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्पत्ति के पश्चात जो निरन्तर उत्तरोत्तर वृद्धिगत होता रहे ।

९९ हीयमान अवधिज्ञान किसे कहते है ?

उत्पत्ति के पश्चात जो निरन्तर उत्तरोत्तर घटता चला जाये ।

१०० अवस्थित अवधिज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्पत्ति के पश्चात जो जैसा का तैसा रहे, न घटे न बढे ।

१०१ अनवस्थित अवधिज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्पत्ति के पश्चात जो निश्चल रहे, एक रूप न टिके । कभी घटे कभी बढे ।

१०२ अनुगामी अवधिज्ञान किसे कहते है ?

यह दो प्रकार का होता है—क्षेत्रानुगामी और भवानुगामी । उत्पत्ति वाले स्थान से उठकर अन्यत्र चले जाने पर भी जो ज्ञान व्यक्ति के साथ ही रहे वह क्षेत्रानुगामी है, और मृत्यु के पश्चात दूसरे भव मे भी साथ जाये सो भवानुगामी है ।

१०३ अननुगामी अवधिज्ञान किसे कहते हैं ?

अनुगामी से उलटा अननुगामी है । यह भी दो प्रकार का है—क्षेत्राननुगामी और भवाननुगामी । उत्पत्ति वाले स्थान से उठकर अन्यत्र जाने पर जो व्यक्ति के साथ न जाये बल्कि छुट

जाये वह क्षेत्राननुगामी है। इसी प्रकार मृत्यु के पश्चात अगले भव मे साथ न जाये वह भवाननुगामी है।

१०४. इनमे से तिर्यंचों को कौन से होते हैं और मनुष्यों को कौन से कारण सहित बताओ ?

तिर्यंचो को तो हीयमान, अनवस्थित व अननुगामी ही होते हैं, पर मनुष्यो को छहो हो सकते हैं। कारण कि तिर्यंचो के सम्यक्त्वादि गुण जघन्य होते है, वृद्धिगत नही होते, मनुष्यो के वृद्धिगत भी हो सकते है गुण की ही वृद्धि आदि के साथ ज्ञान की वृद्धि आदि का अविनाभाव सम्बन्ध है।

१०५. परमावधि किसे कहते हैं और किसे होता है ?

तपश्चरण विशेष के प्रभाव से तद्भव मोक्षगामी पुरुषो को ही होता है। जघन्य अवस्था मे भी इसका विषय उत्कृष्ट देशावधि से असख्यात गुणा होता है। वर्द्धमान व अनुगामी ही होता है हीयमान आदि चार भेद सम्भव नही।

१०६ सर्वावधि किसे कहते हैं और किसे होता है ?

तपश्चरण विशेष से चरम शरीरी मुनियो को ही होता है। इसका विषय उत्कृष्ट परमावधि से भी असख्यात गुणा होता है। इसमे जघन्य उत्कृष्ट का भेद नही। सदा एक रूप अवस्थित व अनुगामी ही रहता है। वर्द्धमान आदि शेष चार भेद इसमे सम्भव नही।

१०७ परमावधि व सर्वावधि में क्या अन्तर है ?

यद्यपि दोनो ही चरम शरीरियो को साधु दशा में विशेष तपश्चरण से ही होते हैं, परन्तु परमावधि मे तो जघन्य उत्कृष्ट के विकल्प होते है, सर्वावधि मे नही। वह एक रूप ही होता है।

१०८ अवधिज्ञान कैसे उत्पन्न होता है ?

सम्यग्दर्शन, चारित्र व तप विशेष द्वारा उत्पन्न होता है।

१०९ भव प्रत्यय अवधिज्ञान किसे कहते है और किनको होता है ?

केवल भव के सम्बन्ध से जो सभी देवो व नारकीयो का सामान्य रूप से होता है, वह भव प्रत्यय कहलाता है ।

११०. क्या भव प्रत्यय में ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम की आवश्यकता नहीं ?

नही, कर्म के क्षयोपशम बिना तो कोई भी ज्ञान होना सम्भव नही । इतनी बात है कि यहा वह क्षयोपशम बिना किसी चारित्र आदि की साधना के स्वत उस भव के निमित्त मात्र से हो जाता है, जब कि क्षयोपशम निमित्तक मे वह सम्यक्त्वादि की विशेष साधना के प्रभाव से होता है ।

१११ मिथ्यादृष्टियो को भी तो अवधिज्ञान कहा गया है ?

उसे विभग ज्ञान कहते है और प्राय भवः प्रत्यय ही होता है। कदाचित मनुष्य व तिर्यंचो को होता है तो वह क्षणमात्र पश्चात ही नष्ट हो जाता है । क्योकि मिथ्यादृष्टि मनुष्य तिर्यंचो मे वह उत्पन्न नही होता, बल्कि अवधिज्ञानी सम्यदृष्टियो का सम्यक्त्व टूट जाने पर जब वे मिथ्यात्व अवस्था को प्राप्त होते है तब उनमे क्षण मात्र के लिये वह पहिला ही अवधिज्ञान कदाचित पाया जाता है ।

११२ भव प्रत्यय अवधिज्ञान देशावधि होता है या परमावधि कारण, सहित बताओ ?

वह देशावधि ही होता है और वह भी जघन्य दशा वाला । परमावधि व सर्वावधि वहा सम्भव नही । कारण कि तपश्चरण व चारित्र को देव नारकियों मे अवकाश नही, जिसके निमित्त से कि उत्कृष्ट ज्ञान हो सके । सम्यग्दर्शन अवश्य किसी किसी को होता है पर चारित्रहीन वह अकेला उत्कृष्ट ज्ञान को कारण नही ।

११३ प्रतिपाती ज्ञान किसे कहते हैं ?

जो होकर छूट जावे उसे प्रतिपाती कहते है ।

११४. अप्रतिपाती ज्ञान किसे कहते है ?

उत्पन्न होने के पश्चात केवल ज्ञान होने तक जो न छूटे उसे अप्रतिपाती कहते है।

११५ देशावधि आदि में कौन प्रतिपाती और कौन अप्रतिपाती ?

देशावधि प्रतिपाती है और परमावधि व सर्वावधि अप्रतिपाती ही।

११६ तो क्या देशावधि वाले को केवल ज्ञान नही होता ?

कोई नियम नही, हो भी जाये और न भी होय। पर परमावधि व सर्वावधि वाले को नियम से होता है।

(६. मनः पर्यय ज्ञान)

(११७) मनः पर्यय ज्ञान किसे कहते है ?

द्रव्य क्षेत्र काल व भाव की मर्यादा लिये हुए जो दूसरे के मन मे तिष्ठते रूपी पदार्थो को स्पष्ट जाने।

११८ दूसरे के मन में तिष्ठते पदार्थ क्या ?

मन द्वारा जिस विषय का स्मरण या विचार किया जाता है, वही मन मे स्थित पदार्थ है। ज्ञान मे पड़ा ज्ञेय का आकार ही इस का तात्पर्य है।

११९ मन में स्थित रूपी पदार्थ से क्या समझे ?

यदि मन मे स्थित वह ज्ञेयाकार पुद्गल का है अथवा तन्निमित्तक जीव के अशुद्ध भावो का है, अर्थात यदि मन इन चीजो का विचार कर रहा है, तब तो उसमे मन पर्यय का व्यापार चल सकता है अन्यथा नही। वीतरागी जनो के मन मे स्थिति साक्षी रूप साम्य भाव अथवा ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय की त्रिपुटी से रहित आत्म प्रकाश मे रमणता का भाव, वह नही जान सकता।

१२० मनः पर्यय ज्ञान भूत भविष्यत को भी विषय करता है ?

हा, किसी व्यक्ति ने आज से कुछ काल पहले क्या विचारा या जाना था, अब क्या विचार रहा है और आगे क्या

विचारेगा, ऐसे त्रिकाली मनोगत विषय को यह ज्ञान ग्रहण करने मे समर्थ है।

१२१. **मनः पर्यय ज्ञान कितने प्रकार का होता है ?**

दो प्रकार का होता है—ऋजुमति व विपुलमति।

१२२ **ऋजुमति मनः पर्यय ज्ञान किसे कहते हैं ?**

मन मे स्थित सरल या सीधे साधे पदार्थ को जानना ऋजुमति है।

१२३. **विपुलमति मनः पर्यय ज्ञान किसे कहते है ?**

मन मे स्थित बक्र या टेढे पदार्थ का जानना विपुलमति है।

१२४ **सरल या वक्र विषय क्या ?**

मायाचारी युक्त मन का विचार वक्रविषय है और सरल मन का विचार सरल विषय है।

१२५. **मनः पर्यय ज्ञान कैसे उत्पन्न होता है ?**

सम्यक्त्व व तप विशेष के प्रभाव से ही होता है।

१२६ **मनः पर्यय ज्ञान किनको होता है ?**

वीतरागी साधुओ को ही होता है। अन्य साधारण मनुष्यो का या तिर्यंच नारकी व देवों को नही होता है। तीर्थंकरो व गणधरो को दीक्षा धारण करते समय ही प्रगट हो जाता है।

१२७ **ऋजुमति व विपुलमति मे क्या अन्तर है ?**

(क) ऋजुमति का विषय सरल व स्थूल है तथा विपुलमति का सरल स्थूल के साथ साथ वक्र व सूक्ष्म भी।

(ख) ऋजुमति प्रतिपाती है अर्थात उत्पन्न होने के पश्चात छूट भी जाता है, पर विपुलमति अप्रतिपाती है, बिना केवल ज्ञान हुए नही छूटता।

(ग) ऋजुमति अन्य मुनियो को भी हो सकता है पर विपुलमति चरम शरीरी मुनियो को ही होता है।

(घ) इसलिये ऋजुमति की अपेक्षा विपुलमति अधिक विशुद्ध है।

१२८ मन पर्यय मे निमित्त क्या ?
मनोमति ज्ञान पूर्वक होने से मनोनिमित्तक है ।

१२९ मन के निमित्त से होने के कारण इसे परोक्ष कहना चाहिये ?
नही, क्योकि यहा मतिज्ञान की भाति मन का साक्षात निमित्त नही है, परम्परा निमित्त है । अर्थात यह ज्ञान मनोगति पूर्वक 'इसके मन क्या है' ऐसा कुछ विचार होने के, पश्चात प्रत्यक्ष रूप से उत्पन्न होता है ।

१३० हम भी तो दूसरे मन की अनेकों बाते जान लेते हैं ?
जान अवश्य लेते हैं, पर वचन मुखाकृति व शरीर की क्रिया आदि वाह्य लक्षणो पर से अनुमान लगाकर जानते हैं, प्रत्यक्ष नही । इसलिये वह श्रुतज्ञान है मन पर्यय नही ।

१३१ अवधि व मनः पर्यय मे क्या अन्तर है ?
अवधिज्ञान बाह्य के भौतिक पदार्थो के विषय मे अथवा जीव की अशुद्ध द्रव्य पर्यायो के विपय मे ही जानता है, जब कि मन पर्यय जीव के अशुद्ध भाव पर्यायो के विषय मे जानता है इसलिये अवधि ज्ञान का विषय यद्यपि मनःपर्यय से अधिक है, परन्तु स्थूल है । मन. पर्यय का विषय भावात्मक होने से सूक्ष्म है । इसी से अवधि की अपेक्षा मन पर्यय विशुद्ध है ।

१३२ अवधि व मनपर्यय ज्ञान तो बड़े चमत्कारिक हैं । किसी को हो जाये तो ?
लौकिक जनो के लिये ही आकर्षण हैं । मोक्षमार्गियो के लिये इनका कोई मूल्य नही । उन्हे तो श्रुतज्ञान ही चमत्कारिक है, जो यद्यपि परोक्ष है पर सर्व लोकालोक महित निज शुद्धात्म तत्व को भी ग्रहण करने मे समर्थ होने से मोक्ष का साधन है ।

(७. केवल ज्ञान)

१३३ केवल ज्ञान किस को कहते है ?
जो त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थों को युगवत (एक साथ स्पष्ट जाने ।

१३४. त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थो से क्या समझे ?

छहो द्रव्य, उनकी पृथक पृथक अनन्तानन्त व्यक्ति मे, प्रत्येक के अनन्तानन्त गुण धर्म शक्ति व स्वभाव, उनमे से प्रत्येक की तीनो कालो मे होने योग्य सर्व पर्याये। यह सब कुछ केवल ज्ञान युगपत जानता है।

१३५ युगपत से क्या समझे ?

जिस प्रकार हम तुम एक विषय को छोडकर दूसरे को और उसे छोडकर तीसरे को अटक अटक कर जानते है, उस प्रकार यह ज्ञान विषयो को आगे पीछे के क्रम से नही जानता, बल्कि सब को एक साथ जानता है; जैसे कि सारे दिल्ली नगर का ज्ञान।

१३६. केवल ज्ञान में 'केवल' शब्द से क्या समझे ?

केवल का अर्थ नि सहाय है। अर्थात् उस ज्ञान को इन्द्रिय प्रकाश की सहायता की अथवा ज्ञेय पदार्थ के आश्रय की, अथवा जानने के प्रति कोई प्रयत्न करने की आवश्यकता नही पड़ती। सहज जानना ही उसका स्वभाव है।

१३७ केवल ज्ञान कितने प्रकार का होता है ?

इसके कोई भेद प्रभेद नही होते। एक ही प्रकार का होता है।

१३८ केवल ज्ञान किनको होता है ?

अर्हंत व सिद्ध भगवान को ही होता है, अन्य ससारी जीवों को नही।

१३९. ज्ञान का लक्षण सविकल्प उपयोग है। क्या केवल ज्ञान में भी किसी प्रकार का विकल्प होता है ?

हा होता है, अन्यथा वह ज्ञान ही न रहे। 'विकल्प' शब्द के दो अर्थ है—एक राग और दूसरा ज्ञान मे ज्ञेयों के विशेष आकार। यहा विकल्प का अर्थ मोहजनित राग न समझना परन्तु ज्ञानात्मक आकार समझना। वास्तव मे यह ज्ञान सविकल्प निर्विकल्प है।

१४० सविकल्पक निर्विकल्प से क्या समझे ?

ज्ञान मे ज्ञेयो के आकार प्रत्यक्ष होते है, इसलिये सविकल्पक है। 'मैं इस पदार्थ को जानू' इस प्रकार का विकल्प नही होता इसलिये निर्विकल्प है।

१४१. केवल ज्ञानी निश्चय से आत्मा को जानते हैं, व्यवहार से जगत को भी जानते है। क्या समझे ?

केवल ज्ञान मे समस्त पदार्थ ज्ञेयाकार रूप से प्रतिभासित मात्र होते हैं। दर्पण की भाति वह प्रतिभास उसका निज रूप है, ज्ञय पदार्थो का रूप नही है। इसलिये वे वास्तव मे ज्ञानात्मक निज आत्मा को अथवा प्रतिभास युक्त निज ज्ञान को ही जानते हैं, जगत को नही। इसका यह अर्थ नही कि ज्ञेयाकार रूप से भी जगत न जाना जा रहा हो। ज्ञान मे पडे उन ज्ञेयाकारो को ही जगत का ज्ञान कहना व्यवहार है।

१४२ केवली भगवान तो जगत को व्यवहार से जानते हैं तो क्या हम उसे निश्चय से जानते हैं ?

नही, कोई भी दूसरे पदार्थ को निश्चय से नही जान सकता, क्योकि निश्चयनय अभेद या तन्मयता अर्थात तत्स्वरूपता को दर्शाता है। तन्मय होकर पदार्थ का अनुभव किया जाता है पदार्थ को जाना नही जाता। अनुभव भी वास्तव उस पदार्थ के निमित्त से उत्पन्न निज सुख दुख का ही होता है पदार्थ का नही। इसलिये पदार्थ को जानना व्यवहार से ही है निश्चय से नही क्योकि व्यवहार नय ही अन्य मे अन्य का उपचार करता है।

नोट —(यह कथन जैनागम का अभिप्राय व्यक्त करने मात्र के लिये समझना अन्यथा शुद्धात्मा को प्राप्त केवली मे ऐसा होना युक्ति सिद्ध नही है, क्योकि उसका स्वरूप ता चित्प्रकाश मात्र है।)

(८. दर्शनोपयोग)

(१४३) दर्शन चेतना (दर्शनोपयोग) किसको कहते हैं?

जिसमे महासत्ता (सामान्य का) प्रतिभास (निराकार झलक) हो उसको दर्शनचेतना या दर्शनोपयोग कहते है।

(१४४) महासत्ता किसको कहते हैं ?

समस्त पदार्थों के अस्तित्व को ग्रहण करने वाली सत्ता को महासत्ता कहते है; जैसे—सर्व पदार्थ सत् की अपेक्षा सामान्य है।

१४५ दर्शनोपयोग के कितने लक्षण प्रसिद्ध हैं?

चार है—सामान्य प्रतिभास, निराकार प्रतिभास, निर्विकल्प प्रतिभास और अन्तर्चित्प्रकाश।

१४६. सामान्य प्रतिभास से क्या समझे ?

'मैं इसको जानता हूँ' अथवा 'यह ऐसा है' 'वह वैसा है' इत्यादि विकल्प जिस उपयोग में नही होते उसे सामान्य प्रतिभास कहते है, जैसे—प्रतिबिम्बित दर्पण में प्रतिबिम्बो की ओर लक्ष्य न करके केवल दर्पण की स्वच्छता की ओर लक्ष्य करना। अथवा ज्ञेयकारो से रहित केवल चेतना प्रकाश की अन्तर्प्रतीति सामान्य प्रतिभास है।

१४७. निराकार व निर्विकल्प प्रतिभास से क्या समझे ?

ज्ञेयाकारो से रहित होने से वह उपरोक्त प्रतिभास ही निराकार है, और ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय के अथवा ज्ञेय की विशेषताओ के विकल्पो से शून्य होने के कारण वही निर्विकल्प है।

१४८. अन्तर्चित्प्रकाश से क्या समझे ?

चेतन प्रकाश की इस प्रतीति में उसकी वृत्ति अन्तर्मुखी होने से वही अन्तर्चित्प्रकाश है। अथवा स्वच्छता का सामान्य प्रतिभास ही अन्तरात्मा का स्वरूप है, इसलिये वह अन्तर्चित्प्रकाश है।

१४९ दर्शन के चारों लक्षणों का समन्वय करो ?
(देखो ऊपर प्रश्न न १४६-१४८)

१५०. दर्शन व अनुभव में क्या अन्तर है ?
चित्प्रकाश की अन्तर्प्रतीति की अपेक्षा वह दर्शन है और तज्जनित निर्विकल्प आनन्द की प्रतीति युक्त होने से वहीं आत्मानुभव या अनुभूति है। क्योकि अनुभव का तन्मयता वाला लक्षण यहां पूर्णतया घटित होता है।

१५१. दर्शन तो सर्व जीवों को होता है तो क्या वे सब आत्मानुभवी हैं ?
नही, उनको दर्शन का भी स्वरूप यद्यपि होता तो ऐसा ही है, पर उसकी विशेप प्रतीति न होने से वहा आनन्दानुभूति नहीं हो पाती।

(१५२) दर्शन कब होता है ?
ज्ञान से पहिले दर्शन होता है। बिना दर्शन के अल्पज्ञ जनो को ज्ञान नही होता। परन्तु सर्वज्ञदेव के ज्ञान व दर्शन साथ साथ होते हैं।

१५३ छद्मस्थों को ज्ञान से पहले दर्शन कैसा होता है ?
एक इन्द्रिय से जानते जानते जब व्यक्ति दूसरी इन्द्रिय से जानने के सम्मुख होता है, तब एक क्षण के लिये पहली इन्द्रिय का व्यापार तो रुक जाता है और अभी दूसरी इन्द्रिय का व्यापार प्रारम्भ नही हुआ होता। इस बीच के अन्तराल मे उपयोग की जो क्षणिक अवस्था रहती है, वही छद्मस्थो के ज्ञान से पहले होने वाला दर्शनोपयोग है। किसी भी ज्ञेय का ग्रहण न होने से वह उस समय सामान्य प्रतिभासमात्र ही होता है, परन्तु वह क्षण इतना सूक्ष्म है कि साधारण बुद्धि की पकड मे नही आता। इसी से वहा निर्विकल्पता की अनुभूति नही होती।

१५४ सर्वज्ञ का ज्ञान व दर्शन युगपत कैसे होता है ?

जैसे दर्पण व तद्‌गत प्रतिबिम्ब दोनो मे से किसी भी एक की ओर लक्ष्य न करे तो दोनो बाते युगपत दिखाई देती है, वैसे ही सर्वज्ञ को आत्मा की स्वच्छता तथा तद्‌भव ज्ञेयाकार युगपत दिखाई देते है। वहा आत्मा की स्वच्छता के सामान्य प्रतिभास वाला अंश दर्शन है और प्रतिबिम्बो के विशेष प्रतिभास वाला अंश ज्ञान है। (यह कथन भी जैनागम का अभिप्राय व्यक्त करने के लिये किया गया समझना, अन्यथा शुद्धात्मा को प्राप्त केवली मे ऐसा होना युक्ति सिद्ध नही है क्योकि उसका स्वरूप तो चित्प्रकाश मात्र है)

१५५ छद्मस्थों को इस प्रकार दर्शन व ज्ञान युगपत क्यों नहीं होता ?

अल्प मात्र पदार्थो को जानने की शक्ति रखने वाले छद्मस्थों में 'मैं इस पदार्थ को छोड कर अब दूसरे पदार्थ को जानू' इस प्रकार का विकल्प या प्रयत्न विशेष पाया जाता है। इसलिये उनका उपयोग बराबर बदलता रहता है, अत. उसमे आगे पीछे का क्रम पडना स्वाभाविक है।

१५६ सर्वज्ञ के उपयोग में क्रम क्यों नहीं पड़ता ?

सर्व को युगपत जान लेने के कारण सर्वज्ञ को नवीन जानने के लिये कुछ शेप नहीं रहता, जिससे कि वह एक को छोड़ कर दूसरे को जानने के प्रति उद्यम करें।

(१५७) दर्शन चेतना (दर्शनोपयोग) के कितने भेद है ?

चार है—चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधि दर्शन और केवल दर्शन।

(१५८) चक्षु दर्शन किसे कहते हैं ?

नेत्र इन्द्रिय जन्य मतिज्ञान से पहिले होने वाले सामान्य प्रतिभास या अवलोकन को चक्षुदर्शन कहते है।

(१५९) अचक्षु दर्शन किसे कहते हैं ?

चक्षु के सिवाय अन्य इन्द्रियो और मन सम्वन्धित मतिज्ञान से

पहले होने वाला सामान्य प्रतिभास या अवलोकन चक्षुदर्शन कहलाता है ।

(१६०) अवधि दर्शन किसे कहते हैं ?

अवधिज्ञान मे पहले होने वाले सामान्य अवलोकन को अवधि-दर्शन कहते हैं ।

(१६१) केवल दर्शन किसे कहते हैं ?

केवलज्ञान के साथ होने वाले सामान्य अवलोकन को केवल-दर्शन कहते है ।

१६२ 'दर्शन' सामान्य प्रतिभास का नाम हैं फिर उसमें भेद होने कैसे सम्भव हैं ?

वास्तव मे दर्शन तो एक ही प्रकार का हैं, यह भेद भिन्न ज्ञानों के कारणपने की अपेक्षा कर दिये गये हैं । जिस ज्ञान से पहिले हो वह नाम उस दर्शन को दे दिया जाता है ।

१६३ मतिज्ञान से पहिले कौन सा दर्शन होता है और क्यों ?

चक्षु अचक्षु दर्शन ही मतिज्ञान के दर्शन हैं, क्योंकि इन्द्रिय जन्य ज्ञान की ही मतिज्ञान सज्ञा है ।

१६४ चक्षु इन्द्रिय की भांति अन्य इन्द्रियो के पृथक पृथक दर्शन कहने चाहिये थे ?

यह कोई दोष नहीं है । भेद करने पर प्रत्येक इन्द्रिय के पृथक पृथक दर्शन कह सकते है ।

१६५ फिर चक्षु दर्शन को पृथक क्यो कहा ?

क्योंकि चक्षु इन्द्रिय जन्य ज्ञान को भी लोक मे देखना या दर्शन करना कहते हैं । उस ज्ञान से उस इन्द्रिय के दर्शन को पृथक करने के लिये उसका विशेष निर्देश करना न्याय है ।

१६६. श्रुत ज्ञान से पूर्व कौन सा दर्शन होता हैं ?

मतिज्ञान पूर्वक होने से श्रुतज्ञान का पृथक से कोई दर्शन नही । पहले दर्शन तदनन्तर मतिज्ञान और तदनन्त तत्सम्वन्धी श्रुत ज्ञान, ऐसा क्रम है ।

१६७ अवधि ज्ञान से पूर्व कौन सा दर्शन होता है ?
अवधि दर्शन

१६८. मन पर्यय ज्ञान से पहिले कौन सा दर्शन होता है ?
मनोमति ज्ञान पूर्वक होने से वह ज्ञान ही इसके दर्शन के स्थान पर है। अत पृथक से इसके दर्शन की कोई आवश्यकता नही।

१६९ केवल ज्ञान से पहिले कौन सा दर्शन होता है ?
केवल ज्ञान से पहले नही बल्कि उसके साथ साथ केवल दर्शन होता है, क्योकि उसमे दर्शन ज्ञान का क्रम नही होता।

(९. सम्यक्त्व)

(१७०) सम्यक्त्व गुण किसको कहते हैं ?
जिस गुण के प्रगट (व्यक्त) होने पर अपने शुद्ध आत्मा का प्रतिभास हो उसको सम्यक्त्व गुण कहते है।

१७१. सम्यक्त्व व सम्यग्दर्शन में क्या अन्तर है ?
सम्यक्त्व गुण है और सम्यग्दर्शन उसकी पर्याय।

१७२ सम्यक्त्व गुण की कितनी पर्याय होती है ?
दो होती है-एक मिथ्यादर्शन, दूसरी सम्यग्दर्शन।

१७३ मिथ्या दर्शन किसे कहते हैं ?
तत्वों मे तथा आत्मा के स्वरूप मे विपरीत व अन्यथा श्रद्धा को मिथ्यादर्शन कहते हैं जैसे शरीर को 'मैं' रूप समझना।

१७४. मिथ्यादर्शन के कितने भेद हैं ?
एकान्त, विपरीत सशय, अज्ञान व विषय इस प्रकार पांच भेद है। उनका विस्तार आगे अध्याय ३ मे किया गया है।

१७५ सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ?
तत्वो मे तथा आत्म के स्वरूप मे समीचीन श्रद्धा को सम्यग्दर्शन कहते है, जैसे शरीर को जड़ और आत्मा को चेतन प्रकाश रूप समझना।

१७६. सम्यग्दर्शन कितने प्रकार का है ?
तीन प्रकार का है—औपशमिक, क्षायिक व क्षयोपशमिक।

१७७. औपशमिकादि सम्यग्दर्शन किन्हे कहते हैं ?
मिथ्यात्व कर्म के उपशमादि के निमित्त से आविर्भूत होने के कारण उनकी औपशमिकादि सज्ञा है। इन का अर्थ आगे अध्याय ३ मे दिया गया है।

(१० चारित्र)

(१७८) चरित्र किसको कहते हैं ?
वाह्य व अभ्यन्तर क्रिया के निरोध से प्रादुर्भूत आत्मा की शुद्धि विशेष को चारित्र कहते हैं।

(१७९) वाह्य क्रिया किसको कहते हैं ?
हिंसा करना, झूठ करना, चोरी करना मैथुन करना और परिग्रह सचय करना।

(१८०) आभ्यान्तर क्रिया किसे कहते हैं ?
योग व कषाय (उपयोग) को आभ्यन्तर क्रिया कहते हैं।
(योग व उपयोग का विस्तार आगे पृथक शीर्षक में किया गया है)

(१८१) कषाय किसे कहते हैं ?
क्रोध, मान, माया, लोभ रूप आत्म के विभाव परिणामो को कषाय कहते हैं।

(१८२) चारित्र के कितने भेद हैं ?
चार हैं—स्वरूपाचरण चरित्र, देश चारित्र, सकल चारित्र व यथाख्यात चरित्र।

(१८३) स्वरूपाचरण चारित्र किसे कहते हैं ?
शुद्धानुभव के अविनाभावी चारित्र विशेष को स्वरूपाचरण चारित्र कहते हैं।

(१८४) देश-चारित्र किसे कहते है ?

श्रावक के व्रतो को देश चारित्र कहते है । (देखो रत्नकाण्ड श्रावकाचार)

(१८५) सकल चारित्र किसे कहते हैं ?

मुनियो के व्रतो को सकल चरित्र कहते है ।

(१८६) यथाख्याव चारित्र किसे कहते है ?

कषायो के सर्वथा अभाव से प्रादुर्भूत आत्मा की शुद्धि विशेप को यथाख्यात चारित्र कहते है ।

१८७ चारों चारित्र किन- किन को होते है ?

स्वरूपाचरण चारित्र चौथे गुणस्थान से १३ वे गुणस्थान तक होता । उसका जघन्य अश चौथे मे और उत्कृष्ट अश १४ वे मे होता है । देश चारित्र पचम गुणस्थान की ११ प्रतिमाओ मे होता है । जघन्य अश पहली प्रतिमा मे और उत्कृष्ट अश ११ वी प्रतिमा मे । सफल चारित्र छटे से दसवे गुण स्थान तक होता है । जघन्य छटे मे और उत्कृष्ट १० वें मे ।

यथाख्यात चरित्र ११ वे से १४ वें गुण म्थान तक होता है । जघन्व १० वे मे औंर उत्कृष्ट १४ वे मे । (विशेष आगे देखो अध्याय ४)

१८८ सकल चारित्र के भेद बताओ ?

पाच है—सामायिक, छेदापस्थापना, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्म-साम्पराय और यथाख्यात ।

१८९ सामायिक चरित्र किसे कहते है ?

लाभ अलाभ मे, शत्रु मित्र मे, दु:ख सुख में, नगर अरण्य में, निन्दा प्रशसा मे, इत्यादि सब द्वन्दो में समता रखना । राग द्वेष, इष्टानिष्ट बुद्धि या हर्ष विषाद जागृत न हो सामायिक चरित्र है ।

१९०. माला जपने को भी सामायिक कहते हैं ?

वह केवल उपचार कथन है, क्योकि वहा भी कुछ काल के

लिये इन द्वन्दों मे उपयोग हटा कर पचपरमेष्ठी आदि के प्रति लगाने का अभ्यास किया जाता है, और इस प्रकार उतने के लिये उसमे भी आशिक समता के चिन्ह प्रगट हो जाते है।

१९१ सामायिक चारित्र किसको होता है ?

छटे गुण स्थानवर्ती मुनि से लेकर ९ गुणस्थान तक होता हैं छटे गुणस्थान मे उसका जघन्य अश होता है और ९ वें मे उत्कृष्ट ।

१९२ देश चारित्र मे भी तो सामायिक व्रत होता है ?

वह सामायिक चारित्र का अभ्यास है, जो निश्चित काल पर्यन्त प्रतिज्ञा पूर्वक किया जाता है, पर यहा उन गुणस्थानवर्ती मुनियो का स्वभाव ही ऐसा हो जाता है, और इसी लिये वह चारित्र नाम पाता है ।

१९३ ध्यान रूप सामायिक समय होता है या अन्य समयों में भी ?

उन वीतरागी साधुओ का जीवन या स्वभाव ही समता मयी हो जाने से उन्हे वह चारित्र २४ घन्टे होता है, भले ध्यान करो या उपदेश दो या आहार विहार आदि क्रिया करो । इतनी बात अवश्य है कि ध्यान के समय वह विशेप वृद्धिगत होता है ।

१९४. छेदोपस्थापना चारित्र किसे कहते है ?

पूर्व सस्कार वश या कर्मोदय वश जब साधु को जो व्रतो आदि के धारण पोषण के विकल्प रहते हैं उसे छेदो पस्थापना चारित्र कहते है । सामायिक रूप यथार्थ स्वभाव का छेद हो जाना तथा उपयोग को अशुभ से रोक कर व्रतो आदि के शुभ भावो मे स्थापित करना, ऐसा इसका अर्थ है ।

१९५ छेदोपस्थाना चारित्र किसको होता है ?

यह भी छटे से ९ वे गुणस्थान तक होता है । पर यहा छटे मे उत्कृष्ट तथा ९ वे मे जघन्य होता है, क्योकि विकल्पात्मक होने से यह वास्तव मे सामायिक से उलटा है । जू जू साधु ऊपर की भूमिका मे पहुँचता है तू तू अधिक अधिक सम होता

जाता है और विकल्प उत्तरोत्तर घटते जाते है।

१९६. परिहार विशुद्धि चारित्र किसे कहते है ?

सामायिक चारित्र के प्रभाव से कषायो की अत्यन्त क्षति या परिहार होकर भावों मे अत्यन्त विशुद्धि या उज्जवलता की प्रगटता होना परिहार विशुद्धि चारित्र है।

१९७ परिहार विशुद्धि किनको होता है ?

यह भी उपरोक्त प्रकार ही छटे से ९वे गुणस्थान तक होता है।

१९८ सूक्ष्म साम्पराय चारित्र किसे कहते है ?

क्रोध, मान, माया व स्थूल लोभ का सर्वथा अभाव हो जाने पर जब उस साधु मे लोभ का अन्तिम सूक्ष्म अंश अवशेष रहता है। उस समय उसके चारित्र को सूक्ष्म साम्पराय या सूक्ष्म-कपाय कहते है।

१९९ सूक्ष्म साम्पराय किनको होता है ?

केवल १०वे गुणस्थान मे होता है।

२००. यथा ख्यात चारित्र किसे कहते है और किन्हें होता है ?

इसका स्वरूप कह दिया गया है। यहा विशेष इतना समझना कि १०वे गुणस्थान के अन्त मे सूक्ष्म लोभ भी समाप्त हो जाने पर सम्पूर्ण कषायें निखशेष हो जाती हैं। तब जीव का जो ज्ञाता दृष्टास्वभाव है वह प्रगट हो जाता है, क्योकि कषाय ही उसकी मलिनता का कारण थी। जैसे स्वभाव कहा गया है वैसा ही प्रगट हो जाने से इस चारित्र का नाम यथाख्यात है। इसका स्वामित्व पहिले कह दिया गया, ११ वे से १४ वे तक होता है।

२०१ पूर्ण यथाख्यात चारित्र में जघन्य उत्कृष्ट का भेद कैसे सम्भव है ?

यद्यपि उपयोग पूर्ण होने से यथाख्यात है, पर योग में कमी है। निश्चल योग ही यथाख्यात है। जब तक वह प्राप्त नही होता तब जघन्यता उत्कृष्टता मानना ठीक ही है।

(११ सुख)

(२०२) सुख किसको कहते हैं ?

आल्हाद स्वरूप आत्मा के परिणाम विशेष को सुख कहते है (विशेष देखो अध्याय ५ अधिकार)।

२०३. सुख कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—ऐन्द्रिय सुख और दूसरा अतीन्द्रिय सुख।

२०४ ऐन्द्रिय सुख किसे कहते हैं ?

पाचो इन्द्रियो के विषय भोगने से जो सुख होता है उसे ऐन्द्रिय सुख कहते हैं। यह सुख लौकिक होने से सर्व परिचित है।

२०५ अतीन्द्रिय सुख किसे कहते हैं ?

स्वरूप स्थिरता द्वारा, जो ज्ञाता दृष्टा रूप स्वाभाविक भावमें जो निराकुलता व निर्विकल्पता उत्पन्न होती है, उसे अतीन्द्रिय सुख कहते है। अलौकिक होने से सम्यग्दृष्टि जीवो के परिचय मे आता है।

२०६ मोक्षमार्ग व मोक्ष में कौन सा सुख इष्ट है ?

अतीन्द्रिय ही स्वाभाविक व निराश्रय होने से वहा इष्ट है, क्योकि पराश्रित होने से इन्द्रिय सुख तो अनेको आकुलतायें उत्पन्न करने वाला है और इसलिये दु,ख ही माना गया है।

(१२ वीर्य)

(२०७) वीर्य किसको कहते है ?

आत्मा की शक्ति को वीर्य कहते है।

२०८ आत्मा की शक्ति से क्या समझे ?

आत्मा की शक्ति उसके सर्व गुणो मे ओत प्रोत है, जैसे जानने की हीनाधिक शक्ति, सकल्प शक्ति आदि।

२०९ वीर्य कितने प्रकार का है ?

दो प्रकार का-शारीरिक व आत्मिक। अथवा तीन प्रकार का शारीरिक, व वाचासिक मानसिक।

२१०. **शारीरिक बल किसे कहते हैं ?**
भार ढोने अथवा कुश्ते लडने का बल शारीरिक है ।

२११ **वाचसिक बल किसे कहते है ?**
वचन बोलने की शक्ति अथवा वाद विवाद शक्ति ।

२१२ **मानसिक बल किसे कहते हैं ?**
विचारणा, धारणा, स्मरण, सकल्प आदि की शक्ति ।

२१३. **आत्मिक बल किसे कहते हैं ?**
उपसर्ग आने पर स्वरूप स्थिरता भग न होना आत्मिक बल है । मनो चाञ्चल्य आत्मिक निर्बलता है ।

२१४ **मोक्ष मार्ग या मोक्ष मे कौन सा बल इष्ट है ?**
आत्मिक बल ।

२१५ **वीर्य गुण जीव मे ही होता है या अन्य द्रव्यों में भी ?**
सभी द्रव्यों मे अपनी अपनी जाति का वीर्य होता; जैसे कि पुद्गल मे स्कन्ध निर्माण करने का, तथा एक समय मे समस्त लोक को उल्लंघन कर जाने का वीर्य ।

२१६ **जीव व अजीव के वीर्य मे क्या अन्तर है ?**
जोव का वीर्य चेतन शक्ति द्वारा आका जाता है और अजीव का वीर्य उनके अनेक विशेष गुणो की शक्ति द्वारा आका जाता है, यथा बिजली की शक्ति वाष्प शक्ति, ताप शक्ति, चुम्बक शक्ति इत्यादि । इसलिये जीव का वीर्य चेतनात्मक है और अजीवका जडात्मक ।

(१३ भव्यत्व)

(२१७) **भव्यत्वगुण गुण किसे कहते है ?**
जिस शक्ति के निमित्त से आत्मा के सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान व सम्यग्चारित्र प्रगट होने की योग्यता हो उसे भव्यत्व गुण कहते है ।

(२१८) **अभव्यत्व गुण किसे कहते है ?**
जिस शक्ति के निमित्त से आत्मा मे सम्यग्दर्शन ज्ञान व चारित्र

प्रगट होने की योग्यता न हो उसे अभव्यत्व गुण कहते है।

२१६. **क्या अभव्य जीव मुक्त हो सकता है ?**

नही, क्योकि उसको सम्यग्दर्श प्रकट होने की योग्यता नही है।

२२० **क्या भव्य जीव अवश्य मुक्त होता है ?**

सभी भव्य जीवो को मुक्त होना अवश्यम्भावी नही है। हा जो कोई भी मुक्त होता है, वह भव्य ही होता है।

२२१. **भव्य कितने प्रकार के है ?**

वैसे तो एक ही प्रकार का है, पर मुक्ति की निकटता व दूरता की अपेक्षा कई प्रकार के है; जैसे आसन्न भव्य, दूर भव्य, दूरातिदूर भव्य, अभव्य समभव्य इत्यादि।

२२२. **भव्य के उपरोक्त भेदो के लक्षण करो ?**

निकट काल मे भक्ति की योग्यता रखने वाले सम्यग्दृष्टि आसन्न भव्य है। कुछ काल पश्चात मुक्त होने वाले धर्म के श्रद्धालु दूर भव्य है। अति दूर काल मे काललब्धि वश कदाचित मुक्त होने वाले दूरातिदूर भव्य है। और कभी भी सम्याक्त्व सम्पादन के प्रति उद्धत न होगे ऐसे अभव्य समभव्य है।

२२३ **दूरातिदूर भव्य और अभव्य मे क्या अन्तर है ?**

यह अन्तर केवल ज्ञान गम्य है, छद्मस्थ गोचर नही।

२२४. **यदि कदाचित हम अभव्य हो तो मोक्ष का पुरुषार्थ किस लिये करे ?**

पुरुषार्थी कभी अपने को अभव्य नही समझता, जैसे कि व्यापारी टोटे की शका नही करता। प्रमादी के हृदय मे ही ऐसी शका होती है।

(१४ जीवत्व व प्राण)

(२२५) **जीवत्व गुण किसको कहते है ?**

जिस शक्ति के निमित्त से आत्मा प्राण धारण करे उसको जीवत्व गुण कहते है।

(२२६) प्राण किसको कहते है ?

जिनके सयोग से यह जीव जीवन अवस्था को प्राप्त हो, और वियोग से मरण अवस्था को प्राप्त हो उसको प्राण कहते है ।

(२२७) प्राण के कितने भेद है ?

दो है—द्रव्य प्राण और भाव प्राण ।

(२२८) द्रव्य प्राण किसे कहते है ?

शरीर के जिन अवयवो या श्वास आदि के निमित्त से जीव आयु धारण किये रहता है उन्हे द्रव्य प्राण कहते है ।

२२९ द्रव्य प्राण के कितने भेद है ?

(चार हैं—इन्द्रिय, बल, आयु और श्वासोच्छवास ।) अथवा दश ह—पाच इन्द्रिय, स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु व कर्ण, तीन बल--मन, वचन व काय, तथा आयु व श्वासोच्छवास ।

(२३०) किस जीव के कितने प्राण होते है ?

एकेन्द्रिय जीव के चार प्राण—स्पर्शनेन्द्रिय, काव्य बल, आयु व श्वासोच्छवास । द्वीन्द्रिय के छह प्राण—दो इन्द्रिय, वचन व काय बल, आयु व श्वासोच्छवास । त्रीन्द्रिय के सात प्राण—पूर्वोक्त छ और एक घ्राणेन्द्रिय । चतुरेन्द्रिय के आठ प्राण—पूर्वोक्त सात और एक चक्षु इन्द्रिय । पचेन्द्रिय असैनी के नौ प्राण—पूर्वोक्त आठ और एक कर्णेन्द्रिय । पचेन्द्रिय सैनी के दस—पूर्वोक्त नौ और एक मन बल ।

(२३१) भाव प्राण किसको कहते हैं ?

आत्मा की जिस शक्ति के निमित्त से इन्द्रियादिक अपने कार्य में प्रवर्ते उसे भाव प्राण कहते है ।

(२३२) भाव प्राण के कितने भेद हैं ?

(दो भेद है—उपयोग और योग-अथवा दो भेद हैं—भावेन्द्रिय और भाव बल ।

(२३३) भावेन्द्रिय के कितने भेद है ?

पाच है—स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु व कर्ण ।

२३४ द्रव्येन्द्रिय व भावेन्द्रिय मे क्या अन्तर है ?

'द्रव्येन्द्रिय' शरीर मे अथवा आत्म प्रदेशो मे नेत्रादि ही आकार रचना है, और भवेन्द्रिय उन नेत्रादि गोलको मे जानने देखने की चेतना शक्ति या उपयोग। इनके भेद प्रभेदादि का विस्तार आगे अध्याय ४ मे दिया है।

२३५ बल प्राण किसे कहते है ?

मन, वचन, काय द्वारा प्रवृत्ति करने की चेतन शक्ति को बलप्राण कहते है। इसी का दूसरा नाम योग है।

(२३६) बल प्राण के कितने भेद हैं ?

तीन हैं—मनोबल, वचनबल, कायबल।

(१५. योग व उपयोग)

(२३७) योग किसे कहते हैं ?

मन, वचन व काय के निमित्त से आत्मा के प्रदेशो मे हलन चलन होने को योग कहते है।

२३८. योग के कितने भेद हैं ?

तीन भेद हैं—मन, वचन व काय। अथवा दो है—शुभ व अशुभ।

२३९. प्रदेश कम्पन तो एक ही प्रकार का होता है, फिर तीन भेद क्यो ?

वास्तव मे योग एक ही है, पर निमित्तो की अपेक्षा ये तीन भेद करके बताया जाता है। मन के निमित्त से हो तो वही परिस्पन्दन मनोयोग कहलाता है और वचन व काय के निमित्त से हो तो वचन व काय योग कहलाता है।

२४० शुभ योग किसे कहते है ?

मन वचन व काय की पुण्यात्मक प्रवृत्ति को शुभ योग कहते है।

२४१ अशुभ योग किसे कहते हैं ?

मन वचन काय की पापात्मक प्रवृत्ति को अशुभ योग कहते हैं।

२४२ प्रवृत्ति को योग क्यों कहते हैं ?

क्योकि प्रवृत्ति मन वचन व काय की हलन चलन क्रिया रूप होती है। (द्रव्य व भाव योग के लिये देखो अध्याय ४ अधिकार २)

(२४३) उपयोग किसे कहते है ?

क्षयोपशम के हेतु से चेतना के परिणाम (या परिणति) विशेष को उपयोग कहते है।

२४४ उपयोग कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—दर्शनोपयोग व ज्ञानोपयोग। अथवा तीन प्रकार का—शुभोपयोग, अशुभोपयोग और शुद्धोपयोग।

२४५ शुभोपयोग किसे कहते है ?

चेतन के पुण्यात्मक परिणामों को या परिणति को कहते है।

२४६ अशुभोपयोग किसे कहते हैं ?

चेतन के पापात्मक परिणामो को या परिणति को कहते है।

२४७ शुद्धापयोग किसे कहते हैं ?

चेतन के ज्ञाता द्रष्टा रूप वीतराग व साम्य परिणामों को या परिणति को कहते हैं।

२४८ योग व उपयोग मे क्या अन्तर है ?

योग का सम्बन्ध जीव के प्रदेशो के साथ होने से वह द्रव्यात्मक है और उपयोग का सम्बन्ध जीव के चेतन भाव के साथ होने से वह भावात्मक है। योग में परिस्पन्दन या हलन डुलन रूप प्रवृत्ति होती है और उपयोग मे भावों की परिणति।

२४९. प्रवृत्ति व परिणति में क्या अन्तर है ?

प्रवृत्ति क्रिया या परिस्पन्दन रूप होती है अर्थात हलन डुलन रूप होती है और परिणति केवल परिणमन रूप होती है अर्थात भावो की शक्ति मैं तरतमता रूप होती है। प्रवृत्ति कराना क्रियावती शक्ति का काम है और परिणति कराना

भाववति शक्ति का। प्रवृत्ति द्रव्य या व्यजन पर्याय है और परिणति भाव या अर्थ पर्याय।

२५०. उपयोग की भांति योग के भेदो में भी शुद्धोपयोग क्यों नहीं कहा ?

योग अशुद्ध ही होता है शुद्ध नही, क्योकि मन वचन काय के निमित्त बिना स्वतत्र नही होता। ज्ञाता दृष्टा भाव बिना किसी निमित्त के अथवा सर्व निमित्तो का अभाव हो जाने पर स्वभाव से होता है। पर का सयोग न हो उसे ही शुद्ध कहते है। इसलिये उपयोग मे ही शुद्धपना सम्भव है योग मे नही।

२५१. मोक्ष मार्ग में योग व उपयोग का सार्थक्य दर्शाओ।

सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र रूप रत्नत्रय मोक्ष मार्ग है। तहा सम्यग्दर्शन व ज्ञान उपयोग रूप है और सम्यग्चारित्र योग रूप।

२५२ समता रूप भाव को चारित्र कहा है, वह तो उपयोग है।

वास्तव मे अशुभ से हटकर शुभ मे प्रवृत्ति करने तक ही चारित्र रहता है, इसके आगे प्रयत्न का अभाव हो जाने से चारित्र का भी अभाव हो जाता है। भूतपूर्व नय के उपचार से ही वहा चारित्र कहा जाता है। समता रूप वह स्थान सर्वथा शुद्धोपयोग रूप होता है, अत वहां परिणति होती है प्रवृत्ति या योग नहीं।

२५३ कषाय भाव योग रूप है या उपयोग रूप ?

भावात्मक होने से वह उपयोग रूप है योग रूप नही, क्योकि उसमे प्रवृत्ति नही अन्तरग परिणति ही होती है।

२५४ कषाय, लेश्या व वासना का स्वरूप दर्शाओ।

(देखो आगे अध्याय ४ में प्रथम अधिकार)

(१६. क्रियावती व भाववती शक्ति)

२५५ शक्ति किसे कहते हैं ?

गुण की भाति जो हर समय पर्याय या व्यक्ति रूप न रहती

हो, बल्कि योग्य निमित्तादि मिलने पर कदाचित व्यक्त होती हो वह शक्ति है।

२५६. जीव में गुणों के अतिरिक्त कितनी शक्तिये हैं ?

तीन प्रधान है—क्रियावती शक्ति, भाववती शक्ति व वैभाविकी शक्ति।

२५७ क्रियावती शक्ति किसे कहते हैं ?

जिस शक्ति के योग से द्रव्य गमनागमन या हिलन डुलन कर सके उसे क्रियावती शक्ति कहते है।

२५८. क्रियावती शक्ति के कितने कार्य हैं ?

दो है—परिस्पन्दन व क्रिया।

२५९. परिस्पन्दन व क्रिया में क्या अन्तर है ?

द्रव्य के प्रदेशो का भीतरी कम्पन परिस्पन्दन कहलाता है और पूरे द्रव्य का बाहरी गमनागमन क्रिया कहलाती है।

२६०. क्रियावती को शक्ति क्यों कहा गुण क्यों नहीं ?

क्योंकि द्रव्य सदा गमन करता रहे ऐसा नही होता, न ही उसके प्रदेशो मे नित्य परिस्पन्दन पाया जाता है। जैसे कि संसारी जीव के प्रदेशो मे परिस्पन्दन होता रहने पर भी मुक्त जीव मे वह नही पाया जाता और इसी प्रकार स्कन्ध मे होता रहने पर भी परमाणु में नही पाया जाता अर्थात द्रव्य की अशुद्धावस्था मे ही परिस्पन्दन होता है शुद्धावस्था में नही, अतः उसके कारण को गुण न कहकर शक्ति कहा गया है।

२६१. भाववती शक्ति किसे कहते है ?

क्रियावती शक्ति को छोडकर द्रव्य के अन्य सर्व गुण नित्य परिणमन करते रहते है यही उस द्रव्य की भाववती शक्ति है।

२६२ भाववती को शक्ति क्यो कहा ?

क्योकि इसकी कोई स्वतन्त्र व्यक्ति नही होती। द्रव्य मे भावो की अवस्थिति की द्योतक मात्र है।

२६३ वैभाविकी शक्ति किसे कहते है ?

जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य मे दूसरे द्रव्य का सम्बन्ध होने पर विभाव परिणमन हो (अर्थात अशुद्ध अवस्था को प्राप्त हो जाये ।)

२६४ वैभाविकी गुण क्यों न कहा ?

क्यो कि द्रव्य सदा अशुद्ध परिणमन करे ऐसा नही होता । दूसरे वैभाविकी शक्ति की कोई पृथक व्यक्ति उपलब्ध नही होती । द्रव्य मे विभाव परिणमन की सामर्थ्य की द्योतक मात्र है ।

२६५ विभाव से क्या समझे ?

अनेक द्रव्यो के परस्पर बन्ध को प्राप्त हो जाने से उसमे जो अशुद्धता आ जाती है, उसे विभाव कहते है—जैसे जीव मे शरीर व रागद्वेषादि और पुद्गल मे स्कन्ध ।

२६६. क्रियावती व भाववती शक्ति मे क्या अन्तर है ?

क्रियावती शक्ति का व्यापार प्रदेशत्व गुण मे है या द्रव्य के प्रदेशो मे होता है और भाववती शक्ति का व्यापार अन्य सब गुणो मे ।

२६७. भाववती शक्ति व वैभाविकी शक्ति मे क्या अन्तर है ?

भाववती शक्ति का शुद्ध व अशुद्ध सभी द्रव्यो के गुणो मे सामान्य रूप से परिणमन कराना है और वैभाविकी शक्ति का व्यापार अन्य द्रव्य का सयोग कराकर उसमे अशुद्धता कराना है ।

२६८. ये तीनों "शक्तिये" किन-किन द्रव्यो मे पाई जाती हैं ?

भाव शक्ति सामान्य है क्योकि सभी द्रव्यो मे सामान्य रूप से पाई जाती है, अर्थात सभी द्रव्य परिणमन करने की सामर्थ्य से युक्त है । परन्तु क्रियावती व वैभाविकी शक्ति विशेष है । ये जीव व पुद्गल मे ही पाई जाती हैं, क्योकि वे दोनो गमन करने तथा परस्पर मे बंध कर अशुद्ध होने मे समर्थ हैं ।

२६९. क्या शुद्ध जीव व पुद्गल में भी वैभाविकी शक्ति है ?

हा है, पर निमित्तो का अभाव होने के कारण व्यक्त नही हो पाती। कारण कि वह शक्ति है गुण नही, जो कि उसका नित्य कुछ न कुछ परिणमन पाया जाये।

२७० क्या सिद्ध भगवान में क्रियावती व वैभाविक शक्ति है ?

हा है, पर व्यक्त नही हो सकती। व्यर्थ पड़ी रहती है।

२७१. क्या स्थित हुए जीव व पुद्गल में क्रियावती शक्ति है ?

हा है, परन्तु इस समय व्यक्त नही है, द्रव्य के चलने पर व्यक्त हो जायेगी। अथवा प्रदेश परिस्पन्दन रूप से उनके भीतर अब भी व्यक्त है।

२७२. जीव द्रव्य में क्रियावती व भाववती शक्ति का द्योतन किन नामों से किया जाता है ?

योग व उपयोग शब्द से, क्योकि योग परिस्पन्दन स्वरूप है और उपयोग परिणमन स्वरूप।

२७३ वैभाविकी शक्ति के रहते सिद्ध भगवान पुन अशुद्ध क्यों नहीं हो जाते ?

वैभाविकी शक्ति गुण नही जो इसे हर अवस्था मे व्यक्त होना ही पडे। निमित्तादि मिलने पर व्यक्त होती हैं। और सिद्धावस्था मे उनका अभाव है।

२/५ पर्यायाधिकार

(१ सहभावी व क्रमभावी पर्याय)

१ **पर्याय किसे कहते है ?**
द्रव्य के विशेष को पर्याय कहते है।

२ **पर्याय व विशेष कितने प्रकार के होते हैं ?**
दो प्रकार के—सहभावी व क्रमभावी। अथवा तिर्यक् विशेष व ऊर्ध्व विशेष

३. **सहभावी व क्रमभावी विशेष अर्थात क्या ?**
सर्व अवस्थाओ मे एक साथ रहने से गुण सहभावी विशेप है और क्रमपूर्वक आगे पीछे होने से पर्याय क्रमभावी विशेप हैं।

४. **तिर्यक व ऊर्ध्व विशेष अर्थात क्या ?**
जिनका काल एक हो पर क्षेत्र भिन्न ऐसे विशेप तिर्यक विशेप हैं, जैसे द्रव्य की अपेक्षा एक जाति के अनेक द्रव्य, क्षेत्र की अपेक्षा एक द्रव्य के अनेक प्रदेश, भाव की अपेक्षा एक द्रव्य के अनेक गुण। जिनका क्षेत्र एक हो पर काल भिन्न ऐसे विशेप ऊर्ध्व विशेप है, जैसे द्रव्य की अपेक्षा एक ही जीव की आगे पीछे होने वाली नर नारकादि व्यञ्जन पर्यायें; और भाव की अपेक्षा एक ही गुण की क्रमवर्ती अर्थ पर्यायें।

५. **आगम मे तो अवस्थाओं को ही पर्याय कहा है ?**
द्रव्य, गुण व पर्याय तीनो प्रकार के विशेप ही पर्याय शब्द वाच्य हैं, पर रूढि वश केवल अवस्थाओ के लिये ही पर्याय शब्द प्रयुक्त हुआ है।

(२. द्रव्य व गुण पर्याय)

६. क्रमभावी पर्याय कितने प्रकार की होती हैं ?
दो प्रकार की—द्रव्य पर्याय व गुण पर्याय।

७. द्रव्य पर्याय किसे कहते हैं ?
अनेक द्रव्यों मे एकता की प्रतिपत्ति को द्रव्य पर्याय कहते है।

८. अनेक द्रव्यों में एकता की प्रतिपत्ति क्या ?
अनेक द्रव्यों के मिलकर परस्पर एकमेक हो जाने से जो सयोगी द्रव्य बनता है उसे एक द्रव्यरूप ग्रहण करना ही अनेकता मे एकता की प्रतिपत्ति है; जैसे ताम्बे व जस्ते के सयोग से उत्पन्न एक पीतल नाम का द्रव्य।

९. द्रव्य पर्याय कितने प्रकार की होती है ?
दो प्रकार की—एक समान जातीय दूसरी असमान जातीय।

१०. समान जातीय द्रव्य पर्याय किसे कहते हैं ?
अनेक परमाणुओ के संयोग से उत्पन्न स्कन्ध समान जातीय द्रव्य पर्याय है; क्योकि उसके कारणभूत मूल परमाणु सब एक ही पुद्गल जाति के हैं।

११. असमान जातीय द्रव्य पर्याय किसे कहते है ?
जीव पुद्गल के सयोग से उत्पन्न नर नारकादि पर्याये असमान जातीय द्रव्य पर्याय हैं, क्योकि उसके कारणभूत मूल जीव व पुद्गल भिन्न जातीय द्रव्य है।

१२. अन्य प्रकार के द्रव्य पर्याय किसे कहते हैं ?
द्रव्य के आकार की अवस्थाओ को, अथवा उसकी गमनागमन रूप क्रिया को अथवा प्रदेश परिस्पन्दन को द्रव्य पर्याय कहते है।

१३. आकार आदि को द्रव्य पर्याय कैसे कहते हैं ?
क्योंकि गुणों का आश्रयभूत द्रव्य क्षेत्रात्मक है इसलिये उसके क्षेत्र या प्रदेशो की सर्व अवस्थायें द्रव्य पर्याये कहलायेंगी, भले ही वह उनकी रचना विशेष हो या क्रिया व परिस्पन्दन।

१४ द्रव्य पर्याय कितने प्रकार की होती है ?

दो प्रकार की—स्वभाव द्रव्य पर्याय व विभाव द्रव्य पर्याय

१५. स्वभाव व विभाव अर्थात् क्या ?

जो बिना किसी दूसरे पदार्थ की अपेक्षा किये द्रव्य मे स्वत व्यक्त हो वह स्वभाव होता है और पर सयोग के निनित्त से प्रगट हो सो विभाव कहलाता है। स्वभाव शुद्ध होता है और विभाव अशुद्ध।

१६ स्वभाव द्रव्य पर्याय किसे कहते हैं ?

शुद्ध द्रव्यो के आकार को स्वभाव द्रव्य पर्याय कहते है, जैसे मुक्तात्मा का अथवा धर्मास्तिकाय का आकार।

१७ विभाव द्रव्य पर्याय किसे कहते हैं ?

अनेक द्रव्यात्मक सयोगी आकार को विभाव द्रव्य पर्याय कहते है, जैसे शरीरधारी ससारी जीव का आकार या स्कन्ध।

१८ एक द्रव्यात्मक होने से स्वभाव द्रव्य पर्याय नहीं होती ?

नही, होती है, क्योंकि वह भी अनेक प्रदेश प्रचय रूप है।

१९ क्रिया व परिस्पन्दन को द्रव्य पर्याय कहना ठीक नहीं ?

ठीक है, साधारणत उसे द्रव्य पर्याय न कहकर क्रियावती शक्ति की पर्याय कह दिया जाता है, पर वास्तव मे वह भी द्रव्य पर्याय ही है। कारण कि एक तो वह प्रदेशो मे प्रदेश प्रचयरूप सम्पूर्ण द्रव्य मे होती है और दूसरे द्रव्य के आकार निर्माण मे कारण है।

२० गुण पर्याय किसे कहते हैं ?

आकार से अतिरिक्त अन्य सर्व भावात्मक गुणो की पर्याय गुणपर्याय कहलाती है, जैसे चारित्र गुण की राग पर्याय और रस गुण की मीठी पर्याय।

२१. गुण पर्याय कितने प्रकार की होती है ?

दो प्रकार की—स्वभाव गुण पर्याय व विभाव गुण पर्याय।

२२ स्वभाव गुण पर्याय किसे कहते है ?

शुद्ध द्रव्यो के गुणो की पर्याय को स्वभाव गुण पर्याय कहते है;

जैसे मुक्तात्मा के ज्ञान गुण की केवल ज्ञान पर्याय तथा परमाणु के इस गुण को तद्योग्य सूक्ष्म पर्याय।

२३. विभाव गुण पर्याय किसे कहते हैं ?
अशुद्ध द्रव्यो के गुणो की पर्याय को विभाव गुण पर्याय कहते है, जैसे ससारी आत्मा के ज्ञान गुण की मति ज्ञान पर्याय और स्कन्ध के रस गुण की मीठी पर्याय।

(३. अर्थ व व्यंजन पर्याय)

(२४) पर्याय किसे कहते हैं ?
गुण के विकार को पर्याय कहते है।

२५ विकार अर्थात क्या ?
यहा विकार का अर्थ विकृत भाव ग्रहण न करना। इसका अर्थ है विशेप कार्य अर्थात गुण की परिणति से प्राप्त अवस्था विशेष।

(२६) पर्याय के कितने भेद है ?
दो है—व्यञ्जन पर्याय और अर्थ पर्याय (या द्रव्य पर्याय व गुण पर्याय)

(२७) व्यञ्जन पर्याय किसे कहते है ?
प्रदेशत्व गुण के विकार को व्यञ्जन पर्याय कहते है।

२८. प्रदेशत्व गुण के विकार से क्या समझें ?
द्रव्य का आकार ही प्रदेशत्व गुण का विकार या विशेष कार्य है; जैसे मनुष्य पर्याय का दो हाथ पैर वाला आकार।

२९. द्रव्य पर्याय व व्यञ्जन पर्याय में क्या अन्तर है ?
दोनो एकार्थ वाची है, क्योकि दोनो का सम्बन्ध प्रदेशत्व गुण से है।

(३०) व्यञ्जन पर्याय के कितने भेद हैं?
दो हैं—स्वभाव व्यञ्जन पर्याय और विभाव व्यञ्जन पर्याय।

(३१) स्वभाव व्यञ्जन पर्याय किसे कहते हैं ?
बिना दूसरे निमित्त से जो व्यञ्जन पर्याय हो उसे स्वभाव

व्यञ्जन पर्याय कहते है। जैसे जीव की सिद्ध पर्याय।

(३२) विभाव व्यञ्जन पर्याय किसे कहते हैं ?

दूसरे के निमित्त से जो व्यञ्जन पर्याय हो उसे विभाव व्यञ्जन पर्याय कहते हैं, जैसे जीव की नारकादि पर्याय।

(३३) अर्थ पर्याय किसे कहते हैं ?

प्रदेशत्व गुण के सिवाय अन्य समस्त गुणो के विकार को अर्थ पर्याय कहते है।

३४ गुण पर्याय व अर्थ पर्याय मे क्या अन्तर हैं ?

दोनो एकार्थवाची है, क्योकि दोनो का सम्बन्ध द्रव्य के भावात्मक गुणो से है।

(३५) अर्थ पर्याय के कितने भेद हैं ?

दो है—स्वभाव अर्थ पर्याय व विभाव अर्थ पर्याय।

(३६) स्वभाव अर्थ पर्याय किसे कहते हैं ?

विना दूसरे निमित्त के जो अर्थ पर्याय हो उसे स्वभाव अर्थ पर्याय कहते है, जैसे जीव की केवल ज्ञान पर्याय।

(३७) विभाव अर्थ पर्याय किसे कहते हैं ?

पर के निमित्त से जो अर्थ पर्याय हो उसे विभाव अर्थ पर्याय कहते है; जैसे जीव के रागद्वेषादि।

३८ व्यञ्जन व अर्थ पर्याय की अन्य विशेषतायें दर्शाओ ?

व्यञ्जन पर्याय छद्मस्थ ज्ञानगम्य, चिरस्थायी, वचन गोचर व स्थूल होती है, और अर्थ पर्याय केवलज्ञान गम्य, क्षणस्थायी, वचन अगोचर व सूक्ष्म होती है।

३९ स्थूल व सूक्ष्म पर्याय से क्या समझे ?

बाहर मे व्यक्त होने वाली पर्याय स्थूल तथा अव्यक्त रहकर अन्दर ही अन्दर होने वाली सूक्ष्म होती है।

४० चिर स्थायी व क्षण स्थायी से क्या समझे ?

कुछ मिनट, घन्टे, दिन, महीने, वर्ष या सागरो पर्यन्त टिकने वाली पर्याय चिरस्थायी होती है और एक समय या क्षुद्र

अन्तर्मुहूर्त मात्र टिकने वाली क्षण स्थायी कही जाती है।

४१ व्यञ्जन व अर्थ पर्याय पर ये लक्षण घटित करो ?

व्यञ्जन या द्रव्य पर्याय चिरकाल स्थायी है, क्योकि द्रव्य का आकार क्षण क्षण मे बदलता दिखाई नही देता, सारी आयु पर्यंत एक ही रहता है जैसे मनुष्य का आकार। बाहर मे व्यक्त होने से यह स्थूल व छद्मस्थ ज्ञान गम्य है। अर्थ या गुण पर्याय अन्दर ही अन्दर परिणमन करने से अव्यक्त है और इसी लिये सूक्ष्म। परिणम क्षण प्रति क्षण बराबर होता रहता है इसलिये केवल ज्ञान गम्य है।

४२ व्यञ्जन पर्याय भी तो क्षण प्रति क्षण बदलती है ?

एक ही मनुष्य पर्याय मे बालक युवा वृद्ध आदि पर्यायो के रूप मे यद्यपि व्यञ्जन पर्याये भी क्षण क्षण मे बदलती है पर उसका बाह्य व्यक्त रूप फिर भी चिरस्थायी ही रहता है, जैसे २ वर्ष शिशु, २ वर्ष किशोर, ४ वर्ष बालक, २० वर्ष युवा, २० वर्ष प्रौढ आदि। इनमे जो क्षण क्षण प्रति सूक्ष्म परिवतन होता है वह व्यवहार गम्य नही है।

४३. विभाव व स्वभाव व्यञ्जन पर्याये कितनी कितनी देर टिकती है ?

विभाव व्यञ्जन पर्याये अन्तर्मुहूर्त से लेकर सागरो पर्यंत टिकती है, जैसे निगोदिया पर्याय व सर्वादेव पर्याय। स्वभाव व्यञ्जन पर्याय सदा एक सी रहती है, बदलती नही, न ही वहा प्रदेशो मे परिस्पन्दन होता है, जैसे सिद्ध पर्याय या धर्मास्तिकाय का आकार।

४४. विभाव व स्वभाव अर्थ पर्याये कितनी कितनी देर टिकती है ?

विभाव अर्थ पर्याये कम से कम क्षुद्र अन्तर्मुहुर्त और अधिक से अधिक कुछ बडा अन्तर्मुहुर्त पर्यन्त ही टिकती है। जैसे सूक्ष्म व स्थूल क्रोध। स्वभाव अर्थ पर्याय केवल एक समय स्थायी है।

४५. विभाव अर्थ पर्याय तो छद्मस्थ ज्ञान गम्य होती है ?

हा अन्तर्मुहुर्त स्थायी होने से क्रोधादि विभाव अर्थ पर्याय स्थूल व छद्मस्थ ज्ञान गोचर होती है, और इस लिये उन्हे भी कदाचित व्यञ्जन पर्याय कहा जा सकता है, पर रूढ न होने से उसके लिये उस शब्द का प्रयोग नही किया जाता।

४६ एक समय स्थायी पर्याय कैसी होती है ?

वह केवल ज्ञान गम्य ही है तथा अत्यन्त सूक्ष्म। षट् गुण हानि वृद्धि ही उसका रूप है।

४७ षट्गुण हानि वद्धि किसे कहते है ?

अगुरुलघुत्व गुण के कारण गुणो मे जो निरन्तर परिणमन होता रहता है वही षट् गुण हानि वृद्धि का वाच्य है। गुणो के अविभाग प्रतिच्छेदो मे अन्दर ही अन्दर बराबर घटोतरी बढोतरी द्वारा सूक्ष्म तरतमता आते रहना ही उसका रूप है।

४८ यह सूक्ष्म अर्थ पर्याय स्वभाविक होती है या विभाविक ?

सूक्ष्म अर्थ पर्याय शुद्ध द्रव्यो मे ही होती है अशुद्ध मे नही अत वह स्वभाव अर्थ पर्याय है।

४६ विभाव अर्थ पर्याय भी तो प्रति क्षण बदलती ही होगी ?

बदलती अवश्य है, पर वह रूढ नही है।

(४. सादि सन्तादि पर्याय)

५० आदि अन्त की अपेक्षा पर्याय के कितने भेद है ?

चार भेद हैं—सादि सान्त, आदि अनन्त, अनादि सान्त, अनादि अनन्त।

५१. सादि सान्त पर्याय किसे कहते है ?

जिस पर्याय का आदि भी हो और अन्त भी, जैसे हर्ष विषाद।

५२ सभी पर्यायों का आदि अन्त होता है ?

सूक्ष्म रूप से सभी अर्थ पर्याय सादि सान्त है, पर स्थूल रूप से कुछ सादि सान्त व सादि अनन्त आदि भी है।

५३ व्यञ्जन पर्याय क्या नियम से सादि सान्त नहीं होती ?

नही, अशुद्ध द्रव्यो मे वे नियम से सादि सान्त होती है और शुद्ध द्रव्यो मे सादि सान्त व सादि अनन्त भी।

५४ सादि अनन्त पर्याय किसे कहते हैं ?
जो पर्याय उत्पन्न तो होती हो पर जिसका अन्त न होता हो; जैसे जीव की सिद्ध पर्याय।

५५. अनादि सान्त पर्याय किसे कहते है ?
जो पर्याय कभी उत्पन्न न हुई हो, अर्थात अनादि से हो पर जिसका अन्त हो जाता है, जैसे जीव की ससारी पर्याय।

५६. अनादि अनन्त पर्याय किसे कहते है ?
जिस पर्याय का न आदि हो न अन्त, जैसे धर्मास्तिकाय की शुद्ध द्रव्य पर्याय और अभव्य जीव की अशुद्ध पर्यायें।

५७ सादि सान्त स्वभाव व्यञ्जन पर्याय व स्वभाव अर्थ पर्याय किस द्रव्य में होती है ?
परमाणु मे; क्योकि स्कन्ध से बिछुड कर शुद्ध हो जाता है, और पुन स्कन्ध मे बधकर अशुद्ध हो जाता है।

५८. सादि अनन्त स्वभाव व विभाव अर्थ व्यञ्जन पर्याय किन द्रव्यों मे होती है ?
स्वभाव रूप दोनो पर्यायें मुक्त जीव मे होती है; क्योकि एक बार सिद्ध हो जाने पर वह पुनः संसारी नही होता। विभाव पर्याय मे आदि अनन्त का विकल्प सम्भव नही, क्योकि वह नियम से नष्ट होने वाला होता है।

५९. अनादि सान्त स्वभाव व विभाव पर्यायें किसमें है ?
अनादि सान्त विभाव पर्याय तो ससारी जीव मे होती है। स्वभाव पर्यायो मे अनादि सान्त का विकल्प नही क्योकि न कोई जीव अनादि से शुद्ध है और न परमाणु।

६०. अनादि अनन्त स्वभाव व विभाव पर्याय किसमें होती है ?
अनादि अनन्त स्वभाव पर्यायें धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाश व काल इन चार नित्य शुद्ध द्रव्यो मे है, जीव पुद्गल मे सम्भव नही क्योकि उनमे अनादि से कोई शुद्ध नही है। अनादि अनन्त विभाव पर्याय केवल अभव्य जीव मे ही सम्भव

है, क्योकि वह कभी शुद्ध नही होता। स्थूल रूप से अकृत्रिम चैत्यालय, सूर्य विम्ब आदि पुद्गल स्कन्धो की अनादि अनन्त विभाव व्यञ्जन पर्याये मानी गई है। वहा भी अर्थ पर्याय सादि सान्त ही होती है अनादि अनन्त नही।

(५ अभ्यास)

६१. पर्याय किसका अंश है ?

द्रव्य व गुण दोनो का अश है। द्रव्य का अश होने से वह सह-भावी कहलाती है और गुण का अश होने से क्रमभावी।

६२. किन किन द्रव्यो मे कौन कौन पर्याय होती है ?

जीव व पुद्गल मे वैभाविकी शक्ति होने से स्वभाव व विभाव दोनो प्रकार की अर्थ व व्यञ्जन पर्याये होती है। शेष चार द्रव्यो में उस शक्ति का अभाव होने से केवल स्वभाव व्यञ्जन व अर्थपर्याय ही होती है, विभाव नही।

६३ द्रव्य मे कौन सी पर्याय एक होती है और कौन सी अनेक ?

व्यञ्जन पर्याय एक होती है और अर्थ पर्याय अनेक। क्योकि उनके कारणभूत प्रदेशात्वगुण एक है और अन्य गुण अनेक।

६४. एक समय में जीव कितनी पर्याय धारण कर सकता है ?

व्यञ्जन पर्याय तो स्वभाव या विभाव मे से कोई एक हो सकती है, क्योकि वह एक ही गुण की होती है, और अर्थ पर्याय एक ही समय मे स्वभाव व विभाव दोनो हो सकती है, क्योकि वे अनेक है। कुछ गुणो की स्वभाव अर्थ पर्याय हो सकती है और कुछ की विभाव। जैसे—चौथे गुण स्थान मे सम्यक्त्व गुण की स्वभाव पर्याय है और शेष गुणो की विभाव।

६५. एक समय में पुद्गल कितनी पर्याय धारण कर सकता है ?

केवल दो—दोनो ही प्रकार की स्वभाव पर्याय या दोनो ही विभाव पर्याय। क्योकि स्कन्ध सर्वथा अशुद्ध द्रव्य होने के

कारण उसमे दोनो विभाव पर्याय होती है और परमाणु सर्वथा शुद्ध होने के कारण उसकी दोनो पर्याय शुद्ध होती है।

६६. **पुद्गल में स्वभाव व विभाव दोनो पर्याय क्यों नहीं हो सकती और जीव मे क्यों हो सकती है ?**
पुद्गल मे कर्तृत्व का अभाव होने के कारण वह दो ही अवस्था मे उपलब्ध होता है—सर्वथा शुद्ध या सर्वथा अशुद्ध। वह अपनी अशुद्ध अवस्था को कर्तृत्व पूर्वक शुद्ध करने का प्रयत्न करते हुए आंशिक शुद्ध दशा को स्पर्श नही कर सकता। जब कि जीव मे कर्तृत्व बुद्धि होने से वह अपनी अशुद्ध दशा को शुद्ध करने की साधना करता हुआ आशिक शुद्ध दशा को स्पर्श कर सकता है। वहा आशिक शुद्ध मे ही स्वभाव व विभाव दोनो सम्भव है, केवल शुद्ध या केवल अशुद्ध मे नही।

६७ **अर्हन्त भगवान व सम्यग्दृष्टि मे कितनी २ पर्याय हैं ?**
दोनो मे तीन तीन प्रकार की पर्याय होती हैं—विभाव व्यंजन तथा स्वभाव व विभाव अर्थ पर्याय; क्योंकि अर्हंत भगवान के भावात्मक अश या उपयोग शुद्ध हो जाने पर भी द्रव्यात्मक भाव अशुद्ध है, जिसके कारण कि उन्हें योगो का सद्भाव वर्तता है।

६८. **सिद्ध भगवान मे कितनी पर्याय है ?**
केवल दो—स्वभाव व्यञ्जन व स्वभाव अर्थ।

६९. **सिद्ध भगवान की व्यञ्जन पर्याय कैसी होती है ?**
अन्तिम शरीर से किंचित न्यून।

७०. **क्या कोई सिद्ध गाय के आकार के भी होते हैं ?**
सिद्ध पुरुषाकार ही होते है, अन्य किसी आकार के नही, क्योंकि अन्य पर्याय से मुक्ति सम्भव नही, स्त्री पर्याय से भी नही।

७१. **ऐसे द्रव्य बताओ जिनकी व्यञ्जन पर्याय समान हो ?**
केवल समुद्घातगत अर्हंत, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, इन

तीनो की व्यञ्जन पर्याय लोकाकाश प्रमाण है। कालाणु व परमाणु दोनो की व्यजन पर्याय अणुरूप है।

७२. **सबसे बड़ी व सबसे छोटी व्यञ्जन पर्याय किसकी ?**
आकाश की सबसे बडी और कालाणु व परमाणु की सबसे छोटी।

७३. **व्यञ्जन व अर्थ पर्याय में परस्पर क्या सम्बन्ध ?**
व्यञ्जन पर्याय शुद्ध होने पर तो सभी अर्थ पर्याय भी अवश्य शुद्ध ही होगी, जैसे सिद्ध भगवान। परन्तु अर्थ पर्याय शुद्ध होने पर व्यञ्जन पर्याय शुद्ध हो अथवा न भी हो, जैसे अर्हंत।

७४ **अर्थ पर्याय के शुद्ध होने पर व्यञ्जन पर्याय को भी शुद्ध होना पड़े क्या यह ठीक है ?**
नही, जीव मे सम्यक्तवादी गुणो की अर्थ पर्याय शुद्ध होने पर भी व्यञ्जन पर्याय अशुद्ध रह सकती है।

७५ **बड़ी व्यञ्जन पर्याय में अधिक पर्याय समा सकती है ?**
नही, व्यजन पर्याय के छोटे व बडे होने से, अर्थ पर्याय की सख्या मे अन्तर नही पड़ता, क्योकि सभी पर्याय द्रव्य के सर्व क्षेत्र मे व्यापकर एक साथ रहती है।

७६ **ज्ञान गुण की कितनी पर्याय होती हैं ?**
मति, श्रुत, अवधि व मन पर्याय ये चारो विभाव अर्थ पर्याय है और केवल ज्ञान स्वभाव अर्थ पर्याय।

७७ **रूप रस गन्ध व वर्ण की कितनी कितनी पर्याय होती हैं ?**
रूप गुण की पाच—काला, पीला, लाल, नीला, सफेद;
रस गुण की पाच—खट्टा, मीठा, कडुवा, कसायला, चरपरा,
गन्ध गुण की दो–सुगन्ध, दुर्गन्ध
स्पर्श गुण की आठ—ठण्डा-गर्म, चिकना-रूखा, हल्का-भारी, कठोर-नर्म।

७८ **रूप रस आदि की स्वभाव व विभाव पर्याय क्या होती है ?**
उपरोक्त सर्व पर्याये विभाव है। उन गुणो की स्वभाव पर्याय

स्वत्व योग्य कुछ होती अवश्य है, पर सूक्ष्म होने से केवल ज्ञान गम्य है, छद्मस्थ ज्ञान गम्य नही । वे परमाणु मे ही होती है ।

७९. परमाणु में एक समय कितनी पर्याय होती है ?

पाच रूप रस गन्ध की पर्यायो मे एक एक तथा स्पर्श की दो पर्याय । ये सभी वहा स्वभाव रूप सूक्ष्म होती है ।

८०. परमाणु में हल्का भारी तथा कठोर नर्म क्यों नही ?

क्योकि वे स्कन्ध के ही धर्म है ।

८१. स्कन्ध में एक समय कितनी पर्याय होती हैं ?

सात—रूप रस गन्ध की एक एक और स्पर्श की चार युगल पर्यायो मे से एक एक कर कोई सी चार, जैसे ठण्डा-गर्म युगल मे से कोई एक, चिकने-रूखे मे से कोई एक । ये सभी विभाव रूप होती है ।

८२. 'शब्द' क्या है ?

पुद्गल द्रव्य की विभाव द्रव्य पर्याय है, क्योंकि स्कन्ध के प्रदेशों मे-परिस्पन्दन रूप से होती है, परमाणु मे नही ।

८३. आकार को द्रव्य पर्याय क्यों कहा ?

क्योकि पदार्थ के प्रदेशात्म विभाग को द्रव्य कहते है, इसलिए उसकी पर्याय को द्रव्य पर्याय कहना ठीक ही है ।

८४. द्रव्य व गुण पर्याय को मापने के यूनिट क्या है ?

द्रव्य पर्याय को मापने का यूनिट प्रदेश है, और गुण पर्याय को मापने का अविभाग प्रतिच्छेद है, क्योंकि द्रव्य प्रर्याय क्षेत्रात्मक होती है और गुण पर्याय भावात्मक ।

८५ अनेक द्रव्यों की एक पर्याय और एक द्रव्य की अनेक पर्यायें क्या ?

शरीर धारी जीव तथा पुद्गल स्कन्ध अनेक द्रव्यात्म एक द्रव्य पर्याय है । प्रत्येक द्रव्य मे अनेक अर्थ पर्याय होती ही है ।

८६. द्रव्य गुण व पर्याय इन तीनो में साक्षात प्रयोजनीय क्या ?

केवल पर्याय ही साक्षात व्यक्त होने से उपभोग्य है, गुण व

द्रव्य तो उनके कारण रूप से मात्र ज्ञेय है।

८७. द्रव्य व गुण का अनुभव क्यों नहीं होता ?

क्योकि वे सामान्य है। अनुभव विशेष का होता है सामान्य का नही, जैसे आम ही खाया जाता है, मात्र वनस्पति नही।

८८. द्रव्य गुण का अनुभव नहीं होता तो वे है ही नहीं।

नही, पर्यायो पर से उनका अनुमान होता है, क्योकि सामान्य के विशेष कुछ नही होता, जैसे वनस्पति के अभाव मे आम कल्पना मात्र बनकर रह जायेगा।

८९. व्यञ्जन व अर्थ पर्याय मे कौन पहले शुद्ध होती है ?

जीव की अर्हंत अवस्था मे पहिले अर्थ पर्याय शुद्ध होती है, पीछे सिद्ध होने पर व्यञ्जन पर्याय शुद्ध होती है। पुद्गल मे परमाणु के पृथक हो जाने पर उसकी दोनों पर्याय युगपत हो जाती है।

९० जीव मे विभाव पर्याय कहां तक रहती है ?

चौदहवें गुणस्थान के अन्त तक, अर्थात मुक्त होने से पहिले तक।

९१ व्यञ्जन पर्याय असमान होने पर भी अर्थ पर्याय समान हों ऐसे द्रव्य कौन से ?

मुक्त जीव, क्योकि उनके आकार भिन्न है पर भाव समान।

९२ ५०० हाथ अवगाहना वाले सिद्धों मे ज्ञान व आनन्द अधिक तथा ७ हाथ अवगाहना वालो मे कम है ?

नही, अवगाहना व्यञ्जन पर्याय है और ज्ञान व आनन्द अर्थ पर्याय। अवगाहना छोटी बडी होने से अर्थ पर्याय छोटी बड़ी नही होती, क्योकि वे भावात्मक है।

९३ विभाव अर्थ पर्याय कितने प्रकार की होती हैं ?

दो प्रकार की—गुण की शक्ति घट जाना तथा गुण विकृत हो जाना।

९४. शक्ति घट जाने से क्या समझे ?

जिस पर्याय मे गुण की कुछ शक्ति व्यक्त रहे और कुछ अव्यक्त। जैसे घनाच्छादित सूर्य प्रकाश की कुछ शक्ति व्यक्त होती है और शेष ढकी रहती है ऐसे ही संसारी जीव के मति ज्ञानादि मे व अल्प वीर्य मे कुछ मात्र ही शक्ति व्यक्त होती है, शेष नही।

९५. विकृत गुण से क्या समझे ?

जिस पर्याय मे गुण की शक्ति विपरीत दिशा में व्यक्त हो। जैसे दूध सड जाने की भाति जीव के सम्यक्त्व व चारित्र गुण विकृत होकर आनन्दरूप से व्यक्त होने की बजाये मिथ्यात्व व व्याकुलता रूप बन जाते हैं।

९६. क्या आम्रफल की व्यञ्जन पर्याय उसके ऊपरी आकार में ही होती है ?

नही, व्यञ्जन पर्याय प्रदेशो की घनाकार रचना को कहते है, जो भीतर व बाहर सर्वत्र रहती है।

९७. स्वभाव व्यञ्जन पर्याय के साथ विभाव अर्थ पर्याय रहे ऐसा द्रव्य कौन ?

ऐसा कोई द्रव्य सम्भव नही; क्योकि व्यञ्जन पर्याय शुद्ध होने पर तो सभी पर्याय अवश्य शुद्ध ही होती है।

९८. विभाव व्यञ्जन पर्याय साथ स्वभाव अर्थ पर्याये रहे ऐसा द्रव्य कौन सा ?

सम्यग्दृष्टि जीव अथवा अर्हन्त भगवान, इन दोनो की व्यञ्जन पर्याय विभाविक है पर सम्यग्दृष्टि का एक सम्यक्त्व गुण और अर्हन्त भगवान के ज्ञान, दर्शन, चारित्र, सुख, वीर्य आदि अनेक गुणो की स्वभाविक पर्याय होती है।

प्रश्नावली

१. निम्न पदार्थों मे स्वभाव विभाव अर्थ व व्यञ्जन पर्याय दर्शाओ।

स्कन्ध, परमाणु, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाश, काल। अस्तित्व, ज्ञान, रूप, प्रदेशत्व, चारित्र, श्रद्धा, सुख, रस, अवगाहना हेतुत्व, गति हेतुत्व, अचेतनत्व, क्रियावती शक्ति।

२. निम्न किस किस पदार्थ के स्वभाव या विभाव अर्थ या व्यजन पर्याय है ?

ध्वनि, प्रतिध्वनि, छाया, प्रतिबिम्ब, सूर्य, विमान, घडी के पिण्डोलमका हिलना, दुख, मोक्ष केवलज्ञान, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, कुज्ञान, मनःपर्यय ज्ञान।

३ निम्न पदार्थ पर्याय है या गुण तथा क्यो ?

मति ज्ञान, केवल ज्ञान, खट्टा स्वाद, इन्द्रिय सुख, लाल रग, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र, ठण्डा, गर्म, नर्म।

४. निम्न गुणो की कितनी व कौन सी पर्याय होती है ?

ज्ञान, दर्शन, सुख, सम्यक्त्व, चारित्र, रस, रूप, गध, स्पर्श, अवगाहना हेतुत्व।

५. उपरोक्त सर्व पर्यायो मे सादि सान्त, सादि अनन्त, अनादि सान्त व अनादि अनन्त पर्याय बताओ।

६. स्वभाव व विभाव पर्यायो की उत्पत्ति व विनाश मे कितने कितने काल का अन्तराल पडता है ?

७. वर्तमान अज्ञान दूर होकर ज्ञान प्रगट होने मे कितना अन्तराल पड़ता है ?

२/६ अन्य विषयाधिकार

(१. विग्रह गति)

(१) विग्रह गति किसको कहते हैं ?

एक शरीर को छोडकर दूसरा शरीर ग्रहण करने के लिये जीव के जाने को विग्रह गति कहते हैं।

(२) विग्रह गति कितने प्रकार की होती है ?

चार—ऋजुगति, पाणिमुक्ता गति, लांगलिका गति, गोमूत्रिका गति ।

३. ऋजु गति किसे कहते हैं ?

सीधी गति अर्थात बिना मुडे सीधे जाने को ऋजुगति कहते हैं।

४. पाणिमुक्ता गति किसे कहते हैं ?

गमन करते हुए बीच में एक बार मुड़ना पड़े ऐसी गति।

५. लांगलिका गति किसे कहते हैं ?

गमन करते हुए बीच में दो बार मुडना पडे ऐसी हलाकार गति।

६. गोमूत्रिका गति किसे कहते हैं ?

गमन करते हुए बीच में तीन बार मुडना पड़े ऐसी गति।

७ सीधा चलने में क्या समझे ?

ऊर्ध्व रेखा पर (Vertical axis पर) या तिर्यक् रेखा पर (Horizontal axis पर) ही चलना तिरछा (Diagonal axis पर) नहीं।

८. **गमन करते हुए मुड़ने से क्या समझे ?**

विग्रह गति मे जीव सीधा ही चलता है तिरछा (diagonally) नही । यदि उसका इष्ट स्थान सीधे मार्ग (Horizontal या Vertical) से हटकर हो तो उसे वहाँ पहुँचने के लिये ऊर्ध्व रेखा पर (Vertical axis पर) या तिर्यक रेखा पर (Horizontal axis पर) चलकर आगे मुडकर कोण बनाना पड़ेगा, अन्यथा वह वहा पहुँच नही सकता ।

९ **विग्रह गति में अधिक से अधिक कितने मोड़ संभव हैं ?**

तीन से अधिक सम्भव नही, क्योकि 'एक दो या तीन कोण बनाकर लोक के किसी भी कोने मे पहुँचा जा सकता है'।'

(१०) **इन विग्रह गतियों मे कितना-२ काल लगता है ?**

ऋजुगति मे एक समय, पाणिमुक्ता मे अर्थात एक मोड़े वाली मे दो समय, लागलिका (दो मोडे वाली मे) मे तीन समय और गोमूत्रिका (तीन मोडे वाली) मे चार समय लगते हैं ।

११. **एक मोड़ मे दो समय कैसे लगते हैं ?**

एक समय से कम की कोई गति नही होती । मोड पर जाकर रुकना आवश्यक है, अत मुडने के पश्चात नई गति प्रारम्भ होती है । इस प्रकार मुडने से पहिले और पीछे दो गतियो मे दो समय लगना युक्त है । इसी प्रकार २ मोडे वाली मे ३ समय और तीन मोड़े वाली मे चार समय समझना ।

(१२) **मुक्त होने पर जीव कौन सी गति से गमन करता है ?**

केवल ऋजु गति से । वह अनाहारक ही होता है ।

(२. समुद्घात)

(१३) **समुद्घात किसे कहते हैं ?**

मूल शरीर को छोडे विना जीव के प्रदेशो का वाहर निकलना समुद्घात कहलाता है ।

१४. शरीर को छोड़े बिना प्रदेश बाहर निकलना क्या ?

कारण विशेष को प्राप्त करके जीव के प्रदेश फैल जाते है। तब वे अपने मूल शरीर मे भी रहते है और उससे बाहर चारो तरफ आकाश मे भी।

१५. क्या समुद्घात सभी जीवों को होता है ?

नही, किसी किसी जीव को क्वचित कदाचित कारण विशेष मिलने पर होता है।

१६. समुद्घात कितने प्रकार का होता है ?

सात प्रकार का—मारणान्तिक समुद्घात्, कषाय समुद्घात्, वेदना समुद्घात्, वैक्रियक समुद्घात्, तैजस समुद्घात्, आहारका समुद्घात् और केवली समुद्घात्।

१७. मारणान्तिक समुद्घात किसे कहते है ?

मरण समय किसी किसी जीव के प्रदेश फैल कर अपना इष्ट स्थान तलाश करने जाते है। इस स्थान का स्पर्श करके वापस शरीर मे प्रवेश कर जाते है। इसे मारणान्तिक समुद्घात् कहते हैं।

१८. कषाय समुद्घात किसे कहते है ?

कषाय वश जीव के प्रदेशो का कदाचित फैलना कषाय समुद्घात है।

१९. वेदना समुद्घात किसे कहते है ?

तीव्र वेदना मे किसी जीव के प्रदेश कदाचित फैल कर योग्य औषध या-जड़ी बूटी का स्पर्श करके वापस शरीर मे प्रवेश करे सो वेदना समुद्घात है।

२०. मारणान्तिक, कषाय व वेदना समुद्घात किसे होता है ?

सभी प्रकार के जीवो को होने सम्भव है।

२१. वैक्रियक समुद्घात किसे कहते हैं व किसे होता है ?

अपने शरीर को बडा या छोटा बना लेने मे, अथवा विक्रिया द्वारा अनेक शरीर बना लेने मे उस जीव के प्रदेशो का फैलना या सुकड़ना तथा फैलकर सब शरीरो को क्रियाशील बना

देना वैक्रियक समुद्घात कहलाता है। यह अग्नि व वायु कायिक जीवो मे तथा विद्याधरो मे किसी किसी को अथवा विक्रिया ऋद्धिधारी साधुओ मे होता है ।

२२ तैजस समुद्घात क्या है व किसे होता है ?

यह दो प्रकार का होता है—शुभ तैजस व अशुभ तैजस। किसी मुनि को कदाचित तीव्र क्रोध आ जाने पर उसके बायें कन्धे से एक तेजोमय पुतला निकलकर अपने विरोधी व्यक्ति या पदार्थ को भस्म करके लौट आता है, तथा उस मुनि को भी अपने तेज से भस्म कर देता है। यह अशुभ तैजस है ।

किसी मुनि को कदाचित करुणा उत्पन्न होने पर उसके दायें कन्धे से एक तेजोमय पुतला निकलकर लक्ष्य व्यक्ति या देश आदि का कष्ट रोग अथवा दुर्भिक्षादि निवारण कर वापस लौट आता है, और शरीर मे प्रवेश कर जाता है। यह मुनि को भस्म नही करता। यह शुभ तैजस है। ये दोनो किसी किसी ऋद्धिधारी मुनि को ही होते है ।

२३ आहारक समुद्घात क्या है और किसे होता है ?

किसी मुनि को कदाचित तत्वो मे शका होने पर या तीर्थंकर देव के दर्शनो की उत्कण्ठा होने पर उसके मस्तक एक हाथ प्रमाण धवल पुरुषाकार पुतला निकलता है और तीर्थंकर, केवली या श्रुतकेवलीका वे जहा कही भी स्थित हो स्पर्श करके लौट आता है। इतने मात्र से ही उसकी शका आदि निवृत्त हो जाती हैं। इसे आहारक समुद्घात कहते है और किसी किसी महान ऋद्धिधारी मुनि को ही होता है ।

२४. केवली समुद्घात क्या व किसे होता है ?

किसी किसी अर्हन्त केवली भगवन्त की आयु के अन्तिम क्षण मे कदाचित उनके प्रदेश फैलकर समस्त लोकाकाश में व्याप्त हो जाते हैं, और पुनः लौटकर शरीर मे समा जाते हैं। इसे

केवली समुद्घात् कहते है और तेरहवे गुण स्थान के अन्त मे किसी किसी अर्हत देव को ही होता है।

२५. अर्हन्त भगवान केवली समुद्घात क्यों करते हैं ?

कदाचित उनकी आयु की स्थिति अन्य तीन अघातिय कर्मो की स्थिति की अपेक्षा कुछ हीन या अधिक रह जाये तो उन सब कर्मो की स्थिति को समान करने के लिये करते है।

२६. केवली समुद्घात का क्या क्रम है और इसमें कितना समय लगता है ?

केवली समुद्घात् के अन्तर्गत चार विभाग है—दण्ड, कपाट, प्रतर व लोकपूर्ण।

(क) पहिले समय में उनके प्रदेश शरीर प्रमाण मोटाई मे ही दण्डे की भाति ऊपर नीचे लोक की सीमाओ पर्यन्त फैल जाते है। इसे दण्ड समुद्घात् कहते है।

(ख) द्वितीय समय मे दण्डाकार वे प्रदेश उतने ही मोटे रहकर दाई बाई दिशा मे कपाट खुलने की भाति लोक की सीमाओ पर्यन्त फैल जाते है। इसे कपाट समुद्घात कहते हैं।

(ग) तृतीय समय मे कपाटाकार वे प्रदेश उतने के उतने चौडे रहते हुए आगे पीछे वाली मोटाई की दिशाओ मे लोक की सीमाओ पर्यत फैल जाते है। इसे प्रतर समुद्घात कहते हैं।

(घ) चतुर्थ समय में वे प्रदेश लोक के शेष वचे हुए नीचे ऊपर के कोनो में भी जू'केतू चौडे व मोटे रहते हुए फैलकर समस्त लोक को पूर्ण कर देते है। इसे लोकपूर्ण समुद्घात कहते हैं।

(च) पचम समय मे लोकपूर्ण समुद्घात सकुचित होकर प्रतराकार बन जाता है। छटे समय मे प्रतराकार भी सिमट कर कपाटाकार हो जाता है। सप्तम समय मे वह

कपाटाकार भी सुकड़ कर दण्डाकार और आठवे समय मे वह दण्डाकार भी सिमटकर मूल शरीर में समा जाता है। इस प्रकार केवली समुद्घात मे कुल आठ समय लगते है।

(३. कारण कार्य)

(२७) कारण किसे कहते हैं ?

कार्य की उत्पादक सामग्री को कारण कहते है।

२८ उत्पादक सामग्री से क्या समझें ?

जिन पदार्थों की सहायता से कार्य उत्पन्न हो उन्हे उत्पादक कहते है।

(२९) कारण के कितने भेद हैं ?

दो है—एक समर्थ कारण दूसरा असमर्थ कारण।

(३०) समर्थ कारण किसे कहते है ?

प्रतिबन्धक का अभाव होने पर सहकारी समस्त सामग्रियो के सद्भाव को समर्थ कारण कहते है। समर्थ कारण के होने पर अनन्तर (अगले ही क्षण) कार्य की उत्पत्ति नियम से होती है।

(३१) असमर्थ कारण किसे कहते है ?

भिन्न भिन्न प्रत्येक सामग्री को असमर्थ कारण कहते हैं। असमर्थ कारण कार्य का नियामक नही (अर्थात इसके होने पर कार्य हो अथवा न भी हो)।

३२ प्रतिबन्धक का अभाव व सहकारी का सद्भाव क्या ?

किसी भी कार्य की उत्पत्ति के लिये दो बातें आवश्यक हैं। विघ्नकारी कारणों का अभाव और सहायक कारणों का सद्भाव, दोनो में से एक शर्त भी पूरी न हो तो कार्य होना सम्भव नही। दो शर्तों के पूरी होने पर ही कार्य होता है। दोनो शर्तों का होना ही समर्थ कारण है।

(३३) सहकारी सामग्री के कितने भेद है ?

दो हैं—एक निमित्त दूसरा उपादान।

(३४) निमित्त कारण किसे कहते है ?

जो पदार्थ स्वय कार्यरूप न परिणमे, किन्तु कार्य की उत्पत्ति मे सहायक हो, उसे निमित्त कारण कहते है। जैसे घट की उत्पत्ति मे कुम्हार, दण्ड व चक्रादि।

३५ निमित्त कितने प्रकार के होते हैं ?

दो प्रकार के साधारण व असाधारण।

३६. साधारण निमित्त किसे कहते है ?

जो सभी कार्यों के सामान्य रूप से सहकारी हो, जैसे गमन के लिये पृथिवी।

३७. असाधारण निमित्त किसे कहते है ?

कार्य मे सहायक विशेष सामग्री को असाधारण निमित्त कहते है; जैसे गमन करने मे रथ घोड़ा आदि।

३८. लोक के पदार्थों में साधारण असाधारण निमित्त का विभाग करो।

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाश व काल, क्रमश गमन, स्थिति, अवगाह व परिणमन मे साधारण निमित्त है, अन्य सर्व लौकिक पदार्थ असाधारण निमित्त है। तिनमे भी सामान्यपने व विशेषपने की अपेक्षा भेद हो सकता है, जैसे घड की उत्पत्ति मे पृथिवी साधारण निमित्त, कुम्हार, चक्र आदि असाधारण निमित्त इत्यादि।

३९ अन्य प्रकार से निमित्त कितने प्रकार के है ?

तीन प्रकार के—प्रेरक, उदासीन, बलाधान।

४० प्रेरक निमित्त किसे कहते हैं ?

इच्छा तथा क्रिया द्वारा सहकारी होने वाले पदार्थ प्रेरक निमित्त हैं; जैसे घर की उत्पत्ति मे कुम्हार व चक्र तथा ध्वजा के हिलाने मे वायु। प्रेरक निमित्त कार्य का नियामक है, अर्थात उसके होने पर कार्य की उत्पत्ति अवश्य होती है।

४१. उदासीन निमित्त किसे कहते है ?

जिस तकारी पदार्थ मे इच्छा व क्रिया न हो परन्तु उसके

अभाव मे कार्य न हो सके, उसे उदासीन निमित्त कहते है। जैसे घट की उत्पत्ति मे चक्र के नीचे की कीली अथवा ध्वजा हिलाने मे ध्वज दण्ड। उदासीन निमित्त कार्य का नियामक नही होता, अर्थात इसके होने पर कार्य हो अथवा न भी हो। पर इसके विना कार्य होना सम्भव नही।

४२. वलाधान निमित्त किसे कहते हैं ?

जिस निमित्त मे इच्छा व क्रिया न हो, पर फिर भी वह कार्य का नियामक हो अर्थात उसके होने पर कार्य अवश्य हो, उसे वलाधान निमित्त कहते है। जैसे राग द्वेष की उत्पत्ति मे मोह-नीय कर्म का उदय तथा दर्पण के प्रतिविम्व के लिये बाह्य पदार्थ।

(४३) उपादान कारण किसे कहते हैं ?

(क) जो पदार्थ स्वय कार्य रूप परिणमे उसे उपादान कारण कहते है, जैसे घट की उत्पत्ति मे मृत्तिका।

(ख) (अनादि काल मे द्रव्यो मे पर्यायो का प्रवाह चला आ रहा है उसमे, अनन्तर पूर्वक्षणवर्ती पर्याय युक्त द्रव्य उपादान कारण है और अनन्तर उत्तरक्षणवर्ती पर्याय युक्त द्रव्य उसका कार्य है।)

४४ उपादान कारण कितने प्रकार का होता है ?

एक त्रिकाली दूसरा क्षणिक।

४५. त्रिकाली उपादान कारण किसे कहते है ?

त्रिकाली द्रव्य अपनी पर्याय का उपादान कारण है, क्योकि सदा वह ही पर्याय रूप परिणमन करता है।

४६ क्षणिक उपादान कारण किसे कहते हैं ?

पूर्वक्षणवर्ती पर्याययुक्त द्रव्य उत्तरक्षणवर्ती पर्याययुक्त द्रव्य को कारण पडता है, क्योंकि उसका व्यय ही उत्तर पर्याय का उत्पाद है। अथवा उसका व्यय हुए विना उत्तर पर्याय का उत्पाद नही हो सकता, जैसे कि घट की उत्पत्ति मे कुशल।

४७. **कार्य किसे कहते हैं ?**

द्रव्य की या गुण की पर्याय को उसका कार्य कहते है ।

४८ **कार्य कितने प्रकार के होते हैं ?**

दो प्रकार के—सामान्य व विशेष ।

४९. **सामान्य कार्य किसको कहते है ?**

प्रत्येक द्रव्य मे प्रतिक्षण जो स्वाभाविक परिणमन होता रहता है वही सामान्य कार्य है । अर्थात स्वभाव अर्थ व व्यञ्जन पर्याय सामान्य कार्य है, क्योकि इसके बिना विशेष कार्य अर्थात विभाव पर्याय हो नही सकती ।

५०. **सामान्य कार्य किसमे होता है ?**

शुद्ध व अशुद्ध सभी द्रव्यो मे होता है ।

५१. **अशुद्ध द्रव्य में स्वभाव पर्याय रूप सामान्य कार्य कैसे सम्भव है ?**

परिणमन प्रत्येक द्रव्य मे ही होता है, पर अशुद्ध द्रव्यों की स्थूल अशुद्धि पर्यायों मे अन्तर्लीन रहने से वह वहा प्रतीति मे नही आता अथवा प्रधान नही होता है ।

५२ **सामान्य कार्य कितने प्रकार का होता है ?**

दो प्रकार का—परिणमन व परिस्पन्दन ।

५३. **सामान्य कार्य में किस प्रकार के निमित्त की आवश्यकता होती है ?**

केवल साधारण निमित्त की । तहां परिणमन मे काल द्रव्य और परिस्पन्दन में धर्मास्तिकाय साधारण निमित्त हैं ।

५४. **विशेष कार्य किसको कहते है ?**

विशेष प्रकार से व्यक्त अशुद्ध या विभाव पर्याय विशेष कार्य है,-जैसे अग्नि के सयोग से जल ऊष्णता ।

५५ **विशेष कार्य कितने प्रकार के है ?**

चार प्रकार—स्कन्ध रूप समान जातीय विभाव व्यञ्जन पर्याय, मनुष्यादि रूप असमान जातीय विभाव व्यञ्जन पर्याय

स्कन्धो व मनुष्यादि की गमनागमन क्रिया रूप विभाव द्रव्य पर्याय और दोनो द्रव्यो के गुणों की विभाव अर्थ पर्याय।

५६. विशेष कार्य मे किस प्रकार का निमित्त चाहिये ?
साधारण व असाधारण दोनो।

५७. क्या विभाव पर्याय बिना असाधारण निमित्त के होती है ?
नही, क्योकि क्योकि विभाव या अशुद्ध नाम ही सयोगका है। सयोगी कार्य विना सयोग या बाह्य निमित्त के हो जावे सो असम्भव है।

५८. क्या स्वाभाविक पर्याय को भी असाधारण निमित्त चाहिये ?
नही, स्वाभाविक कार्य केवल अपनी शक्ति से होता है, क्योकि स्वभाव कहते ही उसे है जिसमे अन्य की अपेक्षा न हो। निमित्त रूप से वहा काल या धर्मास्तिकाय साधारण निमित्त होते है। असाधारण निमित्त कोई नही होता।

५९ शुद्ध व अशुद्ध सभी कार्यो को असाधारण निमित्त निरपेक्ष बताने मे क्या भूल है ?
तहा दृष्टि मे तो शुद्ध पर्याय या सामान्य बैठा रहता है और बाते की जाती है अशुद्ध पर्यायो की। सो घटित नही होता, प्रत्यक्ष विरोध आता है।

६० स्कन्ध के प्रत्येक परमाणु का स्वतन्त्र परिणमन मानने मे क्या दोष ?
दृष्टि मे तो परमाणु रहता है और स्कन्ध की बात की जाती है, जो घटित नही होता। दूसरी बात यह है कि सश्लेष बन्ध की अवस्था मे परमाणु की स्वतत्रता रह नही जाती। क्योकि बन्ध को प्राप्त दो द्रव्य विजातीय रूप परिणत हो जाते है।

६१ बिना पैट्रोल केवल क्रियावती शक्ति से मोटर चले, क्या दोष ?
मोटर स्वय कोई शुद्ध द्रव्य नही। जिस प्रकार शुद्ध होने से परमाणु असाधारण निमित्त के विना भी स्वय गमन व परिणमन कर सकता है, उस प्रकार कोई भी स्कन्ध नही कर सकता।

तृतीय अध्याय

(कर्म सिद्धान्त)

३/१ चतुः श्रेणी बन्ध अधिकार

(१. मूलोत्तर प्रकृति परिचय)

(१) जीव के कितने भेद हैं ?

दो हैं—ससारी व मुक्त ।

(२) संसारी जीव किसको कहते है ?

कर्म सहित जीव को ससारी जीव कहते है ।

(३) मुक्त जीव किसे कहते है ?

कर्म रहित जीव को मुक्त जीव कहते है ।

(४) कर्म किसको कहते है ?

जीव के रागद्वेषादि परिणामो के निमित्त से कार्माण वर्गणा रूप जो पुद्गल स्कन्ध जीव के साथ बन्ध को प्राप्त होते हैं, उन्हे कर्म कहते है ।

५. कर्म कितने प्रकार का होता ह ?

तीन प्रकार का—भाव कर्म, नोकर्म व द्रव्य बन्ध ।

६. भाव कर्म किसे कहते हैं ?

जीव के रागद्वेषात्य परिणाम को भाव कर्म कहते है ।

७ नोकर्म किसे कहते हे ?

जीव के पचभौतिक वाह्य शरीर को नोकर्म कहते है, अथवा लोक के सभी दृष्ट पदार्थ नोकर्म है, क्योकि वे सभी किसी न किसी जीव के मृत शरीर ही है, जैसे चौको वनस्पति कायिक जीव का मृत शरीर है और स्वर्ण पृथिवी कायिक का ।

८ द्रव्य कर्म किसे कहते हैं ?

राग द्वेषादि के निमित्त से जो सूक्ष्म कार्माण वर्गणाये जीव के साथ बधती है, और जो ज्ञानावरणीय आदि अनेक रूप होती हुई कार्माण शरीर का निर्माण करती है, उसे द्रव्य कर्म कहते हैं।

९ द्रव्य कर्म का बन्धना क्या ?

कार्माण वर्गणाओ का विशेष प्रवृत्तियो आदि को धारण करके जीव प्रदेशो के साथ दूध पानी एकमेक हो जाना ही उनका सश्लेप बन्ध है।

(१०) बन्ध के कितने भेद है ?

चार भेद हैं—प्रकृति बन्ध, प्रदेश बन्ध, स्थिति बन्ध व अनुभाग बन्ध ।

(११) इन चारों प्रकार के बन्धों का कारण क्या है ?

प्रकृति व प्रदेश बन्ध योग से होते है और स्थिति व अनुभाग बन्ध कषाय से।

१२ बन्ध के कारणो मे योग व कषाय का विभाग करो।

प्रकृति व प्रदेश बन्ध द्रव्यात्मक व प्रदेशात्म होने से उस का कारण भी प्रदेशात्मक होना चाहिये और वह जीव का योग है। स्थिति व अनुभाग भावात्मक परिणमन रूप होने से इसका कारण भी भावात्मक ही होना चाहिये और वह जीव का उपयोग या कषाय है।

(१३) प्रकृति बन्ध किसको कहते है ?

मोहादि जनक तथा ज्ञानादि घातक तत्तत्स्वभाव वाले कार्माण पुद्गल स्कन्धो का आत्मा से सम्बन्ध होने को प्रकृतिबन्ध कहते है।

(१४) प्रकृति बन्ध के कितने भेद है ?

आठ है—ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अन्तराय ।

(१५) **ज्ञानावरणीय कर्म (प्रकृति) किसको कहते है ?**

जो कर्म आत्मा के ज्ञान गुण को घाते उसको ज्ञानावरण कर्म कहते है।

१६. **ज्ञान गुण का घातना क्या ?**

ज्ञान की शक्ति एक समय मे समस्त लोकालोक को सर्व द्रव्य गुण पर्याय समेत जान लेने की है। उसे घटा कर तुच्छ मात्र कर देना, जिससे कि वह अल्प मात्र ही जानने को समर्थ हो सके, यह ही ज्ञान गुण का घात है।

(१७) **ज्ञानावरण के कितने भेद है ?**

पाच है—मतिज्ञानावरण, श्रुत ज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मन पर्यय ज्ञानावरण और केवल ज्ञानावरण।

१८. **मति ज्ञानावरण आदि किन्हे कहते है ?**

उस उस जाति के ज्ञान को घातने से उस उस नाम का है।

(१९) **दर्शनावरण कर्म किसे कहते हैं ?**

जो आत्मा के दर्शन गुण को घाते उसे दर्शनावरण कर्म कहते है।

२०. **दर्शन गुण का घात क्या ?**

ज्ञान गुण की भांति उसकी शक्ति को घटाकर तुच्छ मात्र कर देना ही उसका घात है।

(२१) **दर्शनावरण कर्म के कितने भेद हैं ?**

नव है—चक्षु दर्शनावरण, अचक्षु दर्शनावरण, अवधि-दर्शना वरण, निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचला प्रचला स्त्यानगृद्धि।

२२. **चक्षु दर्शनावरणीय आदि किन्हे कहते है ?**

उस उस जाति के दर्शन को घातने से उस उस नाम का कर्म है।

२३. **निद्रा आदि पाच भेदों के लक्षण करो ?**

थकावट से सर भारी होना, तथा आधे सोने व आधे जागते रहना 'निद्रा' है। पुन. पुन. निद्रा मे प्रवृत्ति अथवा अति निर्भर

सोना, उठाये से भी न उठना 'निद्रा निद्रा' है। शोक या नशे के कारण नेत्र गाल विकृत होना, सोते सोते भी सिर आगे पीछे गिरते रहना। इस प्रकार बैठे बैठे ही सोना 'प्रचला' है। पुन पुनः प्रचला मे प्रवृत्ति करना अथवा बैठे बैठे बार बार सोना, सिर धुनते या घूमते हुए सोना, अथवा चारो दिशाओ मे लोटते हुए सोना प्रचला प्रचला है, । इसमे मुख से लार वहती है।

स्वप्न मे वीर्य विशेष का आविर्भाव हो, सोते सोते बहुत से कर्म कर दे, सोते सोते खडा रहे, खडा खडा बैठ जाये, बैठकर भी पड जाये, उठाने पर भी न उठे, चलता सोता रहे, काटता और बडबडाता रहे, वह स्तयानगृद्धि' है।

२४ निद्रा के कारणभूत कर्म की दर्शनावरण संज्ञा करो ?

क्योकि दर्शनगुण के घात हुए विना निद्रा सम्भव नही।

(२५) वेदनीय कर्म किसे कहते हैं ?

जिस कर्म के फल से जीव को आकुलता होवे, अर्थात जो अव्याबाध (अतीन्द्रिय) सुख को घाते उसे वेदनीय कर्म कहते है।

२६. अव्याबाध सुख का घात क्या ?

अतीन्द्रिय सुख से विमुख होकर भौतिक सुख साधनों मे उलझना ही उसका घात है, क्योंकि भौतिक सुख व भौतिक दुख दोनो ही व्याकुलता रूप है।

२७. अतीन्द्रिय सुख क्या ?

समस्त भौतिक साधनो से निरपेक्ष अन्तरग सहज आल्हादि, शान्ति आनन्द या निराकुलता ही अतीन्द्रिय सुख है।

(२८) वेदनीय कर्म के कितने भेद हैं ?

दो हैं—साता वेदनीय और असाता वेदनीय।

२९. साता असाता वेदनीय किसे कहते हैं ?

भौतिक सुख व उसकी साधना सामग्री का सयोग तथा दु.ख की

साधन सामग्री का वियोग कराने मे कारण हो वह साता वेदनीय कर्म है। इसी प्रकार भौतिक दुख व उसकी साधन सामग्री का सयोग तथा सुख की साधन सामग्री का वियोग करने मे कारण हो वह असाता वेदनीय कर्म है।

(३०) मोहनीय कर्म किसे कहते है ?

जो आत्मा के सम्यक्त्व और चारित्र गुण को घाते उसे मोहनीय कर्म कहते है।

३१ सम्यक्त्व व चारित्र गुण का घात क्या ?

अपने पदार्थ चेतन स्वरूप की प्रतीति न होने के कारण शरीर को मैं तथा शरीर की साधन बाह्य चेतन अचेतन सामग्री को इष्टानिष्ट मानते रहना सम्यक्त्व गुण का घात है। शरीर व शरीर साधन उपरोक्त सामग्री मे अहकार ममकार करते हुए उसमे ही कर्तृत्व व भोक्तृत्व भाव के कारण अत्यन्त व्यग्रता से उसी मे राग द्वेष हर्ष विषाद करते रहना चारित्र गुण का घात है, क्योकि समता भाव का नाम चरित्र कहा गया है।

३२ ज्ञान दर्शन गुण का घात और सम्यक्त्व चारित्र गुण का घात इन दोनों मे क्या अन्तर है ?

ज्ञान दर्शन का घात केवल आवरण रूप है और सम्यक्त्व चारित्र का घात मूर्छा रूप है। अर्थात पहिले घात से जीव की शक्ति केवल कम हो जाती है पर मूर्छित होकर विकृत या विपरीत नही होती। दूसरे घात से वह मूर्छित होकर विकृत या विपरीत हो जाती है अर्थात वस्तु जैसी नही है वैसी भासने लगती है, और जो अपना कर्तव्य नही है वही कर्तव्य दीखने लगता है। ज्ञान दर्शन के घात से जीव की विशेष हानि नही पर सम्यक्त्व चारित्र का घात ही से उसे ससार बन्धन मे डालने के कारण विशेष नाशकारी है।

(३३) मोहनीय के कितने भेद है ?

दो है—दर्शनमोहनीय व चारित्र मोहनीय।

(३४) दर्शनमोहनीय किसे कहते हैं ?
आत्मा के सम्यक्त्व गुण को जो घाते उसे दर्शनमोहनीय कहते है।

(३५) दर्शन मोहनीय के कितने भेद है ?
तीन है—मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृति।

(३६) मिथ्यात्व किसे कहते है ?
जिस कर्म के उदय से जीव को अतत्व श्रद्धान हो, उसको मिथ्यात्व कहते है।

(३७) सम्यग्मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?
जिस कर्म के उदय से मिले हुए परिणाम, जिनको न सम्यक्त्व रूप कह सकते हैं न मिथ्यात्व रूप, उसको सम्यग्मिथ्यात्व कहते है।

(३८) सम्यक्प्रकृति किसे कहते हैं ?
जिस कर्म के उदय से सम्यक्त्व गुण का मूल घात तो न हो परन्तु चल मलादि दोष उपजे उसको सम्यक्प्रकृति कहते है।

(३९) चारित्र मोहनीय किसे कहते हैं ?
जो आत्मा के चारित्र गुण को घाते उसको चारित्र मोहनीय कहते है।

(४०) चारित्र मोहनीय के कितने भेद हैं ?
दो है—कषाय (वेदनीय) और नोकषाय (वेदनीय)।

४१. कषाय व नोकषाय वेदनी किसे कहते हैं ?
जिन प्रकृतियो के उदय से जीव मे कषाय उत्पन्न हो वह कषाय वेदनीय कर्म है। किंचित कषाय को नोकषाय कहते है। जिस प्रकृति के उदय से जीव मे नोकषाय उत्पन्न हो वह नोकषाय वेदनी है।

४२ कषाय के कितने भेद हैं ?
सोलह—अनन्तानुवन्धी क्रोध, अनन्तानुवन्धी मान, अनन्तानुवन्धी माया, अनन्तानुवन्धी लोभ। अप्रत्याख्यानावरण क्रोध,

अप्रत्याख्यानावरण मान, अप्रत्याख्यानावरण माया, अप्रत्याख्यानावरण लोभ। प्रत्याख्यानावरण क्रोध प्रत्याख्यानावरण मान, प्रत्याख्यानावरण माया, प्रत्याख्यानावरण लोभ। सज्वलन क्रोध, सज्वलन मान, सज्वलन माया, सज्वलन लोभ।

४३. अनंतानुबन्धी आदि किन्हे कहते है ?

कषायो की वासना की तीव्रता मन्दता बनाने के लिये ये भेद है।

४४. वासना किसे कहते है ?

कषाय की अव्यक्त अन्तरग धारणा को वासना कहते है।

४५. कषाय व वासना में क्या अन्तर है ?

वासना कारण है और कषाय उसका कार्य, जैसे गुण और उसकी पर्याय। वासना अव्यक्त रूप से अन्दर स्थित रहती है जैसे गुण और कषाय व्यक्त रूप से बाहर प्रगट होती है जैसे पर्याय। वासना अनुभव मे नही आती कषाय अनुभव मे आती है। उदाहरण के रूप मे—एक व्यक्ति को किसी से ईर्ष्या हो गई, वह अन्दर मे वासना बन कर पड़ गई। बाहरी व्यवहार मे वह व्यक्ति अब भी उसके साथ मित्रवत् मधुर व्यवहार करता है, पर भीतर मे कटाकटी है। कभी अवसर मिलने पर उसको विस्फोट होता है, जिसके कारण कदाचित क्रोध की तडक भडक व लड़ाई मार पीट प्रगट हो जाती है। वह क्रोध कुछ देर पश्चात दब जाता है, पर उसकी वह पूर्व वासना अब भी बनी रहती है। कालान्तर मे पुन. उसका विस्फोट होता है। वाह्य विस्फोट पुन दब जाता है पर वासना फिर भी बनी रहती है। यहा वाह्य विस्फोट को कषाय कहा गया है उस कषाय के भीतरी आशय को वासना।

४६. कषाय व वासना की तीव्रता मन्दता मे क्या अन्तर है।

कषाय की तीव्रता का अर्थ है उसका तीव्र विस्फोट जैसे क्रोध

वश व्यक्ति को जान से मार देना और मन्दता का अर्थ है मन्द रूप मे केवल कुछ लक्षणो का व्यक्त होना, जैसे केवल एक घुडकी देकर क्रोध व्यक्त करना। वासना की तीव्रता का अर्थ है उसका भव भवान्तर तक जीव के अन्दर आशय रूप से स्थित रहना और मन्दता का अर्थ है उत्पन्न होने के कुछ क्षणो पश्चात ही धुल जाना।

४७ कषाय व वासना में अधिक घातक कौन ?

वासना अधिक घातक है, क्योकि कषाय दब भी जाये तब भी वह अन्दर ही अन्दर व्यक्ति को सतप्त किये रहती है। दूसरी ओर वासना धुल जाये तो कषाय होनी सम्भव ही नही है।

४८ कषाय की तीव्रता मन्दता को आगम मे क्या कहा है ?

लेश्या।

४९. लेश्या किसे कहते है ?

कषाय मे रगी हुई जीव की प्रवृत्ति या योग को लेश्या कहते हैं। इसी लिये इसे रगो के नाम से बताया गया है।

५० लेश्या कितने प्रकार की है ?

छ प्रकार की—कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल।

५१. छहों लेश्याओं में तीव्रता मन्दता दिखाओ ?

कृष्णादि तीन अशुभ हैं और पीत आदि तीन शुभ। तहा कृष्ण लेश्या अत्यन्त तीव्र क्रोधादि रूप प्रवृत्ति का नाम है और कापोत अत्यन्त मन्द का। पीत लेश्या अत्यन्त तीव्र दया दान आदि रूप प्रवृत्ति का नाम है और शुक्ल अत्यन्त मन्द का।

५२. कषाय व लेश्या में क्या अन्तर है ?

कषाय उपयोग रूप है और लेश्या योग रूप। अन्तरग उपयोग मे कषाय भाव उदित होने पर तत्तद्योग्य प्रवृति मन वचन काय की प्रवृत्ति या योग होता ही है इसलिये दोनो एक है, पर समझाने के लिये दो भेद करके बताया है।

५३. वासना कितने प्रकार की है ?

चार प्रकार की—अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान व सज्वलन ।

५४ वासना के भेदों को क्रोधादि कषायों का विशेषण क्यों बनाया ?

क्रोधादि चार कषाय अपनी अपनी तीव्र या मन्द वासना की अपेक्षा प्रत्येक चार चार प्रकार की हो जाती है, जैसे क्रोध भी अनन्तानुबन्धी आदि चार प्रकार का और मान आदि भी ।

(५५) नोकषाय के कितने भेद हैं ?

नव—हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा (ग्लानि), स्त्री वेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद ।

५६ वेद किसे कहते हैं ?

स्त्री के पुरुष के साथ, पुरुष के स्त्री के साथ और नपुंसक के दोनों के साथ मैथुन करने का अन्तरग भाव वेद कहलाता है ।

५७. वेद कितने प्रकार का है ?

दो प्रकार का—भाव वेद व द्रव्य वेद । इनमे से प्रत्येक के तीन तीन भेद है—स्त्री, पुरुष व नपुसक ।

५८. द्रव्य व भाव वेद किसे कहते हैं ?

अन्तरग में मैथुन भाव रूप कषाय का होना भाव वेद है और शरीर में स्त्री पुरुष आदि के अगोपागो का होना द्रव्य वेद है ।

५९. नोकषायों के साथ अनन्तानुबन्धी आदि भेद क्यों न बताये ?

ये कषायें उदय काल मात्र को स्थित रहती हैं, पीछे पूर्ण विनष्ट हो जाती हैं । फिर निमित्तादि मिलने पर उदित हो जाती हैं । इनकी कोई वासना नहीं होती इसलिये इन्हे अनन्तानुबन्धी भेदों युक्त नहीं कहा जाता ।

६० नोकषायों को 'नो' क्यों कहा गया ?

वासना विहीन होने से ये किंचित कषाय हैं पूरी नहीं ।

(६१) अनन्तानुबन्धी क्रोधमान, माया, लोभ किसे कहते हैं ?

जो आत्मा के स्वरूपाचरण चारित्र को घाते उनको अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ कहते हैं ।

६२ स्वरूपाचरण चारित्र को घात ने से क्या तात्पर्य ?

मिथ्यात्व के सहवर्ती होने से यह कषाय जीव को अन्तरग की ओर लक्ष्य करने नही देती। इसी के उदय से वह बाह्य पदार्थों में इष्टानिष्ट भाव को धारण करता हुए उनके पीछे व्यग्र बना रहता है।

(६३) मिथ्यात्व व अनन्तानुबन्धी में क्या अन्तर है ?

मिथ्यात्व सम्यक्त्वगुण का घातक होने से अभिप्राय व श्रद्धा को विपरीत करता है और अनन्तानुबन्धी चारित्र का घातक होने से अन्तर प्रवृत्ति को विपरीत करता है।

(६४) अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ किसे कहते है ?

जो आत्मा के देश चारित्र को घाते उनको अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ कहते हैं।

(६५) प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ किसे कहते हैं ?

जो आत्मा के सकल चारित्र को घाते, उनको प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ कहते है।

(६६) संज्वलन क्रोध मान माया लोभ किसे कहते हैं ?

जो आत्मा के यथाख्यात चारित्र को घाते उनको संज्वलन कषाय क्रोध मान माया लोभ) और नोकषाय कहते है।

६७. देश चारित्र आदि को घातना क्या ?

इस इस प्रकृति के उदय मे जीव की वैराग्य व त्याग शक्ति वृद्धिगत नही हो पाती। भोगो से विरक्त होना तथा साम्यता मे स्थित होना चाहते हुए भी उस उस प्रकार के चारित्र को स्पर्श नही कर पाता। यही उस उस का घात है ?

६८ सम्यक्त्व होते हुए भी चारित्र धारणा क्यों नहीं करता ?

सम्यक्त्व का काम अन्तरग मे हेयोपादेय विवेक उत्पन्न कराना मात्र है। तदनन्तर हेय का त्याग वैराग्य की वृद्धि के आधीन है और वह चारित्र के अन्तर्गत है।

६९. अनन्तानुबन्धी का उत्कृष्ट वासना काल कितना ?

अनन्तानुबन्धी वासना अनन्त काल रहती है अर्थात भव भवान्तर तक साथ जाती है। अप्रत्याख्यान का उत्कृष्ट काल छ: महीने है। प्रत्याख्यान का १५ दिन और सज्वलन का अन्तर्मुहूर्त मात्र है।

७०. नोकषाय कौन से चारित्र को घातती है ?

यथाख्यात चारित्र को।

(७१) आयु कर्म किसे कहते है ?

जो कर्म आत्मा को नारक तिर्यञ्च मनुष्य देव के शरीर मे रोक रखे उसको आयु कर्म कहते है। अर्थात आयु कर्म आत्मा के अवगाह गुण को घातता है।

(७२) आयु कर्म के कितने भेद है ?

चार-नरकायु, तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु व देवायु।

(७३) नाम कर्म किसको कहते है ?

जो जीव को गत्यादिक नाना रूप परिणमावै अथवा शरीरादिक बनावे। भावार्थ–नामकर्म आत्मा के सूक्ष्मत्व गुण को घातता है।

(७४) नाम कर्म के कितने भेद हैं ?

तिरानवे—चार गति (नरक, तिर्यच, मनुष्य व देव), पाच जाति (एकेन्द्रियादि पचेन्द्रिय पर्यन्त), पाच शरीर (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण), तीन अगोपाग (औदारिक वैक्रियक आहारक); एक निर्माण कर्म, पाच बन्धन कर्म (पांचो शरीरो के पाच), पाच सघात कर्म (पाचो शरीरो के), छ. सस्थान समचतुरस्र, न्यग्रोध परिमण्डल, स्वाति, कुब्जक, वामन व हुडक), छ सहनन (वज्र ऋषभ नाराच, वज्र नाराच नाराच, अर्द्ध नाराच, कीलक, असप्राप्त सृपाटिका); पाच वर्ण (कृष्ण नील रक्त पीत श्वेत), दो गन्ध (सुगन्ध दुर्गन्ध) पाच रस (खट्टा मीठा कडुआ कसायला चरपरा), आठ स्पर्श (कठोर, कोमल, हलका, भारी, ठण्डा, गर्म, चिकना, रूखा), चार

आनुपूर्वीय (नरक तिर्यंच मनुष्य व देव); एक अगुरुलघु, एक उपघात, एक परघात, एक आतप, एक उद्योत, दो विहायोगति (प्रशस्त अप्रशस्त)। (आगे सब एक एक) एक उच्छवास, एक त्रस, एक स्थावर, एक वादर, एक सूक्ष्म, पक पर्याप्ति, एक अपर्याप्ति, एक प्रत्येक, एक साधारण, एक स्थिर, एक अस्थिर, एक शुभ, एक अशुभ, एक सुभग एक दुर्भग, एक सुस्वर, एक दु स्वर, एक आदेय, एक अनादेय, एक यश कीर्ति, एक अयश कीति, एक तीर्थंकर नाम कर्म।

(७५) गति नाम कर्म किसको कहते है ?

जो कर्म जीव का आकार नारकी, तिर्यञ्च, मनुष्य व देव के समान बनाये।

७६ गति व आयु में क्या अन्तर है ?

गति कर्म शरीर के 'आकार का निर्माण करता है और आयु कर्म उसे कुछ निश्चित काल तक उस आकार मे या शरीर में बान्ध कर रखता है।

(७७) जाति किसको कहते है ?

अव्यभिचारी सदृशता से एक रूप करने वाले विशेप को जाति कहते है। अर्थात वह सदृश जाति वाले ही पदार्थो को ग्रहण करता है। (जैसे गो जाति से खण्डी मुण्डी सभी गौओ का ग्रहण हो जाता है)।

(७८) जाति नाम कर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से एकेन्द्रिय द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय पचेन्द्रिय कहा जाये। (अर्थात जो कर्म इस इम जाति का शरीर वनावे)।

(७९) शरीर नाम कर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से आत्मा के औदारिकादि शरीर वने।

(८०) निर्माण नाम कर्म किसको कहते है ?

जिसके उदय से अगोपयाग की ठीक ठीक रचना हो (अर्थात

आख के स्थान पर आख और नाक के स्थान पर नाक हो) उसे निर्माण नामकर्म कहते है ।

(८१) बन्धन नाम कर्म किसे कहते है ?

जिस कर्म के उदय से औदारिकादि शरीरो के परमाणु परस्पर बन्ध को प्राप्त हो (विखर कर पृथक पृथक न हो जाये) उसे बन्धन नाम कर्म कहते है।

(८२) संघात नाम कर्म किसे कहते है ?

जिस कर्म के उदय से औदारिकादि शरीर के परमाणु छिद्र रहित एकता को प्राप्त हो।

(८३) संस्थान नाम कर्म किसे कहते है ?

जिस कर्म के उदय से शरीर की आकृति बने उसे सस्थान नाम कर्म कहते है।

(८४) समचतुरस्र संस्थान किसे कहते है ?

जिस कर्म के उदय से शरीर की शकल ऊपर नीचे तथा वीच मे समभाग से (Proportional) बने।

(८५) न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थान किसे कहते है ?

जिस कर्म के उदय से जीव का शरीर बड़ के वृक्ष की तरह का हो अर्थात जिसके नाभि से नीचे के अग छोटे और ऊपर के अग बडे हो।

(८६) स्वाति संस्थान किसको कहते है ?

न्यग्रोध परिमण्डल से बिल्कुल विपरीत लक्षण को स्वाति सस्थान कहते है जैसे सर्प की नाभी। (अर्थात नीचे के अग वड़े और ऊपर के छोटे हो)।

(८७) कुब्जक संस्थान किसे कहते है ?

जिस कर्म के उदय से शरीर कुबड़ा हो।

(८८) वामन संस्थान किसे कहते है ?

जिस कर्म के उदय से वौना शरीर हो।

(८९) हुण्डक संस्थान किसे कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से शरीर के अगोपाग किसी खास शकल के न हो।

(९०) संहनन नाम कर्म किसे कहते है ?

जिस कर्म के उदय से हाडो का बन्धन विशेष हो, उसे सहनन नामकर्म कहते है।

(९१) वज्रर्षभनाराच संहनन किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से वज्र के हाड हो, वज्र की ही कीली हो तथा वेष्टन (चमडा) भी वज्र के हो।

९२ वज्र के हाड़ आदि कैसे ?

अत्यत कठोर, सुदृढ व मजबूत हड्डी, चमडा आदि वज्र का कहा जाता है।

(९३) वज्रनाराच सहनन किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से वज्र के हाड व वज्र की कीली हो परन्तु वेष्टन वज्र का न हो।

(९४) नाराच संहनन किसे कहते है ?

जिस कर्म के उदय से वेष्टन और कीली सहित हाड हों (पर कोई भी वस्तु वज्र की न हो)।

(९५) अर्द्ध नाराच संहनन किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से हाड़ो की सधि अर्द्धकीलित हो।

(९६) कीलक संहनन किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से (विना कीलो के) हाड परस्पर कीलित हो।

(९७) असंप्राप्त सुपाटिका संहनन किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से जुदे जुदे हाड नसों से वन्धे हों, परस्पर कीले हुए न हो।

९८. संहनन कौन से शरीर मे होता है ?

केवल औदारिक शरीर में ही सहनन होता है, क्योंकि उसमे

ही हड्डी चमडा आदि होता है, वैक्रियक आदि शरीरो मे नही।

(९९) वर्ण नामकर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से शरीर मे रंग हो।

(१००) गन्ध नाम कर्म किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से शरीर मे गन्ध हो।

(१०१) रस नाम कर्म किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से शरीर मे रस हो।

(१०२) स्पर्श नाम कर्म किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से शरीर मे स्पर्श हो।

१०३ वर्ण गन्ध रस व स्पर्श किस शरीर में होते है ?

सभी शरीर मे होते है, क्योकि वे पुद्गल के गुण है।

१०४ अंगोपांग नाम कर्म के तीन ही भेद क्यों किये ?

औदारिकादि तीन शरीर ही अगोपाग युक्त होते है, तैजस व कर्माण के अपने कोई स्वतत्र अगोपाग नही होते।

(१०५) आनुपूर्वी नाम कर्म किसे कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से आत्मा के प्रदेश मरण से पीछे और जन्म से पहले अर्थात विग्रहगति मे मरण से पहले के शरीर के आकार रहे।

(१०६) अगुरु लघु नाम कर्म किसे कहते है ?

जिस कर्म के उदय से शरीर लोहे के गोले की तरह भारी और आक के तूल की तरह हलका न हो।

१०७. अगुरुलघु गण को घाते सो अगुरुलघु कर्म ऐसा कहें तो ?

यह कर्म शरीर से सम्बन्ध रखता है, आत्मा से नही, अतः शरीर के भारी हलके पने मे ही इसका व्यापार है।

(१०८) उपघात नाम कर्म किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से अपना घात करने वाले ही अग हो (जैसे बारह सींगे के सींग)।

(१०९) परघात नामकर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से दूसरे का घात करने वाले अग हो (जैसे सिंह के नख)।

(११०) आतप नामकर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से आतप रूप शरीर हो, जैसे सूर्य का प्रतिबिम्ब (और अग्नि)।

(१११) उद्योत नाम कर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से उद्योत रूप शरीर है। (अर्थात चन्द्रमा वत् शीतल प्रकाशयुक्त शरीर है जैसे खद्योत)

(११२) विहायोगति नाम कर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से आकाश मे गमन हो। उसके शुभ और अशुभ ऐसे दो भेद है; (यथा मनुष्य की चाल व ऊट की चाल)

(११३) उच्छ्वास नामकर्म किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से श्वासोच्छ्वास हो।

(११४) त्रस नाम कर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से द्वीन्द्रियादि जीवो मे जन्म हो।

(११५) स्थावर नाम कर्म किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से पृथ्वी अप तेज वायु और वनस्पति मे जन्म हो।

(११६) पर्याप्ति कर्म किसको कहते हैं ?

जिसके उदय से अपने अपने योग्य पर्याप्ति पूर्ण हो।

(११७) पर्याप्ति किसको कहते हैं ?

आहारक वर्गणा, भाषा वर्गणा और मनोवर्गणा के परमाणुओ को शरीर इन्द्रियादि रूप परिणमावने की शक्ति की पूर्णता को पर्याप्ति कहते है।

(११८) पर्याप्ति के कितने भेद है ?

छह—प्रथम आहार पर्याप्ति, दूसरी शरीर पर्याप्ति, तीसरी इन्द्रिय पर्याप्ति, चौथी श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति, पाचवी भाषा पर्याप्ति, छटी मन पर्याप्ति।

११९ आंहार पर्याप्ति किसे कहते है ?
आंहारक वर्गणा के परमाणुओ को खल रसभाव परिणमावने को कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता।

१२० शरीर पर्याप्ति किसे कहते है ?
आहार पर्याप्ति द्वारा खलभाग रूप परिणमने वाले परमाणुओं का मांस हाड आदि कठोर रूप मे और रसभाग रूप परिणमने वालो को रुधिरादि द्रव रूप मे परिणमावने की कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता।

१२१. इन्द्रिय पर्याप्ति किसे कहते है ?
उपरोक्त पर्याप्तियो द्वारा हाड आदि रूप परिणमने को समर्थ उन्ही आहारक वर्गणा के परमाणुओ को इन्द्रियो के आकार रूप मे परिमावने को कारण भूत जीव की शक्ति की पूर्णता।

१२२. श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति किसे कहते है ?
उपरोक्त मे से अतिरिक्त अन्य आहारक वर्गणाओ को ग्रहण करके उण्हे श्वासोच्छ्वास रूप मे परिणमावने को कारण भूत जीव की शक्ति की पूर्णता।

१२३. भाषा पर्याप्ति किसे कहते है ?
भाषा वर्गणाओ को ग्रहण करके उन्हे वचन रूप मे परिणमावने को कारण भूत जीव की शक्ति की पूर्णता।

१२४. मन पर्याप्ति किसे कहते हैं ?
मनोवर्गणा को ग्रहण करके उन्हे मन हृदय स्थान मे अष्ट पाखुडी के कमलाकार मन के रूप मे परिणमावने को कारण भूत जीव को शक्ति की पूर्णता।

१२५ छहों पर्याप्तियों में कितना कितना काल लगता है ?
उपरोक्त क्रम से ही एक के पश्चात एक पूरी होते हुए इन सबका पूरा काल अन्तर्मुहूर्त मात्र है। पृथक पृथक एक एक का पूर्ति काल भी अन्तमुहूर्त ही है। पहली पर्याप्ति से दूसरी का, दूसरी से तीसरी का इसी प्रकार आगे आगे वाली पर्याप्ति

का काल अपने से पूर्व पूर्व की अपेक्षा कुछ अधिक है। जघन्य से उत्कृष्ट पर्यन्त अन्तर्मुहूर्त के अनेक भेद है। सो यहा तत्तद्योग्य अन्तर्मुहुर्त समझना।

१२६ छहों पर्याप्तियों का प्रारम्भ व अन्त किस क्रम से होता है ?

आहार पर्याप्ति को आदि लेकर पूर्वोक्त क्रम से ही इन की पूर्णता तो आगे पीछे होती है, पर इन सब का प्रारम्भ एक दम भवधारण के प्रथम क्षण मे ही हो जाता है।

१२७. किस किस जीव को कितनी पर्याप्ति होती है ?

एकेन्द्रिय जीव के भाषा व मन के बिना चार, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय ओर असैनी पचेन्द्रिय के मन विना पाच और सैनी पचेन्द्रिय के छहो पर्याप्तिमे होती हैं।

१२८ पर्याप्त जीव कौन से हैं ?

शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने के पश्चात जीव पर्याप्त सज्ञा को प्राप्त होता है, क्योकि इसके पूर्ण होने पर अगली पाचो पर्याप्तिये से क्रम पूर्वक नियम से पूरी हो जाती है।

(१२९) अपर्याप्ति नाम कर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से लब्ध्य पर्याप्त अवस्था हो उसको अपर्याप्ति नाम को कहते है।

१३० अपर्याप्त जीव कौन से व कितने प्रकार के होते हैं ?

अपर्याप्त जीव दो प्रकार के होते है—निवृत्ति अपर्याप्त और लब्धि अपर्याप्त। शरीर पर्याप्ति पूर्ण हो जाने के पश्चात् जिस जीव को अवश्य पर्याप्त सज्ञा प्राप्त करनी है वह जब तक उसे (शरीर पर्याप्ति) को पूरी नही कर लेता तब तक निवृत्ति अपर्याप्त कहलाता है। पर जिस जीव को शरीर पर्याप्ति प्रारम्भ हो जाने पर भी उसे पूरी करने की शक्ति न हो, और उस पर्याप्ति के अधूरी रहते मे ही मृत्यु को प्राप्त हो जाये, वह लब्ध्यपर्याप्तक कहलाता है। श्वास के अठहारवें भाग प्रमाण ही उनकी आयु होती है।

स्त्री पुरुषो के दुर्भाग्य को उत्पन्न करने वाला शरीर हो, वह दुर्भग नाम कर्म है।

(१३९) आदेय नाम कर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से कान्ति (प्रभा) युक्त शरीर उपजे उसको आदेय नाम कर्म कहते है।

(१४०) अनादेय नाम कर्म किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से कान्ति (प्रभा) युक्त शरीर न हो उसको अनादेय नाम कर्म कहते है।

(१४१) सुस्वर नाम कर्म किसे कहते है ?

जिसके उदय से अच्छा स्वर हो उसको सुस्वर नाम कर्म कहते है।

(१४२) दुस्वर नाम कर्म किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से अच्छा स्वर न हो उसको दुस्वरनामकर्म कहते है।

(१४३) यशः कीर्ति नाम कर्म किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से ससार मे जीव का यश हो उसे यश-कीर्ति नाम कर्म कहते है।

(१४४) अयश· कीर्ति नाम कर्म किसको कहते है ?

जिस कर्म के उदय से ससार मे जीव की तारीफ न होवे उसको अयश कीर्ति नाम कर्म कहते हैं।

(१४५) तीर्थंकर नाम कर्म किसको कहते हैं ?

अर्हन्त पद के कारणभूत कर्म को तीर्थंकर नाम कर्म कहते हैं।

(१४६) गोत्र कर्म किसे कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से सन्तान के क्रम से चले आये जीव के आचरण रूप उच्च नीच कुल मे जन्म हो।

(१४७) गोत्र कर्म के कितने भेद हैं ?

दो भेद हैं—उच्च गोत्र और नीच गोत्र।

(१४८) उच्च गोत्र कर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से उच्च गोत्र (कुल) में जन्म हो।

(१४९) नीच गोत्र कर्म किसको कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से नीच गोत्र (कुल) मे जन्म हो।

(१५०) अन्तराय कर्म किसको कहते है ?

जो दानादि मे विघ्न डाले।

(१५१) अन्तराय कर्म के कितने भेद हैं ?

पाच—दानान्तराय, लाभान्तराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय और वीर्यान्तराय।

(२. पुण्य पाप आदि प्रकृति विभाग)

(१५२) पुण्य कर्म किसको कहते है ?

जो जीव को इष्ट वस्तु की प्राप्ति करावे।

(१५३) पाप कर्म किसको कहते हैं ?

जो जीव को अनिष्ट वस्तु की प्राप्ति करावे।

(१५४) घातिया कर्म किसको कहते हैं ?

जो जीव के ज्ञानादिक अनुजीवी गुण को घाते उसको घातिया कर्म कहते है।

(१५५) अघातिया कर्म किसको कहते हे ?

जो जीव के ज्ञानादि अनुजीवी गुण को न घाते (प्रतिजीवी गुण को घाते अथवा शरीर व इसके साधनो का सम्पादन करे)।

(१५६) सर्वघाती कर्म किसको कहते है ?

जो जीव के अनुजीवी गुणो को पूरे तौर से घाते।

(१५७) देश घाती कर्म किसको कहते हैं ?

जो जीव के अनुजीवी गुणो को एक देश घाते उसको देशघाती कर्म कहते हैं।

१५८ पूरे घात व एक देश घात से क्या समझे ?

गुण की झलक मात्र भी व्यक्त न हो सो सर्वघात है, जैसे हमें तुम्हे केवल ज्ञान या मनः पर्यय ज्ञान की झलक मात्र भी नही है। गुण का कुछ अंश व्यक्त रहे, भले ही वह अत्यल्प हो; जैसें कि सूक्ष्म निगोदिया तक में मति ज्ञान का कुछ न कुछ अंश व्यक्त रहता, सो देशघात है।

(१५९) जीव विपाकी कर्म किसे कहते हैं ?
जिसका फल जीव मे हो (अर्थात जीव के ज्ञानादि गुणो को घाते या प्रभावित करे)।

(१६०) पुद्गल विपाकी कर्म किसे कहते हैं ?
जिसका फल पुद्गल मे हो (अर्थात जो शरीर का निर्माण करे)।

(१६१) भव विपाको कर्म किसको कहते हैं ?
जिसके फल से जीव ससार मे रुके।

(१६२) क्षेत्र विपाकी कर्म किसको कहते है ?
जिसके फल से जीव का आकार विग्रह गति मे पहले जैसा बना रहे।

(१६३) विग्रह गति किसको कहते हैं ?
एक शरीर को छोड कर दूसरा शरीर ग्रहण करने के लिये जाने को विग्रहगति कहते है।

(१६४) घातिया कर्म कितने व कौन से है ?
सैंतालीस—ज्ञानावरणी ५, दर्शनावरणी ९, मोहनीय २८, अन्तराय ५।

(१६५) अघातिया कर्म कितने व कौन से है ?
एक सौ एक—वेदनीय २, आयु ४, नाम ९३, गोत्र २।

(१६६) सर्वघाती प्रकृति कितनी व कौन सी हैं ?
इक्कीस है—ज्ञानावरण की १ (केवलज्ञानावरण), दर्शनावरण की ६ (केवल दर्शनावरण १ और निद्रा ५), मोहनीय की १४ (अनन्तानुवन्धी ४, अप्रत्याख्यानावरण ४, प्रत्याख्यानावरण ४, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व)।

(१६७) देशघाती प्रकृति कितनी व कौन सी हैं ?
छब्बीस है—ज्ञानावरण ४ (मति, श्रुत, अवधि व मन पर्यय ज्ञानावरण), दर्शनावरण ३ (चक्षु, अचक्षु व अवधि दर्शनावरण), मोहनीय १४ (सज्वलन ४, नोकषाय ९, सम्यक्प्रकृति) अन्तराय ५ (दान लाभ, भोग, उपभोग व वीर्यान्तराय)।

१६८. **अवधि व मनः पर्यय ज्ञानावरणी को देशघाती कैसे कहा जब कि उसका हममें सर्वघात पाया जाता है ?**

कुछ प्रकृतिये ऐसी है जिनमें सर्वघात व देशघात दोनो प्रकार का कार्य करने की शक्ति है; जैसे अवधि व मन.पर्यय ज्ञानावरणीय, चक्षु व अवधि दर्शन। कारण इन प्रकृतियो का किन्ही जीवों मे सर्वघाती शक्ति युक्त उदय पाया जाता है और किन्हीं मे देशघाती शक्ति युक्त। हममे चक्षु दर्शनावरण का देशघाती उदय है और त्रीन्द्रिय जीवो मे सर्व घाती। मति श्रुत ज्ञानावरण का किसी भी जीव मे सर्वघाती उदय नही देखा जाता, इस लिये ये तथा अन्य प्रकृतियें सर्वथा देशघाती ही है।

(१६९) **क्षेत्र विपाकी प्रकृति कितनी और कौन सी है ?**

चार हैं—नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, मनुष्य-गत्यानुपूर्वी व देव गत्यानुपूर्वी।

(१७०) **भव विपाकी प्रकृति कितनी और कौन सी है ?**

चार हैं—नरकायु, तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु, देवायु।

(१७१) **जीव विपाकी प्रकृति कितनी और कौन सी हैं ?**

अठहत्तर हैं—घातिया की ४७, गोत्र की २, वेदनीयकी २, नाम कर्म की २७ (तीर्थंकर, उच्छ्वास, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्ति, अपर्याप्ति, सुस्वर, दुस्वर, आदेय, अनादेय, यशः कीर्ति, अयश. कीर्ति, त्रस, स्थावर, प्रशस्त विहायोगति, अप्रशस्त विहायोगति, सुभग, दुर्भग, गति ४, जाति ५। ये कुल मिलकर ७८ हैं।

१७२. **नाम कर्म की प्रकृतियों का फल जीव को कैसे हो ?**

यद्यपि सभी अघातिया कर्मों का फल शरीर प्रधान है, पर उपरोक्त कुछ प्रकृतिये ऐसी हैं जिनका औपचारिक फल जीव को प्राप्त होता है, जैसे नीच ऊंच गोत्र से जीव ही कुछ ऊंचा या नीचा अनुभव करता है, पर्याप्ति रूप शक्ति जीव में ही पैदा होती है, प्रशस्त या अप्रशस्त गमन अथवा यश व अपयश मे जीव ही उत्साह आदि प्राप्त करता है।

(१७३) पुद्गल विपाकी प्रकृति कितनी व कौन सी हैं ?

बासठ है—(सर्व १४८ प्रकृतियो मे से क्षेत्र विपाकी ४, भव-विपाकी ४ और जीव विपाकी ७८ ऐसे कुल ८६ प्रकृति घटाने पर ६२ शेष रहती है। वे सब पुद्गल विपाकी है।)

(१७४) पाप प्रकृति कितनी व कौन सी हैं ?

सौ है—घातिया ४७, असाता वेदनीय, नीच गोत्र, नरकायु और नाम कर्म की ५० (नरक गति, नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यंच-गत्यानुपूर्वी, एकेन्द्रियादि चार जाति, अन्तिम ५ सहनन, अन्तिम ५ सस्थान, स्पर्श रसादिक २०, उपघात १, अप्रशस्त विहायो-गति १, स्थावर १, सूक्ष्म १, अपर्याप्ति १, अनादेय १, अयश कीर्ति १, अशुभ १, दुर्भग १, दु स्वर १, अस्थिर १, साधारण १)।

१७५ तिर्यंच गति को तो पाप मे गिना पर आयु को न गिना ?

तिर्यंच आयु पुण्य मे गिनाई है। इसका कारण यह है कि एक नरक आयु ही होती है जिसका कि जीव त्याग करना चाहता है। शेष तीन आयुओ का जीव त्याग करना नही चाहता, विष्ठा का कीडा भी स्वय मरना नही चाहता। गति के दृष्ट दुखो को देखने पर तिर्यंच गति साक्षात दु.ख रूप होने मे पाप मे गिनी जानी योग्य ही है।

(१७६) पुण्य प्रकृति कितनी व कौन सी हैं ?

अडसठ हैं (सर्व १४८ प्रकृतियो मे से पाप की १०० निकल कर शेष रही ४८ मे नामकर्मकी स्पर्श रसादि २० मिला देने पर ६८ का योग प्राप्त होता है; क्योकि स्पर्श रसादि की ये २० प्रकृति पुण्य जीव मे पुण्य रूप से और पाप जीव मे पाप रूप से फल देने के कारण उभय फल प्रदायी हैं।)

(३. स्थिति बन्ध)

(१७७) स्थिति बन्ध किसको कहते हैं ?

कर्मो मे आत्मा के साथ (बन्धकर) रहने की मर्यादा पडने को (अर्थात् उनकी आयु को) स्थिति बन्ध कहते हैं।

(१७८) आठों कर्मों की उत्कृष्ट स्थिति कितनी कितनी है ?

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, अन्तराय इन चारो कर्मो की उत्कृष्ट स्थिति तीस तीस कोडा कोड़ी सागर की है। मोहनीय कर्म की ७० कोडा कोडी सागर की है (तहा भी दर्शन मोहनीय की ७० और चारित्र मोहनीय की ३० कोडा कोड़ी सागर है), नाम कर्म व गोत्र कर्म की बीस बीस कोडा कोडी सागर और आयु की तेतीस कोडा कोडी सागर है।

(१७९) आठों कर्मो की जघन्य स्थिति कितनी है ?

वेदनीय की १२ मुहूर्त, नाम तथा गोत्र की आठ मुहूर्त और शेप समस्त कर्मो की अन्तर्मुहूर्त जघन्य स्थिति है।

(१८०) कोड़ा कोड़ी किसे कहते है ?

एक क्रोड को एक क्रोड से गुणा करने पर जो लब्ध आवे उसको एक कोडा कोडी कहते है।

(१८१) सागर किसे कहते है ?

दस कोडा कोडी अद्धापल्यो का एक सागर होता है।

(१८२) अद्धापल्य किसे कहते हैं ?

२००० कोस गहरे और २००० कोस चौडे गोल गड्ढे मे, कैंची से जिसका दूसरा भाग न हो सके, ऐसे मैंढे के बालो को भरना। जितने बाल उसमे समावें उनमे से एकएक बाल को सौ सौ वर्ष पश्चात निकालना। जितने वर्षो मे वे सब बाल निकल जावे, उतने वर्षो के जितने समय हो, उसको व्यवहार पल्य कहते है। व्यवहार पल्य से असख्यात गुणा उद्धारपल्य है और उद्धार पल्य से असख्यात गुणा अद्धापल्य होता है।

(१८३) मुहूर्त किसको कहते है ?

अडतालीस मिनट का एक मुहूर्त होता है।

(१८४) अन्तर्मुहूर्त किसको कहते है ?

आवली से ऊपर और मुहूर्त से नीचे के काल को अन्तर्मुहूर्त कहते है।

(१८५) आवली किसको कहते है ?
एक श्वास मे असख्यात आवली होती है।

(१८६) श्वासोच्छ्वास काल किसको कहते हैं ?
नीरोग पुरुप की नाडी के एक बार चलने को श्वासोच्छ्वास कहते है।

(१८७) एक मुहूर्त मे कितने श्वासोच्छ्वास होते है ?
तीन हजार सात सौ तेहत्तर होते है (३७७३)।

(४. अनुभाग व प्रदेश बन्ध)

(१८८) अनुभाग बन्ध किसको कहते हैं ?
फल देने की शक्ति की हीनाधिकता को अनुभाग बन्ध कहते है।

(१८९) प्रदेश बन्ध किसको कहते हैं ?
बन्धने वाले कर्मों की (वर्गणाओ की) सख्या के निर्णय करने को प्रदेश बन्ध कहते है।

१९०. प्रकृति व अनुभाग बन्ध मे क्या भेद है ?
(देखो आगे बन्ध कारणाधिकार न० ३)

३/२ उदय उपशम आदि अधिकार

---

(१) उदय किसको कहते हैं ?

स्थिति पूरी करके कर्म के फल देने को उदय कहते है।

(२) उदीरणा किसको कहते हैं ?

स्थिति पूरी किये विना ही (पाल मे दवाकर पकाये गये आम-वत्) कर्म के फल देने को उदीरणा कहते है।

(३) उपशम किसको कहते हैं ?

द्रव्य क्षेत्र काल भाव के निमित्त से कर्म की शक्ति की अनुद्भूति को उपशम कहते है।

(४) उपशम के कितने भेद हैं ?

दो हैं—एक अन्त करण रूप उपशम, दूसरा सदवस्था रूप उपशम।

(५) अन्तःकरण रूप उपशम किमको कहते हैं ?

आगामी काल मे उदय आने योग्य कर्म परमाणुओं को आगे पीछे उदय आने योग्य करने को अन्त.करण रूप उपशम कहते हैं।

(६) सदवस्था रूप उपशम किसको कहते हैं ?

वर्तमान समय को छोड़कर आगामी काल मे उदय आने वाले कर्मों के सत्ता में रहने को सदवस्था रूप उपशम कहते हैं।

(७) क्षय किसको कहते हैं ?

कर्म की आत्यन्तिकी निवृत्ति को क्षय कहते हैं।

८ क्षय के कितने भेद है ?

दो है—अत्यन्त क्षय और उदयाभाव क्षय ।

९. अत्यन्त क्षय किसको कहते है ?

कर्मो के प्रदेशो का ही झड जाना या अन्य रूप हो जाना अत्यन्त क्षय है ।

१०. उदयाभाव क्षय किसको कहते हैं ?

बिना फल दिये कर्मो के छूट जाने को उदयाभावी क्षय कहते है । अथवा कर्मो की शक्ति का अत्यन्त क्षीण हो जाना उदयाभावी क्षय है, क्योकि अब वह प्रकृति सर्वघाती के रूप मे उदय न आ कर देशघाती के रूप मे उदय आयेगी ।

(११) क्षयोपशम किसको कहते हैं ?

वर्तमान निषेकमे सर्वघाती स्पर्धक का उदयाभावी क्षय, तथा देशघाती स्पर्धको का उदय और आगामी काल मे उदय आने वाले निषेको का सदवस्था रूप उपशम, ऐसी कर्म की अवस्था को क्षयोपशम कहते है ।

१२. क्षयोपशम के उपरोक्त स्वरूप को स्पष्ट समझाओ ।

क्षयोपशम की इस अवस्था मे केवल देशघाती प्रकृति का उदय होता है सर्वघाती का नही, इसी कारण जीव के परिणाम धुधले रहते है । सर्वघाती कर्मो का अनुभाग उदय मे आने से पूर्व घट कर देशघाती बन जाता है और उस रूप से अगले समय मे उदय आ जाता है । यही सर्वघाती स्पर्धक का उदयाभावी क्षय है । परन्तु सत्ता मे अवश्य सर्वघाती स्पर्धक पडे रहते हैं, जो आगे जाकर उदय मे आयेगे, परन्तु वर्तमान मे किसी प्रकार भी उदय मे नही आ सकते । यही आगामी निषेको का सदवस्थारूप उपशम है । देशघाती प्रकृति दो है— एक तो पहली सत्ता मे पड़ी हुई और दूसरी वह जो सर्वघाती प्रकृति के उदयाभावी क्षय द्वारा नई बनी है । दोनो का ही वर्तमान मे उदय रहता है, जिसके कारण परिणामो मे कुछ

धुधलापन या दोष उत्पन्न होता रहता है। यही देशघाती स्पर्धको का उदय कहलाता है। ये तीनो बाते जिसमे पाई जावे उसे क्षयोपशम कहते हैं।

(१३) **निषेक किसको कहते हैं ?**

एक समय मे कर्म के जितने परमाणु उदय मे आवें उन सबके समूह को निपेक कहते है।

(१४) **स्पर्धक किसको कहते है ?**

वर्गणाओ के समूह को स्पर्धक कहते है।

(१५) **वर्गणा किसको कहते है ?**

वर्गो के समूह को वर्गणा कहते है।

(१६) **वर्ग किसको कहते है ?**

समान अविभाग प्रतिच्छेदो के धारक प्रत्येक कर्म परमाणु को वर्ग कहते है।

(१७) **अविभाग प्रतिच्छेद किसको कहते हैं ?**

शक्ति के अविभागी अशो को अविभाग प्रतिच्छेद कहते है।

(१८) **इस प्रकरण में 'शक्ति' शब्द से कौन सी शक्ति इष्ट है ?**

यहा 'शक्ति' शब्द से कर्मों की अनुभाग रूप अर्थात फल देने की शक्ति इष्ट है।

(१९) **उत्कर्षण किसे कहते है ?**

कर्मो की स्थिति व शक्ति दोनो के बढ़ जाने को उत्कर्षण कहते है।

(२०) **अपकर्षण किसको कहते है ?**

कर्मों की स्थिति व शक्ति के घट जाने को अपकर्षण कहते है।

(२१) **सक्रमण किसको कहते हैं ?**

किसी कर्म के सजातीय एक भेद से दूसरे भेद रूप हो जाने को सक्रमण कहते है।

(२२) **समय प्रबद्ध किसको कहते है ?**

एक समय जितने कर्म व नोकर्म परमाणु बन्धे उतने सबको एक समय प्रबद्ध कहते है।

(२३) गुण हानि किसको कहते हैं ?

गुणाकार रूप हीन हीन द्रव्य जिसमे पाया जाये उसको गुण-हानि कहते है। जैसे—किसी जीव ने एक समय मे ६३०० पर-माणुओ के समूह रूप समय प्रबद्ध का बन्ध किया, और उसमें ४८ समय की स्थिति पडी। उसमे गुण हानियो के समूह रूप नाना गुणहानि ६ मे से प्रथम गुणहानि के परमाणु ३२००, दूसरी गुणहानि के १६००, तीसरी गुणहानि के ८००, चौथी गुणहानि के ४००, पाचवी गुणहानि के २०० और छटी गुण-हानि के १०० है। यहा उत्तरोत्तर गुणहानियो में गुणाकार रूप हीन हीन परमाणु (द्रव्य) पाये जाते हैं इसलिये इसको गुणहानि कहते है।

(२४) गुण आयाम किसको कहते हैं ?

एक गुण हानि के समय के समूह को गुणहानि आयाम कहते है। जैसे—ऊपर के दृष्टान्त मे ४८ समय की स्थिति मे ६ गुणहानि थी, तो ४८ मे ६ का भाग देने से प्रत्येक गुणहानि का परिमाण ८ आया। यही गुणहानि आयाम कहलाता है।

(२५) नाना गुणहानि किसको कहते हैं ?

गुण हानि के समूह को नाना गुणहानि कहते है। जैसे—ऊपर के दृष्टान्त मे आठ-आठ समय की छ गुणहानि है, सो ही छः सख्या नाना गुणहानि का परिमाण जानना।

(२६) अन्योन्याभ्यस्त राशि किसको कहते हैं ?

नाना गुणहानि प्रमाण दूअे माण्डकर परस्पर गुणाकार करनें से जो गुणनफल हो उसको अन्योन्याभ्यस्त राशि कहते है। जैसे—ऊपर के दृष्टान्त मे ६ दूअे माण्डकर परस्पर गुणा करने से ६४ होते है, सो ही अन्योन्याभ्यस्त राशि का परिमाण जानना।

(२७) अन्तिम गुण हानि का परिमाण किस प्रकार से निकलना ?

एक घाट अन्योन्याभ्यस्त राशि का भाग समय प्रबद्ध को देनें

से अन्तिम गुण हानि के द्रव्य का परिमाण निकलता है। जैसे (ऊपर के दृष्टान्त मे) ६०० मे एक घाट ६४ (६३) का भाग देने से १०० पाये, सो अन्तिम गुण हानि का द्रव्य है।

(२८) अन्य गुण हानियों का परिमाण किस प्रकार निकालना चाहिये ?

अन्तिम गुण हानि के द्रव्य को प्रथम गुण हानि पर्यन्त दूना दूना (गुणा का प्रमाण) करने से अन्य गुण हानियो का परिमाण निकलता है। जैसे- ऊपर के दृष्टान्त मे १०० को दूना दूना करने से २००, ४००, ८००, १६००, ३२०० आते है।

(२९) प्रत्येक गुणहानि मे प्रथमादि समयो मे द्रव्य का परिमाण किस प्रकार होता है ?

निषेकहार को चय से गुणा करने से प्रत्येक गुण हानि के प्रथम समय का द्रव्य निकलता है, और प्रथम समय के द्रव्य मे से एक एक चय घटाने से उत्तरोत्तर समयो के द्रव्य का परिमाण निकलता है। जैसे—निषेकहार १६ (गुण हानि आयाम×२) को चय ३२ से गुणा करने पर प्रथम गुण हानि के प्रथम समय का द्रव्य ५१२ होता है, और ५१२ मे एक एक चय अर्थात ३२ ३२ घटाने से दूसरे समय के द्रव्य का परिमाण ४८०, तीसरे का ४४८, चौथे का ४१६, पाचवे का ३८४, छटे का ३५२, सातवे का ३२०, और आठवे का २८८ निकलता है। इसी प्रकार द्वितीयादि गुणहानियो मे भी प्रथमादि समयो के द्रव्य का परिमाण निकाल लेना।

(३०) निषेकहार किसको कहते है ?

गुण हानि आयाम से दूने परिमाण को निषेकहार कहते है। जैसे (उपरोक्त दृष्टान्त मे) गुण हानि आयाम ८ से दूने १६ को निषेकहार कहते हैं।

(३१) चय किसे कहते हैं ?

श्रेढी व्यवहार गणित में समान वृद्धि के परिमाण को चय कहते है।

(३२) इस प्रकरण मे चय निकालने की क्या रीति है ?

निषेकहार मे एक अधिक गुणहानि आयाम का प्रमाण जोडकर आधा करने से जो लब्ध आवे, उसको गुणहानि आयाम से गुणा करे। इस प्रकार करने से जो गुणनफल हो उसका भाग विवक्षित गुण हानि के द्रव्य मे देने से विवक्षित गुणहानि के चय का परिमाण निकलता है

$$\left\{ \frac{\text{विवक्षित गुण हानि का द्रव्य}}{\frac{1}{2}(\text{निषेकहार} + \text{गुणहानि आयाम} + 1)\ \text{गुणहानि—आयाम}} \right\}$$

जैसे (ऊपर के दृष्टान्त मे) निषेकहार १६ मे एक अधिक गुण-हानि आयाम ९ जोडने से २५ हुए। २५ के आधे १२½ को गुणहानि आयाम ८ से गुणाकार करने से १०० होते है। इस १०० का भाग विवक्षित प्रथम गुणहानि के द्रव्य ३२०० मे देने से प्रथम गुणहानि सम्बन्धी चय ३२ आया। इस ही प्रकार द्वितीय गुणहानि के चय का परिमाण १६, तृतीय का ८, चतुर्थ का ४, पचम का २ और अन्तिम का १ जानना।

(३३) अनुभाग की रचना का क्रम क्या है ?

द्रव्य की अपेक्षा से जो रचना ऊपर बताई गई है उसमे प्रत्येक गुणहानि के प्रथमादि समय सम्बन्धी द्रव्य को वर्गणा कहते है। और उन वर्गणाओ मे जो परमाणु है, उनको वर्ग कहते है। प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा मे ५१२ वर्ग हैं, उनमे अनुभाग शक्ति के अविभाग प्रतिच्छेद समान हैं, और वे द्वितीयादि वर्गणाओ के वर्गों के अविभाग प्रतिच्छेदो की अपेक्षा सबसे न्यून अर्थात जघन्य है। द्वितीयादि वर्गणा के वर्गों मे एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद की अधिकता के क्रम से जिस वर्गणा पर्यन्त एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद बढे, वहा तक की वर्गणाओ के समूह का नाम एक स्पर्द्धक है। और जिस वर्गणा के वर्गों मे युगपत् अनेक अविभाग प्रतिच्छेदो की वृद्धि होकर प्रथम वर्गणा के वर्गों के अविभाग प्रतिच्छेदो की सख्या मे दूनी हो

जाये, वहाँ से दूसरे स्पर्धक का प्रारम्भ समझना। इस ही प्रकार जिन-जिन वर्गणाओं के वर्गों में प्रथम वर्गणा के वर्गों के अविभाग प्रतिच्छेदो की सख्या से तिगुने चौगुने आदि अविभाग प्रतिच्छेद होय, वहा से तीसरे चौथे आदि स्पर्द्धकों का प्रारम्भ समझना। इस प्रकार एक गुणहानि मे अनेक स्पर्द्धक होते है।

३/३ बन्धकारण अधिक

(१) आस्रव किसको कहते हैं ?

वन्ध के कारण को आस्रव कहते है।

२ आस्रव के कितने भेद हैं ?

दो है—भावास्रव और द्रव्यास्रव ।

(३) भावास्रव किसको कहते हैं ?

द्रव्यवन्ध के निमित्तकारण अथवा भाववन्ध के उपादान कारण को भावास्रव कहते है। नोट —(जीव के मन वचन कायकी चेष्टा को भावास्रव कहते है, क्योकि उनके कारण से द्रव्यास्रव होता है)।

(४) द्रव्यास्रव किसको कहते है ?

द्रव्यवन्ध के उपादानकारण अथवा भाववन्ध के निमित्त कारण को द्रव्यास्रव कहते है (नोट —भावास्रव के निमित्त से नवीन नवीन कर्माण वर्गणाओ का जीव के प्रदेशो मे प्रवेश पाना द्रव्यास्रव है।

५ वन्ध किसको कहते है ?

दो द्रव्यो के सश्लेप सम्वन्ध को वन्ध कहते है।

६ संश्लेषण सम्बन्ध की क्या विशेपता है ?

सयोग सम्वन्ध मे जिस प्रकार दो द्रव्य अपने पृथक-पृथक स्वरूप मे स्थित रहते हैं, उस प्रकार सश्लेप सम्वन्ध मे नहीं रहते। वहा दोनो मिलकर अपना-अपना असल रूप खो देते हैं

और एक तीसरा विजातीय रूप धारण कर लेते है, जो दोनो मे से किसी का भी नही कहा जा सकता। उनका मिश्रित स्वभाव विल्कुल विचित्र हो जाता है जैसे हाइड्रोजन और आक्सीजन दो वायु जातीय गैसो के मिलने पर एक तीसरा जलीय द्रव्य वन जाता है, जिसका स्वभाव अग्नि वर्धन की वजाय अब अग्नि शमन हो जाता है।

७ वन्ध कितने प्रकार का है ?

दो प्रकार का—भाववन्ध और द्रव्य वन्ध।

(८) भाव वन्ध किसको कहते हैं ?

आत्मा के कषाय योग रूप भावो को भाव वन्ध कहते है। (नोट :— योग यद्यपि द्रव्यात्मक है, परन्तु जीव पुद्गल वन्ध के इस प्रकरण जीवात्मक होने से भाववन्ध कहा गया है क्योकि जीव भावात्मक द्रव्य माना गया है और पुद्गल द्रव्यात्मक)।

(९) द्रव्य वन्ध किसको कहते हैं ?

कार्माण स्कन्ध रूप पुद्गल द्रव्य में आत्मा के साथ सम्वन्ध होने की शक्ति को द्रव्य वन्ध कहते हैं।

(१०) भाव वन्ध का निमित्त कारण क्या है ?

उदय तथा उदरिणा अवस्थाको प्राप्त पूर्व वद्ध कर्म भाववन्ध का निमित्त कारण है।

(११) भाव वन्ध का उपादान कारण क्या है ?

भाव वन्ध के विवक्षित समय से अनन्तर पूर्व क्षणवर्ती योग कषाय रूप आत्मा की पर्याय विशेष को भाव वन्ध का उपादान कारण कहते हैं।

(१२) द्रव्य वन्ध का निमित्त कारण क्या ?

आत्माके योग कषाय रूप परिणाम द्रव्य वन्ध के निमित्त कारण है।

(१३) द्रव्य वन्ध का उपादान कारण क्या ?

वन्ध होने के पूर्व क्षण में वन्ध होने के सन्मुख कार्माण स्कन्ध

अभिसन्निवेष (अभिप्राय) को एकान्तिक मिथ्यात्व कहते है। जैसे वौद्ध मतावलम्बी पदार्थ को सर्वथा क्षणिक मानते है।

(२०) विपरीत मिथ्यात्व किसको कहते हैं ?

'सग्रन्थ' निर्ग्रन्थ है, 'केवली' मासाहारी है, इत्यादि रुचि को विपरीत मिथ्यात्व कहते है।

(२१) अज्ञानिक मिथ्यात्व किसको कहते हैं ?

जहा हिताहित विवेक का कुछ भी सद्भाव नही हो, उसको अज्ञानिक मिथ्यात्व कहते है।

(२२) वैनयिक मिथ्यात्व किसको कहते है ?

समस्त देव तथा समस्त मतो मे समदर्शीपने को वैनयिक मिथ्यात्व कहते है।

(२३) अविरति किसको कहते हैं ?

हिंसादि पापो मे तथा इन्द्रिय और मनके विषयो में प्रवृत्ति होने को अविरति कहते है।

(२४) अविरति के कितने भेद है ?

तीन है—अनन्तानुबन्धी कषायोदय जनित, अप्रत्याख्यानावरण कषायोदय जनित और प्रत्याख्यानावरण कषायोदय जनित।

(२५) प्रमाद किसको कहते है ?

सज्वलन और नोकपाय के तीव्र उदय से निरतिचार चारित्र पालने मे अनुत्साह को तथा स्वरूप की असावधानता को प्रमाद कहते है।

(२६) प्रमाद के कितने भेद हैं ?

पद्रह भेद है—विकथा ४ (स्त्री कथा, राष्ट्र कथा, भोजन कथा, राज कथा), कषाय ४ (सज्वलन के तीव्रोदय जनित क्रोध मान माया लोभ), इन्द्रियो के विषय ५ (स्पर्श, रस, गन्ध, रूप, शब्द), निद्रा १, स्नेह १।

(२७) कषाय किसको कहते हैं ?

(यहा बन्ध के प्रकरण मे) सज्वलन और नोकपाय के मन्द

उदय से प्रादुर्भूत आत्मा के परिणाम विशेषको कषाय कहते है।

(२८) **योग किसको कहते हैं ?**

मनोवर्गणा अथवा कायवर्गणा (आहारक वर्गणा, कार्माण वर्गणा व तैजस वर्गणा) और वचन वर्गणा के अवलम्बन से कर्म नोकर्मको ग्रहण करने की शक्ति विशेषको योग कहते है।

(२९) **योग के कितने भेद है ?**

पन्द्रह भेद है—मनोयोग ४ (सत्य, असत्य, उभय, अनुभय), काय योग ७ (औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रियक, वैक्रियक मिश्र, आहारक, आहारक मिश्र, तथा कार्माण), वचन योग ४ (सत्य, असत्य, उभय, अनुभय)।

३० **तैजस योग क्यो न कहा ?**

तैजस शरीर कान्ति मात्र के लिये है परिस्पन्द के लिये नही।

(३१) **मिथ्यात्व की प्रधानता से किन किन प्रकृतियो का बन्ध होता है ?**

सोलह प्रकृतियो का बन्ध होता है—मिथ्यात्व, हुडक सस्थान, नपुंसक वेद, नरक गति, नरक गत्यानुपूर्वी, नरकायु, असप्राप्त सृपाटिका सहनन, जाति ४ (एकेन्द्रियादि), स्थावर, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्ति, साधारण।

(३२) **अनन्तानुबन्ध की कषायोदय जनित अविरति से किन किन प्रकृतियो का बन्ध होता है ?**

पच्चीस प्रकृतियो का बन्ध होता है—अनन्तानुवन्धी क्रोध मान माया लोभ, स्त्यानगृद्धि, निद्रा निद्रा, प्रचला प्रचला, दुःस्वर, दुर्भग, अनादेय, अप्रशस्त विहायोगति, स्त्रीवेद, नीच गोत्र, तिर्यग्गति, तिर्यग्गत्यानुपूर्वी, तिर्यगायु, उद्योत, सस्थान ४ (न्यग्रोध परिमण्डल, स्वाति, कुब्जक, वामन), सहनन ४ (वज्रनाराच, नाराच, अर्ध नाराच, कीलित)।

(३३) अप्रत्याख्यानावरण कषायोदय जनित अविरति से किन किन प्रकृतियो का बन्ध होता है ?

दश प्रकृतियो का—अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, मनुष्यायु, औदारिक शरीर, औदारिक अगोपांग, वज्रर्षभनाराच सहनन ।

(३४) प्रत्याख्यानावरण कषायोदय जनित अविरति से किन किन प्रकृतियों का बन्ध होता है ?

चार प्रकृतियो का—प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ ।

(३५) प्रमाद से कितनी प्रकृतियों का बन्ध होता है ?

छः का—अस्थिर, अशुभ, असाता, अयश कीर्ति, अरति, शोक ।

(३६) कषाय (संज्वलन) के उदय से कितनी प्रकृतियों का बन्ध होता है ?

अट्ठावन का—देवायु, निद्रा, प्रचला, तीर्थंकर, निर्माण, प्रशस्त विहायोगति, पचेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्माण शरीर, आहारक शरीर, आहारक अंगोपाग, समचतुरस्र सस्थान, वैक्रियक शरीर, वैक्रियक अगोपाग, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, त्रस, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, सुभग, शुभ, सुस्वर, आदेय, हास्य, रति, जुगुप्सा, भय, पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध मान माया लोभ, पांचो ज्ञानावरण, चारो दर्शनावरण, पाचो अन्तराय, यशस्कीर्ति, उच्च गोत्र इन ५८ प्रकृतियो का बन्ध करता है ।

(३७) योग के निमित्त से किस प्रकृतिका बन्ध होता है ?

एक साता वेदनीय का वन्ध होता है।

(३८) कर्म प्रकृति सब १४८ हैं और कारण केवल १२० के लिखे सो २८ प्रकृतियो का क्या हुआ ?

स्पर्शादि २० की जगह चार का ही ग्रहण किया गया है । इस

कारण १६ तो ये घटी, और पाचो शरीर के पाचो बन्धन तथा पॉचो सघात का ग्रहण नही किया गया, इस कारण १० ये घटी और सम्यग्मिथ्यात्व तथा सम्यक्प्रकृति मिथ्यात्व इन दो प्रकृतियो का बन्ध नही होता है। क्योकि सम्यग्दृष्टि जीव पूर्वबद्ध मिथ्यात्व प्रकृति के तीन खण्ड करता है, तब इन दो प्रकृतियों का प्रादुर्भाव होता है, इस कारण दो प्रकृतिया ये घटी।

३९. स्पर्शादि शेष १६ का तथा बन्धन संघात का ग्रहण क्यो न किया ?

स्पर्शादि की बीसो विशेष प्रकृतिये सामान्य स्पर्शादि चार मे गर्भित समझना। बन्धन सघात को अपने अपने शरीर के साथ गर्भित समझना।

(४०) द्रव्यास्रव के कितने भेद हैं ?

दो है—एक साम्परायिक दूसरा ईर्यापथ।

(४१) साम्परायिक आस्रव किसको कहते है ?

जो कर्म परमाणु जीव के कषाय भावो के निमित्त से आत्मा मे कुछ काल के लिये स्थिति को प्राप्त हो, उनके आस्रव को साम्परायिक आस्रव कहते हैं।

(४२) ईर्यापथ आस्रव किसको कहते हैं ?

जिन कर्म परमाणुओ का बन्ध उदय और निर्जरा एक ही समय मे हो, उनके आस्रव को ईर्यापथ आस्रव कहते है।

(४३) इन दोनो प्रकार के आस्रवों के स्वामी कौन हैं ?

साम्परायिक आस्रव का स्वामी कषाय सहित और ईर्यापथ का स्वामी कषाय रहित आत्मा होता है।

(४४) पुण्यास्रव व पापास्रव का कारण क्या है ?

शुभ योग से पुण्यास्रव और अशुभ योग से पापास्रव होता है।

(४५) शुभ योग और अशुभ योग किसको कहते है ?

शुभ परिणाम से उत्पन्न योग को शुभ योग और अशुभ परिणाम

से उत्पन्न योग को अशुभ योग कहते है।

(४६) जिस समय जीव के शुभ योग होता है उस समय पाप प्रकृतियों का आस्रव होता है या नही ?

होता है।

(४७) यदि होता है तो शुभ योग पापास्रव का भी कारण ठहरा ?

नही ठहरा। क्योकि जिस समय जीव मे शुभ योग होता है, उस समय पुण्य प्रकृतियो में स्थिति अनुभाग अधिक पडता है, और पाप प्रकृतियो मे कम पडता है। और इस ही प्रकार जब अशुभ योग होता है तब पाप प्रकृतियों मे स्थिति अनुभाग अधिक पडता है और पुण्य प्रकृतियो मे कम। दशाध्याय तत्वार्थ सूत्र के छटे अध्याय मे ज्ञानावरणादि प्रकृतियो के आस्रव के कारण जो प्रदोष निन्हवादिक कहे गए है, उनका अभिप्राय है कि उन उन भावों से उन उन प्रकृतियो मे स्थिति अनुभाग अधिक अधिक पडते है। अन्य जो ज्ञानावरणादिक पाप प्रकृतियों का आस्रव दशवे गुणस्थान तक सिद्धान्त शास्त्र मे कहा है उससे विरोध आवेगा अथवा वहां शुभ योग के अभाव का प्रसंग आवेगा। क्योकि शुभ योग दशवे गुणस्थान से पहले पहले ही होता है।

प्रश्नावली

१. लक्षण करो—प्रकृति आदि बन्ध, सम्यक्प्रकृति, जीव पुद्गल क्षेत्र व भवविपाकी प्रकृति, स्पर्धं, अविभागप्रतिच्छेद, उत्कर्षण, क्षयोपशम।

२ भेद करो—बन्ध, मोहनीय कर्म, संहनन, सर्वघाती प्रकृति, क्षेत्र विपाकी प्रकृति, आस्रव।

३. अन्तर दर्शाओ—शरीर-निर्माण, आयु-गति, सुभग-आदेय, उदय-उदीरणा, अन्तरकरण व सदवस्था रूप उपशम, क्षय-उदयाभावी क्षय, प्रत्येक-साधारण।

४ पर्याप्ति अपर्याप्ति के लक्षण व भेद करो। भाषा पर्याप्ति पूर्ण कर लेने पर जीव पर्याप्त होता है या अपर्याप्त ?

५ आठो कर्मो की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति वताओ।

६. बन्ध के कारणो का तथा उनके भेद प्रभेदो का चार्ट बनाओ।

७. अनन्तानुबन्धी आदि के उदय मे किन किन प्रकृतियो का बन्ध होता है।

चतुर्थ अध्याय

(भाव व मार्गणा)

४/१ भावाधिकार

---

(१) जीव के असाधारण भाव कितने हैं ?

पाच है —औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक और पारिणामिक ।

(२) औपशमिक भाव किसको कहते है ?

जो किसी कर्म के उपशम से हो उसको औपशमिक भाव कहते है ।

३ जीव का औपशमिक भाव कैसा होता है ?

कादो (कीचड) के नीचे बैठ जानेपर जिस प्रकार ऊपर का निथरा हुआ जल उस समय तक बिल्कुल निर्मल व शुद्ध रहता है जब तक हिलने आदि के कारण कादो पुन उठ न जाये; उसी प्रकार कर्मों का उपशम हो जाने पर जीव के भाव उस समय तक बिल्कुल निर्मल व शुद्ध रहते है, जव तक कि उपशम का काल समाप्त हो जाने से कर्म पुन उदय मे न आ जाये ।

(४) क्षायिक भाव किसको कहते है ?

जो किसी कर्म के क्षय से उत्पन्न हो उसको क्षायिक भाव कहते है ।

५ जीव का क्षायिक भाव कैसा होता है ?

कादो के सर्वथा दूर हो जाने पर जिस प्रकार जल बिल्कुल निर्मल व शुद्ध हो जाता है, और कादो की सत्ता नि शेष हो जाने से पुन. उसके मैले होने की सम्भावना नही रहती; उसी प्रकार कर्म के क्षय हो जाने पर जीव के भाव विल्कुल निर्मल व

शुद्ध हो जाते है, और कर्म की सत्ता नि शेप हो जाने से पुनः उनके उदय से उनका अशुद्ध होना सम्भव नही रहता।

(६) क्षायोपशमिक भाव किसको कहते है?

जो कर्मो के क्षयोपशम से हो उसको क्षायोपशमिक भाव कहते है।

७ जीव का क्षायोपशमिक भाव कैसा होता है?

थोडी कादो नीचे बैठ जानेपर और थोडी अभी जल मे मिली रहने पर, जिस प्रकार पानी कुछ कुछ मैला रहते हुए भी पीने के काम आ सकता है, उसीप्रकार कर्म का क्षयोपशम होने पर सर्वघाती तो बिल्कुल बैठ जाता है, परन्तु देश–घाती का उदय रहता है, जिसके कारण जीव के भाव कुछ कुछ मैले रहते हुए भी उसे सम्यक्त्वादी गुण प्रगट रहते है। केवल परिणामो मे कुछ चल मल आदि दोष लगते रहते हैं।

(८) औदयिक भाव किसको कहते हैं?

जो कर्मों के उदय से हो उन्हे औदयिक भाव कहते है।

९ जीव का औदयिक भाव कैसा होता है?

जिसप्रकार कादो मिला हुआ जल विल्कुल अशुद्ध होता है, अथवा आकाश पर वादल आने से सूर्य छिप जाता है, उसी प्रकार कर्म के उदय होने पर जीव के सम्यक्त्व व चारित्र बिल्कुल अशुद्ध व विकृत हो जाते है और ज्ञानादि गुण ढक जाते है।

१०. क्षायोपशमिक भाव को भी देशघाती के उदय होने से औदयिक कहना चाहिये?

ठीक है। वहाँ आशिक रूप से दो भावो का मिश्रण रहता है, कुछ अश खुला रहता है और कुछ अश ढका। खुले अश की अपेक्षा उसे क्षायोपशमिक और ढके अश की अपेक्षा वेढक कहते है, क्योकि देशघाती की शक्ति का वेदन या अनुभव रहता है।

(११) पारिणामिक भाव किसको कहते है?

जो उपशम, क्षय, क्षयोपशम व उदय की अपेक्षा न रखता हुआ,

जीव का स्वभाव मात्र हो, उसको पारिणामिक भाव कहते है। (जैसे स्वर्णत्व न खोटा होता न खरा वह तो स्वर्ण स्वभाव है जो खोटे मे भी वैसा ही और खरे मे भी वैसा है)

१२ जीव का पारिणामिक भाव कैसा होता है ?

जिस प्रकार कादो मिले जल मे भी विचार करने पर जल वैसा ही जानने मे आता है जैसा कि शुद्ध, कादो का भाग उससे पृथक प्रतीत होता है, उसी प्रकार कर्माच्छादित जीव मे भी विचार करने पर चैतन्य वैसा ही जान मे आता है जैसा कि सिद्ध भगवान मे, कर्म का भाग उससे पृथक प्रतीत होता है। त्रिकाली यह शुद्ध भाव ही पारिणामिक है।

(१३) औपशमिक भाव के कितने भेद हैं ?

दो है—एक सम्यक्त्व भाव, दूसरा चारित्र भाव।

(१४) क्षायिक भाव के कितने भेद है ?

नौ है—क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र, क्षायिक दर्शन, क्षायिक ज्ञान, क्षायिक दान, क्षायिक लाभ, क्षा० भोग, क्षा० उपभोग, क्षा० वीर्य।

(१५) ज्ञायोपशमिक भाव के कितने भेद है ?

अठारह है–सम्यक्त्व, चारित्र, चक्षु दर्शन, अचक्षु दर्शन, अवधि दर्शन, देश सयम, मतिज्ञान, श्रुत ज्ञान, अवधि ज्ञान, मन.-पयय ज्ञान कुमति ज्ञान, कुश्रुत ज्ञान, विभग ज्ञान, दान, लाभ, भोग, उपभोग वीर्य।

(१६) औदयिक भाव कितने है ?

इक्कीस है—गति ४, कषाय ४, लिंग ३, मिथ्यादर्शन १, अज्ञान (मिथ्या ज्ञान या ज्ञानाभाव) १, असयम १, असिद्धत्व १, लेश्या ६ (पीत, पद्म, शुक्ल, कृष्ण, नील, कापोत)।

(१७) पारिणामिक भाव कितने है ?

तीन है—जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व।

१८ पारिणामिक भाव इतने ही है या और भी ?

जीव द्रव्य की अपेक्षा तो इतने ही है, क्योकि जीवत्व या चेतनत्व तो सामान्य भाव है और भव्यत्व और अभव्यत्व इसके विशेष। बाकी गुणो की अपेक्षा प्रत्येक गुण का स्वभाव उस उस का परिणामी भाव कहा जा सकता है, जैसे ज्ञान का ज्ञानत्व।

४/२ मार्गणाधिकार

१ जीव विषय मे कितनी प्ररूपणायें होती हैं ?

बीस होती हैं—गुण स्थान, जीव समास, प्राण, सज्ञा, उपयोग, चौदह मार्गणाये।

२ गुणस्थान, जीवसमास, प्राण व उपयोग क्या ?

(क) गुणस्थान की प्ररूपणा के लिये आगे पृथक अध्याय है।

(ख) जीव समास के लिये देखो आगे अधिकार न० ३।

(ग) प्राण पहले अध्याय २ अधिकार ४ मे कह दिये गये।

(घ) उपयोग सामान्य तो पहले अध्याय २ अधिकार ४ मे कहा गया और विशेष रूप से पुन इन्द्रिय मार्गणा मे कहा जायेगा।

(३) संज्ञा किसको कहते हैं ?

अभिलाषा को सज्ञा कहते हैं।

(४) संज्ञा के कितने भेद हैं ?

चार हैं—आहार, भय, मैथुन, परिग्रह।

(५) मार्गणा किसको कहते हैं ?

जिन जिन धर्म विशेषो से जीव का अन्वेषण किया जाये उन उन धर्म विशेषो को मार्गणा कहते हैं।

(६) मार्गणा के कितने भेद हैं ?

चौदह है—गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, सयम, दर्शन, लेश्या, भव्यत्व, सम्यक्त्व, सज्ञित्व, आहारकत्व।

(७) गति किसको कहते हैं ?

गतिनामा नामकर्म के उदय से जीव की पर्याय विशेष को गति कहते है।

(८) गति के कितने भेद है ?
चार है—नरकगति, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, देवगति ।

(९) इन्द्रिय किसको कहते है ?
आत्मा के लिग को इन्द्रिय कहते है ।

(१०) इन्द्रिय के कितने भेद हैं ?
दो है--द्रव्येन्द्रिय और भावेन्द्रिय ।

(११) द्रव्येन्द्रिय किसको कहते है ?
निर्वृत्ति व उपकरण को द्रव्येन्द्रिय कहते है ।

(१२) निर्वृत्ति किसको कहते है ?
प्रदेशो की रचना विशेष को निर्वृत्ति कहते है ।

(१३) निर्वृत्ति के कितने भेद है ?
दो है—बाह्य और आभ्यन्तर ।

(१४) बाह्य निर्वृत्ति किसको कहते हैं ?
इन्द्रियो के आकार रूप पुद्गल की रचना विशेष को बाह्य निर्वृत्ति कहते है ।

(१५) आभ्यन्तर निर्वृत्ति किसको कहते है ?
आत्मा के विशुद्ध प्रदेशो की इन्द्रियाकार रचना विशेष को आभ्यन्तर निर्वृत्ति कहते है ।

(१६) उपकरण किसको कहते है ?
जो निर्वृत्ति का उपकार करे उसको उपकरण कहते है ।

(१७) उपकरण के कितने भेद है ?
दो भेद है—बाह्य व आभ्यन्तर ।

(१८) आभ्यन्तर उपकरण किस को कहते है ?
नेत्रेन्द्रिय मे कृष्ण शुक्ल मण्डल की तरह सब इन्द्रियो मे जो निर्वृत्ति का उपकार करे उसको आभ्यन्तर निर्वृत्ति कहते है ।

(१९) बाह्योपकरण किसको कहते है ?
नेत्रेन्द्रिय मे पलक वगैरह की तरह जो निर्वृत्ति का उपकार करे उसको बाह्योपकरण कहते है ।

(२०) भावेन्द्रिय किसको कहते है ?

लब्धि व उपयोग को भावेन्द्रिय कहते हैं।

(२१) लब्धि किसको कहते हैं ?

ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम को लब्धि कहते है।

(२२) उपयोग किसको कहते हैं ?

क्षयोपशम के हेतु से चेतना के परिणाम विशेष को उपयोग कहते है।

२३ पहिले उपयोग का लक्षण कुछ और किया है ?

ठीक है। वहा उपयोग-सामान्य का प्रकरण होने से उस का लक्षण चैतन्यानुविधायी परिणाम किया है, क्योकि ज्ञान, दर्शन सम्यक्त्व, चारित्रादि सभी मे वह अनुस्यूत है। यहा इन्द्रिय का प्रकरण होने से उसका विशेष लक्षणकिया है जो केवल इन्द्रिय ज्ञान मे ही पाया जाता है अन्य मे नही।

२४ लब्धि व उपयोग मे क्या अन्तर है ?

लब्धि शक्ति सामान्य का नाम हैऔर उपयोग उसकी विशेष पर्याय का। कर्म के क्षयोपशम से जानने की जितनी शक्ति जीव को प्राप्त होती है उसे लब्धि कहते हैं। उस लब्धिका जितना भाग किसी ज्ञेय को जानने के लिये इन्द्रिय के प्रति उपयुक्त होता है उसे उपयोग कहते हैं।

(२५) इन्द्रियो के कितने भेद है ?

पाच है—स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, करण।

(२६) स्पर्शनेन्द्रिय किसको कहते हैं ?

जिसके द्वारा आठ प्रकार के स्पश का ज्ञान हो उसको स्पर्शनेन्द्रिय कहते हैं।

(२७) रसनेन्द्रिय किसको कहते हैं ?

जिसके द्वारा पाँच प्रकार के रस का ज्ञान हो उसको रसनेन्द्रिय कहते है।

(२८) घ्राणेन्द्रिय किसको कहते हैं ?

जिसके द्वारा दो प्रकार की गन्ध का ज्ञान हो उसको घ्राणेन्द्रिय कहते है।

(२९) चक्षु इन्द्रिय किसको कहते है ?

जिसके द्वारा पाच प्रकार के वर्ण का (तथा वस्तुओ के आकारो का) ज्ञान हो उसको चक्षु इन्द्रिय कहते है।

(३०) श्रोत्रेन्द्रिय किसको कहते है ?

जिस के द्वारा सप्त प्रकार के स्वरो का ज्ञान हो उसको श्रोत्रेन्द्रिय कहते हैं।

(३१) किन-किन जीवो को कौन सी इन्द्रियां होती है ?

पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति इन जीवो के केवल एक (स्पशन) इन्द्रिय होती है। कृमि आदि जीवो के स्पर्शन और रसना दो इन्द्रिय होती है। चींटी वगैरह जीवो के स्पर्शन, रसना, घ्राण ये तीन इन्द्रिया होती हैं। भ्रमर, मक्षिका आदि जीवो के श्रोत्र के बिना चार इन्द्रिया होती है। घोडे आदि पशु, (पक्षी, मछली आदि तथा) मनुष्य, देव, और नारकी जीवो के पाचो इन्द्रिया होती है। (मन सहित व रहित का विवरण आगे सज्ञित्व मार्गणा मे देखो)।

(३२) काय किसको कहते है ?

त्रस स्थावर नाम कर्म के उदय से आत्मा के प्रदेश प्रचय को काय कहते है।

३३ जीव समास किसको कहते है ?

काय की अपेक्षा किये गए जीवो के भेदो को जीव समास कहते हैं।

(३४) त्रस किसको कहते है ?

त्रस नाम कर्म के उदय से द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय तथा पचेन्द्रियो मे जन्म लेने वाले जीवो को त्रस कहते है (क्योकि त्रास या भय आने पर ये स्वय अपनी रक्षा के लिये इधर उधर भाग सकते है।)

(३५) स्थावर किसको कहते है ?

स्थावर नामकर्म के उदय से पृथ्वी, अप्, तेज, वायु व वन-

स्पति मे जन्म लेने वाले जीवो को स्थावर कहते हैं, क्योकि भय के कारण आने पर भी अपने स्थान पर स्थित ही रहते हैं।

(३६) बादर किसको कहते हैं ?

पृथ्वी आदिक से जो रुक जाय, या दूसरो को रोके, उसको बादर कहते है।

(३७) सूक्ष्म किसको कहते हैं ?

जो पृथ्वी आदिक से स्वय न रुके और न दूसरे पदार्थों को रोके, उसे सूक्ष्म कहते हैं।

३८ त्रसों के बादर सूक्ष्म भेद न कहे ?

क्योकि ये बादर ही होते है सूक्ष्म नही।

(३९) बनस्पति के कितने भेद है ?

दो भेद है—प्रत्येक और साधारण

(४०) प्रत्येक वनस्पति किसको कहते है ?

एक शरीर का जो एक ही स्वामी हो, उसको प्रत्येक वनस्पति कहते है।

(४१) साधारण वनस्पति किसको कहते है ?

जिन जीवो के आयु, श्वासोच्छ्वास, आहार और काय ये साधारण हो (समान अथवा एक हो) उनको साधारण कहते है, जैसे कन्दमूलादिक।

(४२) प्रत्येक वनस्पति के कितने भेद है ?

दो है—सप्रतिष्ठित प्रत्येक व अप्रतिष्ठित प्रत्येक।

४३ प्रत्येक व साधारण मे सूक्ष्म बादर भेद करो।

साधारण दोनो प्रकार के होते हैं, और दोनो प्रकार के प्रत्येक केवल बादर ही।

(४४) सप्रतिष्ठित प्रत्येक किसको कहते है ?

जिस प्रत्येक वनस्पति के आश्रय अनेक साधारण वनस्पति शरीर हो, उसको सप्रतिष्ठित प्रत्येक कहते है।

(४५) अप्रतिष्ठित प्रत्येक किसको कहते हैं ?

जिस प्रत्येक वनस्पति के आश्रय कोई साधारण वनस्पति न

हो उसको अप्रतिष्ठित प्रत्येक कहते है।

४६ वनस्पति में साधारण काय जीव होते है या अन्यत्र भी ?

वनस्पति से अतिरिक्त अन्य सर्व स्थावर व त्रस जीव प्रत्येक ही होते है साधारण नही।

४७ साधारण वनस्पति के सूक्ष्म व बादर भेद कौन से हैं ?

सूक्ष्म साधारण जीव इस लोक मे सर्वत्र ठसाठस भरे हुए है। सूक्ष्म होने से व्यवहार गम्य नही, फिर भी वनस्पति काय के माने गए है। बादर साधारण जीव सप्रतिष्ठित प्रत्येक शरीरो के आश्रित ही रहते है, स्वतत्र नही।

(४८) साधारण वनस्पति सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति में ही होते है या और भी कही होते हैं ?

पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, केवली भगवान, आहारक शरीर (तीर्थंकरो का परम औदारिक शरीर), देव, नारकी इन आठ के सिवाय सब ससारी (त्रस व स्थावर) जीवो के शरीर साधारण अर्थात निगोद के आश्रय है (सप्रतिष्ठित प्रत्येक है)।

४९. निगोद किसे कहते है ?

साधारण जीवो के शरीर को निगोद कहते है, क्योकि वह अनन्तो जीवो का एक सा फला शरीर होता है, जिसमे प्रत्येक जीव सर्वत्र व्यापकर रहता है। वे सभी जीव इस शरीर मे एक साथ जन्मते है, एक साथ श्वास लेते है और एक साथ ही मरते है।

(५०) साधारण वनस्पति (निगोद) के कितने भेद है ?

दो भेद है—एक नित्य निगोद और दूसरा इतर निगोद।

(५१) नित्य निगोद किसको कहते है ?

जिसने कभी भी (आज तक) निगोद के सिवाय दूसरी पर्याय नही पाई अथवा जिसने कभी भी निगोद के सिवाय दूसरी पर्याय न तो पाई और न पावेगा उसको नित्य निगोद कहते है।

(५२) इतर निगोद किसको कहते हैं ?

जो निगोद से निकलकर दूसरी पर्याय पाकर पुन निगोद मे चला गया वह जीव इतर निगोद कहलाता है।

५३ निगोद मे कितने जीव बसते है ?

प्रधानता से देखा जाय तो ससार के जीवो की अखिल राशि निगोद मे ही बसती है। इसका कारण यह है कि लोक मे अनन्तो निगोद शरीर है। तहा एक-एक शरीर मे समस्त व्यवराशिगत त्रस व स्थावर जीवो से अनन्त गुणे जीव निवास करते है।

५४ वनस्पति कितने प्रकार की है ?

१ स्कन्ध सें उगने वाली जैसे आलू अदरख।

२ टहनी से उगने वाली जैसे गुलाब व आकाश वेल।

३ पत्ते से उगने वाली जैसे पत्थर चट।

४. पोरी से उगने वाली जैसे गन्ना।

५ वीज से उगने वाली जैसे गेहूँ आदि।

६ स्वय उगने वाली—जैसे खूमी, साप की छतरी, काई आदि।

५५ इन सर्व वनस्पतियों मे से सप्रतिष्ठित कौनसी है ?

(क) अत्यन्त कच्चिया हालत मे सभी वनस्पति सप्रतिष्ठित होती हैं, अर्थात जव तक वनस्पति मे नसे, धारी, फाड, वीज, गुठली, जाली, रेशा आदि नही पड जाते तव तक वह सप्रतिष्ठित रहती है। जैसे—कोपल, अत्यन्त छोटी अम्मी, उगली जितनी वडी ककडी, तोरी, घिया आदि। ऐसी वनस्पति पक जाने पर अर्थात् वडी हो जाने पर अप्रतिष्ठित हो जाती है।

(ख) जो वनस्पति कटने के पश्चात भी उग सके वह सप्रतिष्ठित ही होती है, जैसे—आलू, वेल की उगने वाली शाख, पत्थर चट का पत्ता आदि।

(ग) कुछ वनस्पतिये पक कर अर्थात बडी हो जाने पर भी सप्रतिष्ठित ही रहती है। जैसे—कन्दमूल, गन्ने की पोरी, खुम्मी, साप की छतरी, सब प्रकार के पुष्प आदि।

(घ) तीर्थंकरो व केवलियों को छोडकर सभी मनुष्यों के तथा त्रस तिर्यचो के शरीर सप्रतिष्ठित ही होते है।

५६ सप्रतिष्ठित प्रत्येक व साधारण वनस्पति में क्या अन्तर है?

सप्रतिष्ठित वनस्पति तो अपनी स्वतत्र सत्ता रखती है जैसे आलू आदि। परन्तु साधारण बादर वनस्पति की कोई स्वतत्र सत्ता नही है। वह नियम से प्रत्येक वनस्पति के आश्रय ही रहती है, और उसका आश्रयभूत होने के कारण वह वनस्पति सप्रतिष्ठित कहलाती है।

५७ साधारण वनस्पति प्रत्येक के आश्रय किस प्रकार रहती है, क्या शरीर में रहने वाले कीट क्रमियो वत्?

नही, शरीर मे रहने वाले क्रमियो के अपने अपने स्वतत्र शरीर है, परन्तु साधारण वनस्पति के अपने-अपने स्वतत्र शरीर नही होते। तहा अनन्तो जीवो का एक साझला शरीर होता है, और ऐसे असख्यातो शरीर सप्रतिष्ठित प्रत्येक के भीतर ठसाठस भरे रहते है। वे हिल डुल भी नही सकते है। सूक्ष्म होने से वे उस सप्रतिष्ठित प्रत्येक से पृथक इन्द्रियगोचर नही होते।

५८. साधारण शरीर कैसा होता है?

उसकी पृथक सत्ता न होने के कारण वह देखा या दिखाया नही जा सकता।

५९. किसी साधारण वनस्पति का नाम बताओ।

लोक मे कोई भी साधारण वनस्पति ऐसे नही जो हमारे तुम्हारे व्यवहार मे आती हो। अत: उसका कोई नही है। सूक्ष्म साधारण वनस्पति तो लोक मे सर्वत्र ठसाठस भरी हुई

है और बादर साधारण प्रतिष्ठित प्रत्येक में सर्वत्र ठसाठस भरी हुई है।

६० आलू आदि कन्दमूल को साधारण वनस्पति कहा जाता है ?
वे स्वय साधारण नही हैं, पर साधारण द्वारा प्रतिष्ठित होने के कारण, उपचार से साधारण कह दी जाती हैं।

६१ निगोद व साधारण जीव मे क्या अन्तर है ?
'निगोद' तो जीव का नाम है और 'साधारण' उसके शरीर का विशेषण है। अथवा एक शरीर मे अनन्तो का निवास होने से वह शरीर 'निगोद' है और समान आयु आदि होने से 'साधारण' जीव का विशेषण है। सभी निगोद जीव साधारण शरीर धारी होते हैं। एक एक साधारण शरीर मे अनन्तो जीव सर्वत्र व्याप कर रहते हैं।

६२. सप्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर की रचना समझाओ ?
आलू आदि एक एक स्कन्ध है, उसमे असख्यात 'अण्डर' हैं। एक एक अण्डर असख्यात 'आवास' हैं। एक एक आवास मे असख्यात पुलवी' है। एक एक पुलवी मे असखयात 'शरीर' है। एक एक निगोद शरीर मे अनन्त साधारण जीव व्यापकर रहते है। देश, नगर, मुहल्ला, घर और उसमे अनेक मनुष्यो का एक कुटुम्ब, ऐसी ही रचना उसमे समझना।

(६३) बादर और सूक्ष्म कौन कौन से जीव है ?
पृथिवी, अप्, तेज, वाय, नित्य निगोद और इतर निगोद ये ६ बादर और सूक्ष्म दोनो प्रकार के होते है, बाकी के सब जीव बादर ही होते है सूक्ष्म नही।

(६४) योग किसको कहते हैं ?
पुद्गल विपाकी शरीर और अगोपाग नामा नामकर्म के उदय से मनोवर्गणा, वचन वर्गणा तथा कायवर्गणा के अवलम्बन से, कर्म नोकर्म को ग्रहण करने की जीव की शक्ति विशेष को भाव योग कहते है। इस ही भाव योग के निमित्त से आत्म प्रदेशो के

परिस्पन्दन को द्रव्य योग कहते है। (विशेष देखो अध्याय २ अधिकार ४)

(६५) योग के कितने भेद हैं ?

पन्द्रह है—मनो योग ४ (सत्य, असत्य, उभय, अनुभय); वचन योग ४ (सत्य, असत्य, उभय, अनुभय), काय योग ७ (औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रियक, वैक्रियकमिश्र, आहारक, आहारक मिश्र, कार्माण)।

(६६) वेद किसको कहते है ?

नोकपाय के उदय से उत्पन्न हुई जीव के मैथुन करने की अभिलाषा को भाव वेद कहते है, और नोकर्म से आविर्भूत जीव के (शरीर के) चिन्ह विशेषो को द्रव्य वेद कहते है।

(६७) वेद के कितने भेद है ?

तीन है—स्त्रीवेद, पुरुपवेद, नपुसकवेद।

(६८) कषाय किसको कहते हैं ?

जो आत्मा के सम्यक्त्व, देशचारित्र, सकलचारित्र और यथाख्यात चारित्र रूप परिणामो को घाते (कषै) उसे कषाय कहते हैं।

(६९) कषाय के कितने भेद हैं ?

सोलह भेद है—अनन्तानुवन्धी ४, अप्रत्याख्यानावरण ४, प्रत्याख्यानावरण ४, और सज्वलन४ (विशेष देखो अध्याय ३ अधिकार १)

(७०) ज्ञान मार्गणा के कितने भेद है ?

आठ—मति, श्रुति, अवधि, मन पर्यय, केवल तथा कुमति, कुश्रुति, कुअवधि। (विशेष देखो अध्याय २ अधिकार ४)

(७१) संयम किसको कहते हैं ?

अहिंसादिक पांच व्रत धारण करने, ईर्यापथ आदि पांच समिति पालने, क्रोधादि कषायों के निग्रह करने, मनोयोगादि तीनों योगों को रोकने, स्पर्शन आदि पाचो इन्द्रियों को विजय करने को संयम कहते हैं।

(७२) संयम मार्गणा के कितने भेद हैं ?

सात है—सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्म साम्पराय, यथाख्यात, संयमासंयम, असंयम (विशेष देखो अध्याय २ अधिकार ४).

(७३) दर्शनमार्गणा के कितने भेद हैं ?

चार हैं—चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन (विशेष देखो अध्याय २ अधिकार ४).

(७४) लेश्या किसको कहते हैं ?

कषाय के उदय करके अनुरंजित योगो की प्रवृत्ति को भाव-लेश्या कहते हैं, और शरीर के पीत पद्मादि वर्णों को द्रव्य लेश्या कहते है ।

(७५) लेश्या के कितने भेद हैं ?

छ भेद हैं—कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल ।

७६ कषाय, वासना व लेश्या मे क्या अन्तर है ?

(देखो पीछे अध्याय ३ अधिकार १)

(७७) भव्य मार्गणा के कितने भेद हैं ?

दो है--भव्य, अभव्य । (विशेष देखो अध्याय २ अधिकार ४)

(७८) सम्यक्त्व किसको कहते है ?

तत्वार्थ श्रद्धान को सम्यक्त्व कहते है । (विशेष देखो अध्याय दो अधिकार ४)

(७९) सम्यक्त्व मार्गणा के कितने भेद हैं ?

छह भेद है—उपशम सम्यक्त्व, क्षयोपशम सम्यक्त्व, क्षायिक सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सासादन, मिथ्यात्व ।

(८०) संज्ञी किसको कहते हैं ?

जिसमे संज्ञा हो उसे संज्ञी कहते है ।

(८१) संज्ञा किसको कहते है ?

(पहिले आहारादि की अभिलाषा को संज्ञा कहा है, यहाँ संज्ञी

का प्रकरण होने से) द्रव्य मन आदि द्वारा शिक्षा ग्रहण करने को सज्ञा कहते है।

(८२) संज्ञी मार्गणा के कितने भेद हैं ?

दो है—सज्ञी, असज्ञी।

(८३) आहारक किसको कहते हैं ?

औदारिक आदि शरीर और पर्याप्ति के योग्य पुद्गलो के ग्रहण करने को आहार कहते है।

(८४) आहारक मार्गणा के कितने भेद हैं ?

दो है—आहारक अनाहारक।

(८५) अनाहारक जीव किस किस अवस्था में होते है ?

विग्रह गति और किसी किसी समुद्घात मे व अयोग केवली अवस्थाये जीव अनाहारक होता है।

८६. आहार कितने प्रकार के होते है ?

कई प्रकार का होता है, जैसे कवलाहार, नोकर्माहार, कर्माहार, लेपाहार, उष्माहार।

८७ कवलाहार आदि में क्या अन्तर है ?

मुखद्वार से ग्रास के रूप मे ग्रहण किया जाने वाला सर्व परिचित कवलाहार है। योगो व उपयोग के कारण नोकर्म व कर्म वर्गणाओ का ग्रहण नोकर्माहार व कर्माहार है। तेल मालिश आदि लेपाहार है और अण्डे को मुर्गी के शरीर की गर्मी से जो स्वय पहुँचता रहता है वह उष्माहार है।

८८. केवली अनाहारको को कौन सा आहार नहीं होता ?

कोई सा भी नही होता।

८९ केवली भगवान को कौन सा आहार नहीं होता ?

कवलाहार, लेपाहार व उष्माहार नही होता, कर्माहार व नोकर्माहार होता है, क्योंकि वह सब जीवों को सामान्य है।

(९०) विग्रह गति में कौन सा योग होता है ?

कार्माण काय योग।

(६१) इन (विग्रह) गतियों में अनाहारक अवस्था कितने समय तक रहती है ?

ऋजु गति (बिना मोडवाली गति) मे जीव अनाहारक नही रहता। पाणिमुक्ता (एक मोडवाली) गति मे एक समय, लांगलिका (दो मोड़वाली) मे दो समय और गोमूत्रिका (तीन मोड़वाली) मे तीन समय अनाहारक रहता है।

४/३ जन्म व जीव समास

(१) जन्म कितने प्रकार का होता है ?
तीन प्रकार का—उपपाद जन्म, गर्भ जन्म, सम्मूर्च्छन जन्म।

(२) उपपाद जन्म किसको कहते हैं ?
जो जीवों की उपपाद शय्या तथा नारकियो के योनिस्थान मे पहुँचते ही अन्तर्मुहूर्त मे ही पूर्णावस्था को प्राप्त हो जाये, उस जन्म को उपपाद जन्म कहते है।

(३) गर्भ जन्म किसको कहते है ?
माता पिता के शोणित शुक्र से जिनका शरीर बने, उनके जन्म को गर्भ जन्म कहते है।

(४) सम्मूर्च्छन जन्म किसको कहते है ?
जो माता पिता की अपेक्षा के विना इधर उधर के परमाणुओ को शरीर रूप परिणमावे, उसके जन्म को सम्मूर्च्छन जन्म कहते हैं।

५ गर्भ जन्म कितने प्रकार का होता है ?
तीन प्रकार का—जरायुज, अण्डज व पोतज।

(६) किन किन जीवों के कौन कौन सा जन्म होता है ?
देव नारकियो के उपपाद जन्म ही होता है, जरायुज, अण्डज व पोतज (मनुष्य तिर्यंच) जीवो के गर्भ जन्म ही होता है, और शेष जीवो के सम्मूर्च्छन जन्म ही होता है।

७. जरायुज, अण्डज और पोतज जीव कौन से होते हैं ?
जो जेर या झिल्लिमे लिपटे हुए उत्पन्न हों वे जरायुज हैं, जैसे

मनुष्य, गाय आदि। जो अण्डे मे उत्पन्न हो वे अण्डज हैं, जैसे पक्षी। जो पैदा होते ही भागने दौडने लगे वे पोतज हैं, जैसे हिरन।

(८) कौन कौन से जीवो के कौन कौन सा लिग होता है ?

नारकी और सम्मूर्च्छन जीवो के नपुंसक लिंग, देवो के स्त्री लिंग व पुलिग और शेष जीवो के तीनो लिंग होते है।

(९) जीव समास किसको कहते हैं ?

जीवो के रहने के ठिकाने को जीव समास कहते है।

(१०) जीव समास के कितने भेद है ?

(१४ भेद है—पाच प्रकार के स्थावरो के सूक्ष्म बादर विकल्प से १० तथा द्वीन्द्रियादि त्रसो के ४ अथवा) अट्ठानवे—तिर्यचो के ८५, मनुष्यो के ९, नारकी के दो और देवो के दो।

(११) तिर्यंचों के ८५ भेद कौन से है ?

सम्मूर्च्छनके ६९ और गर्भज के १६।

(१२) सम्मूर्च्छन के ६९ भेद कौन से हैं ?

एकेन्द्रिय के ४२, विकलेन्द्रिय के ९ और पचेन्द्रिय के १८।

(१३) एकेन्द्रिय के ४२ भेद कौन से है ?

पृथिवी, अप्, तेज, वायु, नित्य निगोद व इतर निगोद इन छहो के बादर सूक्ष्म की अपेक्षा से १२ तथा सप्रतिष्ठित प्रत्येक और अप्रतिष्ठित प्रत्येक को मिलाने से १४ हुए। इन १४ के पर्याप्त, निर्वृत्त्यपर्याप्त, और लब्ध्यपर्याप्त इन तीनो की अपेक्षा से ४२ जीवसमास होते है।

(१४) विकलत्रय के ९ भेद कौन कौन से है ?

द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय अचतुरिन्द्रिय के पर्याप्त, निवृत्त्यपर्याप्त ओर लब्ध्यपर्याप्त की अपेक्षा से ९ भेद हुए।

(१५) सम्मूर्च्छन पंचेन्द्रियो के १८ भेद कौन कौन से है ?

जलजर, थलचर, नभचर, इन तीनो के सैनी व असैनी की अपेक्षा से ६ भेद हुए और इन छहो के पर्याप्तक, निवृत्त्य-

पर्याप्तक व लब्ध्य पर्याप्तक की अपेक्षा मे १८ भेद हुए ।

(१६) गर्भज पंचेन्द्रिय के १६ भेद कौन कौन से है ?

कर्मभूमि के १२ और भोगभूमि के ४।

(१७) कर्मभूमि के १२ भेद कौन कौन से हैं ?

जलचर, नभचर, थलचर इन तीनो के सैनी असैनी के भेद से ६ भेद हुए और इनके पर्याप्त व निवृत्त्यपर्याप्त की अपेक्षा से १२ भेद हुए ।

(१८) भोगभूमि के चार भेद कौन कौन से है ?

थलचर और नभचर इनके पर्याप्त और निवृत्त्यपर्याप्त की अपेक्षा ४ भेद हुए । भोग भूमि मे असैनी (व जलचर) तिर्यच नही होते ।

(१९) मनुष्यो के नौ भेद कौन कौन से है ?

आर्यखण्ड, म्लेच्छखण्ड, भोगभूमि और कुभोगभूमि इन चारो गर्भजे के पर्याप्तक व निवृत्त्यपर्याप्तक की अपेक्षा ८ भेद हुए। इनमे सम्मूर्च्छन मनुष्य का लब्ध्यपर्याप्तक भेद मिलाने से ९ भेद होते है ।

(२०) नारकियो के दो भेद कौन कौन से हैं ?

पर्याप्तक और निवृत्त्यपर्याप्तक ।

(२१) देवों के दो भेद कौन कौन से हैं ?

पर्याप्तक और निवृत्त्यपर्याप्तक ।

(२२) देवो के विशेष भेद कौन कौन से हैं ?

चार है—भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक ।

(२३) भवनवासी देवो के कितने भेद है ?

दश है—असुरकुमार, नागकुमार, विद्युत्कुमार, सुपर्णकुमार, अग्निकुमार, वातकुमार, स्तनितकुमार, उदधिकुमार, द्वीपकुमार और दिपकुमार ।

(२४) व्यन्तरो के कितने भेद है ?

आठ है—किन्नर, किम्पुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत व पिशाच ।

(२५) ज्योतिष्क देवो के कितने भेद हैं ?

पाँच भेद है—सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्र, तारे।

(२६) वैमानिक देवो के कितने भेद है ?

दो है—कल्पोपन्न और कल्पातीत।

(२७) कल्पोपन्न किनको कहते है ?

जिनमे इन्द्रादिक की कल्पना हो उनको कल्पोपन्न कहते हैं।

(२८) कल्पातीत किनको कहते हैं ?

जिनमे इन्द्रादिक की कल्पना न हो उनको कल्पातीत कहते है।

(२९) कल्पोपन्न देवो के कितने भेद है ?

सोलह—सौधर्म, ईशान, सानत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ठ, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, अच्युत।

(३०) कल्पातीत देवों के कितने भेद है ?

तेईस है—नव ग्रैवेयक, नव अनुदिश, पच पचोत्तर (विजय, वैजयन्त, जयत, अपराजित, सर्वार्थ सिद्धि)।

(३१) नारकियो के कितने भेद है ?

पृथिवी की अपेक्षा से सात भेद है।

(३२) सात पृथिवियो के क्या नाम है ?

रत्नप्रभा (धम्मा); शर्करा प्रभा (वशा), वालुका प्रभा (मेघा), पक प्रभा (अजना), धूमप्रभा (अरिष्टा), तम प्रभा (मघवी), महातम. प्रभा (माघवी)।

४/४ लोकाधिकार

(१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवों के रहने का स्थान कहां है ?

सर्व लोक ।

(२) बादर एकेन्द्रिय जीव कहा रहते हैं ?

बादर एकेन्द्रिय जीव किसी ही आधार का निमित्त पाकर निवास करते हैं ।

(३) त्रस जीव कहां रहते हैं ?

त्रस जीव त्रसनाली मे रहते है ।

(४) विकलत्रय जीव कहां रहते हैं ?

विकलत्रय जीव कर्मभूमि और अन्त के आधे द्वीप तथा अन्त के स्वयम्भूरमण समुद्र मे ही रहते है ।

(५) पंचेन्द्रिय तिर्यंच कहां कहां रहते है ?

तिर्यक् लोक मे रहते है, परन्तु जलचर तिर्यञ्च लवण समुद्र, कालोदधि समुद्र और स्वयम्भूरमण समुद्रो के सिवाय अन्य समुद्रो मे नहीं रहते है ।

(६) नारकी जीव कहां रहते हैं ?

अधोलोक की सात पृथिवियों मे रहते हैं ।

(७) भवनवासी और व्यन्तर देव कहा रहते हैं ?

पहली पृथिवी के खर भाग और पंक भाग मे तथा तिर्यक्‌लोक मे ।

(८) ज्योतिष्क देव कहा रहते हैं ?

पृथिवी से सात सौ नब्बे योजन की ऊंचाई से ऊपर नौ सौ

योजन की ऊचाई तक अर्थात ११० योजन आकाश मे एक राजू मात्र तिर्यक् लोक मे ज्योतिष्क देव निवास करते है।

(९) वैमानिक देव कहां रहते है ?

ऊर्ध्वलोक मे।

(१०) मनुष्य कहां रहते है ?

नर लोक मे।

(११) लोक के कितने भेद है ?

तीन है—ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक।

(१२) अधोलोक किसको कहते है ?

मेरु के नीचे सात राजू अधोलोक है।

(१३) ऊर्ध्वलोक किसको कहते है ?

मेरु के ऊपर लोक के अन्त पर्यन्त (७ राजू) ऊर्ध्वलोक है।

(१४) मध्यलोक किसको कहते है ?

एक लाख चालीस योजन मेरु की ऊचाई के बराबर मध्यलोक है।

(१५) मध्यलोक का विशेष स्वरूप क्या है ?

मध्य लोक के अत्यन्त बीच मे एक लाख योजन चौडा गोल (थाली के आकार) जम्बूद्वीप है। जम्बूद्वीप के बीच मे एक लाख योजन ऊचा सुमेरू पर्वत है, जिसका एक हजार योजन जमीन के भीतर मूल है। निन्याणवे हजार योजन पृथिवी के ऊपर है। और चालीस योजन की चूलिका (चोटी) है।

जम्बू द्वीप के बीच मे पश्चिम पूर्व की तरफ लम्बे छ कुलाचल पर्वत पडे हुए हैं जिनसे जम्बूद्वीप के सात खण्ड हो गए है। इन सात खण्डो के नाम इस प्रकार है—भरत, हैमवत, हैरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत, ऐरावत। विदेह क्षेत्र मे मेरु से उत्तर

की तरफ उत्तर कुरु और दक्षिण की तरफ देवकुरु (नाम उत्तम भोगभूमियें) है।

जम्बू द्वीप के चारो तरफ खाई की तरह बेढे हुए दो लाख योजन चौडा लवण समुद्र है। लवण समुद्र का चारो तरफ से बेढे हुए चार लाख योजन चौडा धातुकी खण्ड है। इस धातुकी खण्ड द्वीप मे दो मेरु पर्वत है और क्षेत्र कुलाचलादि की रचना (सव) जम्बू द्वीप से दूनी है।

धातुकी खण्ड को चारो तरफ से बेढे हुए आठ लाख योजन चौडा कालोदधि समुद्र है। और कालोदधि को बेढे हुए सोलह लाख योजन चौड़ा पुष्कर द्वीप है। पुष्कर द्वीप के बीचोबीच वलय के आकार, चौडाई पृथिवी पर एक हजार बाईस योजन, बीच मे सात सौ तेईस योजन, ऊपर चार सौ चौबीस योजन, ऊ चा सतरह सौ इकईस योजन और जमीन के भीतर चारसौ सवातीस योजन जिसकी जड है, ऐसा मानुषोत्तर नामा पर्वत पडा हुआ है, जिससे पुष्कर द्वीप के दो खण्ड हो गए है। पुष्कर द्वीप के पहिले अर्ध भाग मे जम्बू द्वीप से दूनी दूनी अर्थात धातकी खड के बराबर सब रचना है।

जम्बू द्वीप, धातकी खण्ड और पुष्करार्द्ध द्वीप तथा लवणोदधि समुद्र और कालोदधि समुद्र इतने (ढाई द्वीप प्रमाण) क्षेत्र को नरलोक कहते है। पुष्कर द्वीप से आगे परस्पर एक दूसरे को बेढे हुए दूने दूने विस्तार वाले मध्य लोक के अन्त पर्यन्त द्वीप और समुद्र हैं।

पाच मेरु सम्बन्धी पाँच भरत, पाच ऐरावत, देवकुरु व उत्तर कुरु को छोडकर पाच विदेह इस प्रकार सब मिलकर १५ कर्म भूमि है। पाच हैमववत और पाच हैरण्यवत् इन दश क्षेत्रो मे जघन्य भोग भूमि है। पाच हरि और पाच रम्यक इन दश क्षेत्रो मे मध्यम भोग भूमि है। पाच देव कुरु और पाँच उत्तर कुरु इन दश क्षेत्रो मे उत्तम भोग भमि है जहा पर असि

मसि कृषि सेवा शिल्प और वाणिज्य इन षट् कर्मो की प्रवृत्ति हो उसको कर्म भूमि कहते हैं। जहा इनकी प्रवृत्ति न हो उसको भोग भूमि कहते है। मनुष्य क्षेत्र से वाहर के समस्त द्वीपो मे जघन्य भोगभूमि की सी रचना है, किन्तु अन्तिम स्वयम्भू रमण द्वीप के उत्तरार्द्ध मे तथा समस्त स्वयम्भूरमण समुद्र मे और चारो कोनो की पृथिवियो मे कर्मभूमिकीसी रचना है । लवण समुद्र और कालोदधि समुद्र मे ९६ अन्तर्द्वीप हैं, जिनमे कुभोगभूमि की रचना है। वहा मनुष्य ही रहते है। उनमे मनुष्यो की आकृतिये नाना प्रकार की कुत्सित हैं।

प्रश्नावली

१. लक्षण करो—मार्गणा, उपयोग, निर्वृत्ति इन्द्रिय, विग्र गति, निगोद जीव, जीव समास, संज्ञा, साधारण शरीर
२ भेद प्रभेद दर्शाओ—जीव के भाव, मार्गणा, लोक।
३ क्या अन्तर है—पारिणमिक भाव व क्षायिक भाव, बादर व सूक्ष्म, नित्य निगोद व इतर निगोद, सप्रतिष्ठित प्रत्येक वसाधारण ।
४. सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति का लक्ष्य, चिन्हव रचना बताओ
५. किसी साधारण वनस्पति का नाम बताओ।
६. प्रत्येक साधारण आदि मे से किस जाति के शरीर है—मछली, गोभी, घिया, गन्ने की गाठ, बेल की टहनी, आलू, पत्ता, फूल, टमाटर, गाठ गोभी, आपका शरीर, तीर्थंकर व केवली का शरीर।
७ जीव समास के भेद प्रभेद दर्शाओ।
८. किस जन्म वाले जीव हैं—मनुष्य, चिडिया, सर्प, मछली, मक्षिका, देव, गाय, हिरण, वृक्ष।
९. नरक व स्वर्ग कितने कितने है, उनके नाम वताओ।
१० लोक मे कहा कहा रहते है—उदधिकुमार, पिशाच, राक्षस, असुरकुमार, कल्पातीत देव।
११. इन्द्रियो के भेद प्रभेदो का चार्ट वनाओ।

———

पञ्चम अध्याय

(गुण स्थान)

१. मोक्ष व उसका उपाय

(१) संसार के सब प्राणी सुख को कहते है और सुख ही का उपाय कहते हैं, परन्तु सुख को प्राप्त क्यों नहीं होते ?
ससारी जीव असली सुख का स्वरूप और उसका उपाय न तो जानते है और न उसका साधन करते है, इसलिये सुख को भी प्राप्त नही होते ।

(२) असली सुख का क्या स्वरूप है ?
आल्हाद स्वरूप जीव के अनुजीवी गुण को असली सुख कहते है। यही जीव का खास स्वभाव है, परन्तु संसारी जीवों ने भ्रमवश सातावेदनीय कर्म के उदयजनित उस असली सुख की वैभाविक परिणतिरूप साता परिणाम को ही सुख मान रखा है।

(३) संसारी जीव को असली सुख क्यों नहीं मिलता ?
कर्मों ने उस सुख को घात रखा है। इस कारण असली सुख नही मिलता।

(४) संसारी जीव को क्या असली सुख मिल सकता है ?
मोक्ष होने पर।

(५) मोक्ष का स्वरूप क्या है ?
आत्मा के समस्त कर्मों के विप्रमोक्ष (अत्यन्त वियोग) को मोक्ष कहते है।

(६) उस मोक्ष की प्राप्ति का उपाय क्या है ?
संवर और निर्जरा।

(७) संवर किसको कहते हैं ?

आस्रव के निरोध को सवर कहते है, अर्थात अनागत (नवीन) कर्मों का आत्मा के साथ सम्बन्ध न होने का नाम सवर है।

(८) निर्जरा किसको कहते हैं ?

आत्मा का पूर्व से बन्धे हुए कर्मों से सम्बन्ध छूटने को निर्जरा कहते हैं।

(९) सवर और निर्जरा होने का क्या उपाय है ?

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र इन तीनो पूर्ण गुणो की एकता ही संवर निर्जरा का उपाय है।

(१०) इन तीनो गुणों की पूर्णता युगपत होती है या क्रम से ?

क्रम से होती है।

(११) इन तीनो (रत्नत्रय) पूर्ण गुणो की एकता होने का क्रम किस प्रकार है ?

जैसे जैसे गुणस्थान वढते है तैसे ही ये गुण भी वढते हुए अन्त में पूर्ण होते है।

५/२ गुणस्थानाधिकार

(१) गुणस्थान किसको कहते है ?

मोह और योग के निमित्त से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्‌चारित्र इन आत्मा के गुणो की तारतम्य रूप अवस्था विशेष को गुणस्थान कहते है।

(२) गुणस्थानों के कितने भेद है ?

चौदह है—(१) मिथ्यात्व, (२) सासादन, (३) मिश्र (४) अविरत सम्यग्दृष्टि, (५) देशविरत, (६) प्रमत्त विरत, (७) अप्रमत्त विरत, (८) अपूर्वकरण, (९) अनिवृत्तिकरण, (१०) सूक्ष्म साम्पराय, (११) उपशान्तमोह, (१२) क्षीणमोह, (१३) सयोगकेवली, (१४) अयोग केवली।

(३) गुण स्थानो के नाम होने का कारण क्या है ?

मोहनीय कर्म और योग।

(४) कौन कौन से गुणस्थान का क्या क्या निमित्त है ?

आदि के चार गुणस्थान तो दर्शनमोहनीय कर्म के निमित्त से है। पाचवे गुणस्थान से लेकर बारहवे गुणस्थान पर्यंत आठ गुणस्थान चारित्र मोहनीय के निमित्त से है। और तेरहवा और चौदहवा ये दो गुणस्थान योगो के निमित्त से हैं।

भावार्थ – पहला गुणस्थान दर्शनमोहनीय के उदय से होता है। इसमें आत्मा के परिणाम मिथ्यात्वरूप होते है। चौथा गुणस्थान दर्शन मोहनीय के उपशम क्षय या क्षयोपशम से होता है। इस

गुणस्थान मे आत्मा के सम्यग्दर्शन गुण का प्रादुर्भाव हो जाता है। तीसरा गुणस्थान सम्यग्मिथ्यात्वरूप दर्शनमोहनीय कर्म के उदय से होता है। इस गुणस्थान मे आत्मा के परिणाम सम्यग्मिथ्यात्व अर्थात उभय रूप होते है। पहले गुण स्थान मे औदयिक भाव, चौथे गुणस्थान मे औपशमिक, क्षायिक अथवा क्षायोपशमिक भाव और तीसरे गुणस्थान मे औदयिक भाव होता है। परन्तु दूसरा गुणस्थान दर्शनमोहनीय कर्म की उदय उपशम क्षय और क्षयोपशम इन चार अवस्थाओ मे से किसी भी अवस्था की अपेक्षा नही रखता है, इसलिये यहा पर दर्शन-मोहनीय कम की अपेक्षा से पारिणामिक भाव है, परन्तु अनन्तानुबन्ध रूप चारित्र मोहनीय कर्म का उदय होने से इस गुणस्थान मे चारित्रमोहनीय कर्म की अपेक्षा औदयिक भाव भी कहा जा सकता है। इस गुणस्थान मे अनन्तानुबन्धी के उदय से सम्यक्त्व का घात हो गया है, इसलिये यहा सम्य-क्त्व नही है और मिथ्यात्व का भी उदय नही है, अत मिथ्यात्व परिणाम भी नही है। इसलिये यह गुणस्थान मिथ्यात्व व सम्यक्त्व की अपेक्षा से अनुदय रूप है।

पाचवे गुण स्थान से दसवें गुणस्थान तक छ गुणस्थान चारित्र-मोहनीय कर्म के क्षयोपशम होते है। इन गुणस्थानो से सम्यग्-चारित्र गुण की कर्म से वृद्धि होती जाती है। ग्यारहवा गुण-स्थान चारित्र मोहनीय कर्म के उपशम से होता है इसलिये ग्यारहवें गुणस्थान मे औपशमिक भाव होते है। यद्यपि यहा पर चारित्र मोहनीय कर्म का पूर्णतया उपशम हो गया है, तथापि योग का सद्भाव होने से पूर्ण चारित्र नही है, क्योकि सम्यक्चारित्र के लक्षण मे योग और कपाय के अभाव से सम्यक्चारित्र होता है ऐसा लिखा है। वारहवा गुणस्थान चारित्रमोहनीय कर्म के क्षय से होता है, इसलिये यहा क्षायिक भाव पाया जाता है। इस गुण स्थान मे भी ग्यारहवें गुणस्थान

की तरह सम्यक्चारित्र की पूर्णता नही है। सम्यग्ज्ञान गुण यद्यपि चौथे गुणस्थान मे ही प्रगट हो चुका था।

भावार्थ—यद्यपि आत्मा का ज्ञान गुण अनादिकाल से प्रवाह रूप चला आ रहा है, तथापि दर्शनमोहनीय का उदय होने से वह मिथ्यारूप था। परन्तु चौथे गुण स्थान मे जब दर्शनमोहनीय कर्म के उदय का अभाव हो गया, तब वही ज्ञान सम्यग्ज्ञान कहलाने लगा। और पचम आदि गुणस्थानो मे तपश्चरण के निमित्त से अवधि व मन पर्यय ज्ञान भी किसी किसी जीव के प्रगट हो जाते है, तथापि केवलज्ञान के हुए बिना सम्यग्ज्ञान गुण की पूर्णता नही हो सकती। इसलिये इस बारहवे गुणस्थान तक यद्यपि सम्यग्दर्शन की पूर्णता हो गई है (क्योकि क्षायिक सम्यक्त्व के बिना क्षपक श्रेणी और क्षपक श्रेणी के अभाव मे बारहवा गुजस्थान सम्भव नही।) तथापि सम्यग्ज्ञान व सम्यक चारित्रगुण अभी तक अपूर्ण है, इसलिये यहा मोक्ष नही होता। तेरहवा गुणस्थान योगो के सद्भाव की अपेक्षा से होता है, इसलिये इसका नाम सयोग और केवलज्ञान के निमित्त से केवली है। इस गुणस्थान मे सम्यग्ज्ञान पूर्ण हो जाने पर भी, योगात्म चारित्र की पूर्णता न होने से मोक्ष नही होता। चौदहवा गुणस्थान योगो के अभाव की अपेक्षा है, इसीलिये इसका नाम अयोग केवली है। इस गुणस्थान मे सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनो गुणो की पूर्णता हो जाने के कारण मोक्ष उससे दूर नही रह जाता। अ, इ, उ, ऋ, लृ इन पाच ह्रस्व स्वरो के उच्चारण करने मे जितना काल लगता है, उतने ही काल पश्चात मोक्ष लाभ करता है।

(५) मिथ्यात्व गुणस्थान का क्या स्वरूप है ?

मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से अतत्वार्थ श्रद्धानरूप आत्मा के परिणाम विशेष को मिथ्यात्व गुणस्थान कहते है। इस मिथ्यात्व गुणस्थान मे रहनेवाला जीव विपरीत श्रद्धान करता है और

सच्चे धर्म की तरफ इसकी रुचि नही होती । जैसे पित्तज्वर वाले रोगी को दुग्धादिक रस कडुवे लगते हैं, उसी प्रकार इसको भी समीचीन धर्म अच्छा नही लगता ।

(७) मिथ्यात्व गुणस्थान मे किन-किन प्रकृतियो का बन्ध होता है ?
कर्म की १४० प्रकृतियो मे से २० प्रकृतियो का अभेद विवक्षा से स्पर्शादिक चार मे, बन्धन ५ और संघात ५ का अभेद विवक्षा से पाच शरीरो मे, अन्तर्भाव होता है । इस कारण भेद विवक्षा से १४८ और अभेद विवक्षा से १२२ प्रकृतिया है । सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति इन दो प्रकृतियो का बन्ध नही होता है, क्योंकि इन दोनो प्रकृतियो की सत्ता सम्यक्त्व परिणाम से मिथ्यात्व प्रकृति के तीन खण्ड करने से होती है । इस कारण अनादि मिथ्यादृष्टि जीव के बन्ध योग्य प्रकृति १२० और सत्व योग्य प्रकृति १४६ है ।

मिथ्यात्व गुणस्थान मे तीर्थंकर, प्रकृति, आहारक शरीर, आहारक अगोपाग इन तीन प्रकृतियो का बन्ध नही होता (अत ये तीन अबन्ध प्रकृतिया रही जाती है । आगे जाने पर इनका बन्ध हो जायेगा) क्योंकि इन तीन प्रकृतियों का बन्ध सम्यग्दृष्टियो को ही होता है । इसलिये इस गुणस्थान मे १२० में से तीन घटाने पर ११७ प्रकृतियो का बन्ध होता है ।

(७) मिथ्यात्व गुणस्थान मे उदय कितनी प्रकृतियों का होता है ?
सम्यक्प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व, आहारक शरीर, आहारक अंगोपांग और तीर्थंकर प्रकृति, इन पांच प्रकृतियों का इस गुणस्थान मे उदय नही होता, इसलिये १२२ मे से पांच घटाने पर ११७ का उदय होता है ।

(८) मिथ्यात्व गुणस्थान मे सत्व कितनी प्रकृतियों का रहता है ?
एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का ।

(९) सासादन गुणस्थान किसको कहते है ?
प्रथमोपशम सम्यक्त्व के [illegible]

आवली और कम से कम एक समय बाकी रहे, उस समय किसी एक अनन्तानुबन्धी कषाय के उदय से नाश हो गया है सम्यक्त्व जिसका, ऐसा जीव सासादन गुणस्थान वाला होता है।

(१०) प्रथमोपशम सम्यक्त्व किसको कहते हैं?

सम्यक्त्व के तीन भेद है—दर्शन मोहनीय की तीन प्रकृति और अनन्तानुबन्धी की चार प्रकृति, इस प्रकार सात प्रकृतियो के उपशम होने से जो उत्पन्न हो उसको उपशम सम्यक्त्व कहते है, और इन सातो के क्षय होने से जो उत्पन्न हो उसको क्षायिक सम्यक्त्व कहते है। इनमे से ६ प्रकृतियो मे अनुदय और सम्यक्प्रकृति नामक मिथ्यात्व के उदय से जो उत्पन्न हो उसे क्षायोपशमिक सम्यक्त्व कहते है।

उपशम सम्यक्त्व के दो भेद है,—एक प्रथमोपशम सम्यक्त्व दूसरा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व। अनादि मिथ्यादृष्टि के पाच और सादि मिथ्यादृष्टि के सात प्रकृतियो के उपशम से जो हो उसको प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहते है। (क्योकि सम्याग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति यह दोनो प्रकृतिया की सत्ता आदि मिथ्यादृष्टि के ही होती है, अनादि मिथ्यादृष्टि के नही।

(११) द्वितीयोपशम सम्यक्त्व किसको कहते हैं?

सातवें गुण स्थान मे क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव श्रेणी चढने के सन्मुख अवस्था मे अनन्तानुबन्धी चतुष्टय का विसयोजन करके (उनको अप्रत्याख्यान आदि रूप परिणमा कर) दर्शन मोहनीय की तीनो प्रकृतियों का उपशम करके जो सम्यक्त्व प्राप्त करता है, उसको द्वितीयोतीयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।

(१२) आवली किसको कहते है

असंख्यात समय की एक आवली होती है।

(१३) सासादन गुणस्थान मे कितनी प्रकृतियों का बन्ध होता है?

पहिले गुणस्थान मे जो ११७ प्रकृतियो का बन्ध होता है, उनमें

से मिथ्यात्व गुणस्थान मे जिनकी व्युच्छित्ति है, ऐसी १६ प्रकृतियो के घटाने पर १०१ प्रकृतियो का बन्ध सासादन मे होता है । वे सोलह प्रकृतिये ये है—मिथ्यात्व, हुँडक सस्थान, नपु सक वेद, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु, असप्राप्तसृपाटिका सहनन, एकेन्द्रिय जाति, विकलत्रय तीन जाति, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्ति और साधारण ।

(१४) व्युच्छित्ति किसे कहते हैं ?

जिस गुणस्थान मे कर्म प्रकृतियो के बन्ध उदय अथवा सत्व की व्युच्छित्ति कही हो, उस गुणस्थान तक ही उन प्रकृतियो का बन्ध उदय अथवा सत्व पाया जाता है। आगे के किसी भी गुणस्थान मे उन प्रकृतियो का बन्ध, उदय अथवा सत्व नही होता है । इसी को व्युच्छित्ति कहते हैं ।

१५ अबन्ध अनुदय व असत्य किसको कहते हैं ?

जिस गुणस्थान मे कर्म प्रकृतियो के अबन्ध अनुदय अथवा असत्व कहा हो, उस गुणस्थान मे ही उन प्रकृतियो का बन्ध उदय या सत्व नही होता । आगे किसी योग्य गुणस्थान मे वे प्रकृतियें बन्ध उदय अथवा सत्व रूप हो जाती है ।

(१६) सासादन गुणस्थान मे उदय कितनी प्रकृतियो का होता है ?

पहिले गुणस्थान मे जो ११७ प्रकृतियो का उदय होता है, उनमे से मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्ति और साधारण इन पाच मिथ्यात्व गुणस्थान की व्युच्छित्ति प्रकृतियो को घटाने पर ११२ रही । परन्तु नरकगत्यानुपूर्वी का इस गुण स्थान मे उदय नही होता, इसलिये इस गुण स्थान मे १११ प्रकृतियो का उदय रहता है ।

(१७) सासादन गुणस्थान मे सत्व कितनी प्रकृतियो का होता है ?

एक सौ पैंतालीस प्रकृतियो का सत्व रहता है । यहा पर तीर्थंकर प्रकृति, आहारक शरीर और आहारक अगोपाग इन तीन प्रकृतियो की सत्ता नही रहती (असत्त्व है) ।

(१८) तीसरा मिश्र गुणस्थान किसको कहते है ?

सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से जीव के न तो सम्यक्त्व परिणाम होते है और न केवल मिथ्यात्व रूप परिणाम होते हैं, किन्तु मिले हुए दही गुड के स्वाद की तरह एक भिन्न जाति के मिश्र परिणाम होते है। इसी को मिश्र गुणस्थान कहते हैं।

(१९) मिश्र गुणस्थान में कितनी प्रकृतियो का बन्ध होता है ?

दूसरे गुणस्थान मे बन्ध प्रकृति १०१ थी। उनमें से [व्युच्छित्ति प्रकृति २५ को घटाने पर शेष रही ७६। परन्तु इस गुणस्थान मे किसी भी आयु का बन्ध नही होता है, इसलिये ७६ मे से मनुष्यायु देवायु इन दो के घटाने पर ७४ प्रकृतियो का बन्ध होता है। नरकायु की पहले गुणस्थान मे और तिर्यचायु की दूसरे गुणस्थान मे ही व्युच्छित्ति हो चुकी है। (व्युच्छित्ति वाली २५ प्रकृतिया इस प्रकार है—अनन्तानुवन्धी क्रोध मान माया लोभ, स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, दुर्भग, दु स्वर, अनादेय; यग्रोधपरिमण्डल, स्वाति, कुब्जक, वामन सस्थान; वज्रनाराच, नाराच, अर्द्धनाराच, कीलित सहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्त्रीवेद, नीच गोत्र, तिर्यंग्गति, तिर्यंग्गत्यानुपूर्वी, तिर्यंगायु और उद्योत)।

(२०) मिश्र गुणस्थान में कितनी प्रकृतियो का उदय होता है ?

दूसरे गुणस्थान मे १११ प्रकृतियो का उदय होता है, उनमे से व्युच्छिन्न प्रकृति ९ के घटाने पर शेप रही १०२ मे से नरक गत्यानुपूर्वी के बिना (क्योकि यह दूसरे गुण स्थान मे घटाई जा चुकी है) शेप की तीन आनुपूर्वी घटाने पर शेप रही ९९ प्रकृति और एक सम्यक् प्रकृति (जिसका पहले अनुदय) का उदय यहा आ मिला; इस कारण इस गुणस्थान मे १०० प्रकृतियो का उदय है। व्युच्छित्ति की ९ प्रकृतियां ये हैं—अनन्तानुबन्धी क्रोध मान, माया, लोभ; एकेन्द्रियादि ४ जाति; स्थावर १।

२१ मिश्र गुणस्थान मे गत्यानुपूर्वी क्यो घटाई ?
क्योकि इस गुणस्थान मे मरण नही होता।

(२२) मिश्र गुणस्थान मे सत्व कितनी प्रकृतियो का रहता है ?
तीर्थंकर प्रकृति के विना १४७ प्रकृतियो का सत्व रहता है।

(२३) चौथे अविरत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान का क्या स्वरूप है ?
दर्शनमोहनीय की ३ और अनन्तानुबन्धी की चार इन सात प्रकृतियो के उपशम अथवा क्षय अथवा क्षयोपशम से और अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ के उदय से व्रत रहित सम्यक्त्वधारी चौथे गुणस्थानवर्ती होता है।

(२४) इस चौथे गुणस्थान मे बन्ध कितनी प्रकृतियो का होता है ?
तीसरे गुणस्थान मे ७४ प्रकृतियो का बन्ध होता है, जिनमे मनुष्यायु, देवायु और तीर्थंकर (जो पहले अवन्ध रूप थी) इन तीन प्रकृतियो सहित ७७ प्रकृतियो का यहा बन्ध होता है।

(२५) चौथे गुणस्थान मे उदय कितनी प्रकृतियो का होता है ?
तीसरे गुणस्थान मे १०० प्रकृतियो का उदय होता है। उनमे से व्युच्छिन्न प्रकृति सम्यग्मिथ्यात्व के घटाने पर रही ९९। इनमे चार आनुपूर्वी और एक सम्यक्प्रकृति (जो पहले अनुदय रूप थी) इन पाच प्रकृतियो के मिलाने पर १०४ प्रकृतियो का उदय होता है।

(२६) चौथे गुणस्थान मे कितनी प्रकृतियो का सत्व रहता है ?
सबका। अर्थात १४८ प्रकृतियों का, किन्तु क्षायिक सम्यग्दृष्टि के १४१ का ही सत्व है (क्योकि दर्शनमोहनीय की तीन और अनन्तानुवन्धी चार इन सात प्रकृतियो का क्षय हो गया है।)

(२७) देशविरत नामक पाचवें गुणस्थान का क्या स्वरूप है ?
प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ के उदय से यद्यपि सयम भाव नही होता तथापि अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ के उपशम से (क्षयोपशमसे) श्रावक व्रतरूप देशचारित्र होता है। इसही को देशविरत नामक पाचवा गुणस्थान कहते हैं। पाँचवें आदि समस्त ऊपर के गुणस्थानो मे सम्यग-

दर्शन और सम्यग्दर्शन का अविनाभावी सम्यग्ज्ञान अवश्य होता है। इनके विना पाचवे छटे आदि गुणस्थान नही होते।

(२८) पांचवे गुणस्थान में कितनी प्रकृतियों का बन्ध होता है ?

चौथे गुणस्थान मे ७७ प्रकृतियो का बन्ध कहा है। उनमे से व्युच्छिन्न दश के घटाने पर शेष रही ६७ प्रकृतियो का बन्ध होता है (व्युच्छित्ति की दस अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, मनुष्यगति, मनुष्यग-यानुपूर्वी, मनुष्यायु, औदारिक शरीर, औदारिक अगोपाग, वज्रर्षभ नाराच सहनन)

(२९) पांचवे गुणस्थान में उदय कितनी प्रकृतियों का होता है ?

चौथे गुणस्थान मे जो १०४ प्रकृतियो का उदय कहा है, उनमे से व्युच्छिन्न प्रकृति १७ के घटाने पर शेष रही ८७ प्रकृतियो का उदय है। (व्युच्छिन्न १७ = अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, देवायु, नरक गति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु, वैक्रियक शरीर, वैक्रियक अगोपाग, मनुष्य गत्यानुपूर्वी तिर्यग्गत्यानुपूर्वी, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति)।

३० गत्यानुपूर्वी का उदय यहा क्यों घटाया ?

क्योकि पाचवे आदि गुणस्थानो मे मृत्यु नही होती। मृत्यु के समय चौथा या पहला स्थान हो जाता है।

(३१) पाचवे गुणस्थान में सत्व कितनी प्रकृतियों का रहता है ?

चौथे गुणस्थान मे जो १४८ का सत्व रहना कहा है, उनमे से व्युच्छिन्न प्रकृति एक नरकायु के विना १४७ का सत्व रहता है। किन्तु क्षायिक सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा १४० का ही सत्व रहता है।

(३२) छटे प्रमत्तविरत गुणस्थान का स्वरूप क्या है ?

सज्वलन और नोकषाय के तीव्र उदय से सयम भाव तथा मलजनक प्रमाद ये दोनो ही युगपत् होते है। इसलिये इस गुणस्थानवर्ती मुनि को प्रमत्त विरत अर्थात चित्रलावरणी कहा है।

३३ संज्वलन के उदय से संयम भाव कैसे सम्भव है ?

वास्तव मे प्रत्याख्यानावरण के उपशय से तद्योग्य सयम है पर सज्वलन के उदय मे होने से उपचार कथन किया है।

(३४) छटे गुणस्थान में बन्ध कितनी प्रकृतियो का होता है ?

पाचवे गुणस्थान मे जो ६७ प्रकृतियो का बन्ध होता है, उनमे से प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ इन चार व्युच्छिन्न प्रकृतियो के घटाने पर शेप रही ६३ प्रकृतियो का बन्ध होता है।

(३५) छटे गुणस्थान मे उदय कितनी प्रकृतियो का रहता है ?

पाचवे गुणस्थान मे ८७ प्रकृतियो का उदय कहा है, उनमे से व्युच्छिन्न प्रकृति आठ घटाने पर शेष रही ७९ प्रकृतियो मे आहारक शरीर व आहारक अगोपाग (जो अनुदय रूप थी) ये दो प्रकृतिया मिलाने से ८१ प्रकृतियो का उदय होता है। (व्युच्छिन्न आठ=प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, तिर्यग्गति, तिर्यगायु, उद्योत और नीच गोत्र)

(३६) छटे गुणस्थान मे सत्व कितनी प्रकृतियो का है ?

पाचवे गुणस्थान मे १४७ प्रकृतियो की सत्ता कही है, उनमे से व्युच्छिन्न प्रकृति एक तिर्यगायु के घटाने पर १४६ प्रकृतियो का सत्व रहता है। क्षायिक सम्यग्दृष्टि के १३९ का ही सत्व है।

(३७) अप्रमत्त विरत सातवे गुणस्थान का क्या स्वरूप है ?

सज्वलन और नोकपाय के मन्द उदय होने से प्रमाद रहित सयम भाव होते हैं, इस कारण इस गुणस्थानवर्ती मुनि को अप्रमत्तविरत कहते हैं।

(३८) अप्रमत्त विरत गुणस्थान के कितने भेद हैं ?

दो हैं-स्वस्थान अप्रमत्त विरत और सातिशय अप्रमत्त विरत।

(३९) स्वस्थान अप्रमत्त विरत किसको कहते हैं ?

जो हज़ारो वार छटे से सातवे मे और सातवे से छटे गुणस्थान

मे आवे जावे, उसको स्वस्थान अप्रमत्त कहते है।

(४०) सातिशय अप्रमत्त विरत किसको कहते हैं ?

जो श्रेणी चढने के सम्मुख हो उसको सातिशय अप्रमत्त कहते है।

(४१) श्रेणी चढ़ने का पात्र कौन है ?

क्षायिक सम्यग्दृष्टि और द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि ही श्रेणी चढते है। प्रथमोपशम सम्यक्त्व वाला प्रथमोपशम सम्यक्त्व को छोड कर क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि होकर प्रथम ही अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ का विसयोजन करके दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृतियो का उपशम करके या तो द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि हो जाये, अथवा इन तीनो प्रकृतियो का क्षय करके क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जाये, तब श्रेणी चढने का पात्र होता है।

(४२) श्रेणी किसको कहते हैं ?

जहा चारित्र मोहनीय की शेष रही इक्कीस प्रकृतियो का क्रम से उपशम तथा क्षय किया जाये उसको श्रेणी कहते है।

(४३) श्रेणी के कितने भेद है ?

दो—उपशम श्रेणी और क्षपक श्रेणी।

(४४) उपशम श्रेणी किसको कहते हैं ?

जिसमे चारित्र मोहनीय की इक्कीस प्रकृतियो का उपशम किया जाये।

(४५) क्षपक श्रेणी किसको कहते है ?

जिसमे उक्त इक्कीस प्रकृतियो का क्षय किया जाये।

(४६) इन दोनो श्रेणियों में कौन कौन से जीव चढते हैं ?

क्षायिक सम्यग्दृष्टि तो दोनो ही श्रेणी चढता है, और द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि उपशम श्रेणी ही चढता है, क्षपक श्रेणी नही चढता।

(४७) उपशम श्रेणी के कौन कौन गुणस्थान हैं ?

चार है--आठवा, नवमा दशवा, ग्यारहवा।

(४८) क्षपक श्रेणी में कौन से गुणस्थान हैं ?

चार है—आठवा, नवमा, दशवा व बारहवा।

(४९) चारित्र मोहनीय की २१ प्रकृतियों को उपशमावने तथा क्षय करने के लिये आत्मा के कौन से परिणाम निमित्त कारण हैं ?

तीन है—अध:करण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण।

(५०) अध:करण किसको कहते है ?

जिस करण मे (परिणाम समूह मे) उपरितन समयवर्ती तथा अधस्तन समयवर्ती जीवो के परिणाम सदृश तथा विसदृश हो उसको अध करण कहते है। यह अध करण सातवे गुणस्थान मे होता है।

(५१) अपूर्वकरण किसको कहते है ?

जिस करण मे उत्तरोत्तर अपूर्व ही अपूर्व परिणाम होते चले जावे अर्थात् भिन्न समयवर्ती जीवो के परिणाम सदा विसदृश ही हो और एक समयवर्ती जीवो के परिणाम सदृश भी हो, उनको अपूर्वकरण कहते हैं। यही आठवा गुणस्थान है।

(५२) अनिवृत्तिकरण किसको कहते है ?

जिस करण मे भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम विसदृश ही हो और एक समयवर्ती जीवो के परिणाम सदृश ही हो उसको अनिवृत्तिकरण कहते हैं। यही नवमा गुणस्थान है।

(५३) अध:करण का दृष्टान्त क्या है ?

देवदत्त नाम के राजा के ३०७२ आदमी जो कि सोलह महकमो मे बंटे हुए हैं) सेवक है। महकमा न १ मे १६२ है, न० २ में १६६, न० ३ मे १७०, न० ४ मे १७४, न० ५ मे १७८, न० ६ मे १८२, न० ७ मे १८६, न० १९०, न० ९ मे १९४, न० १० मे १९८, न० ११ में २०२, न० १२ मे २०६, न० १३ मे २१०, न० १४ मे २१४, न. १५ मे २१८ और न. १६ मे २२२ आदमी काम करते हैं।

पहले महकमे मे १६२ आदमियो मे से पहले आदमी का वेतन

१), दूसरे का २), तीसरे का ३), इस प्रकार एक एक बढ़ते हुए १६२ वे आदमी का वेतन १६२) है। और महकमे न. २ में १६६ आदमी काम करते है, उनमे से पहिले आदमी का वेतन ४०) है, द्वितीयादि का एक एक रूपया क्रम से बढता हुआ होने से १६६ वे आदमी का वेतन २०५ है। महकमे नं ३ मे १७० आदमी काम करते है, सो उनमे से पहले आदमी का वेतन ८०) है और दूसरे तीसरे आदि आदमियो का एक एक रुपया बढते बढते १७० वे आदमी का वेतन २४१) है। महकमे न० ४ मे १७४ आदमी काम करते है, सो पहले आदमी का वेतन १२६) है और दूसरे आदि का एक एक रुपया बढते बढते १७४ वें आदमी का वेतन २१४) होता है। इसी क्रम से १६ वें महकमे मे जो २२२ नौकर है, उनमे से पहले का वेतन ६६१) है और २२२ वे आदमी का वेतन ६१२) है।

इस दृष्टान्त मे पहिले ३६ आदमियो का वेतन ऊपर के महकमे मे किसी भी आदमी से नही मिलता, तथा आखिर के ५७ आदमियों का वेतन नीचे के महकमे के किसी भी आदमी के साथ नही मिलता है। शेष वेतन ऊपर नीचे के महकमों के वेतनों के साथ यथा सम्भव सदृश भी है, इसी प्रकार यथार्थ मे ऊपर के समय सम्बन्धी परिणामो मे सदृशता यथा सम्भव जाननी। उसका विशेष स्वरूप गोमट्टसारजी के गुणस्थान अधिकार मे तथा छपे हुए सुशीला उपन्यास के २४७ वे पृष्ठ मे लगाकर २६३ वें पृष्ठ तक मे देखना।

(५४) सातवें गुणस्थान में बन्ध कितनी प्रकृतियो का होता है?

छट्टे गुणस्थान मे जो ६३ प्रकृतियों का बन्ध कहा है, उनमे से व्युच्छिन्न प्रकृति ६ के घटाने पर शेष रही ५७ मे आहारक-शरीर और आहारक अगोपाग (जो अबन्ध रूप थी) इन दो प्रकृतियों को मिलाने से ५६ प्रकृतियो का बन्ध होता है।

(५५) सातवें गुणस्थान मे उदय कितनी प्रकृतियों का होता है?

छट्टे गुणस्थान मे जो ८१ प्रकृतियो का उदय कहा है, उनमे से

व्युच्छिन्न प्रकृति पाच के घटाने पर शेष रही ७६ प्रकृतियो का उदय रहता है (व्युच्छिन्न पांच=आहारक शरीर, आहारक अगोपाग, निद्रा निद्रा, प्रचलाप्रचला, और स्त्यानगृद्धि)।

(५६) सातवे गुणस्थान मे सत्व कितनी प्रकृतियों का है ?

छंटे गुणस्थान की तरह इस गुणस्थान में भी १४६ प्रकृतियो की सत्ता रहती है, किन्तु क्षायिक सम्यग्दृष्टि के १३९ का ही सत्व है।

(५७) आठवे गुणस्थान मे बन्ध कितनी प्रकृतियों का होता है ?

सातवे गुणस्थान मे जो ५९ प्रकृतियो का बन्ध कहा है, उस मे से व्युच्छिन्न प्रकृति एक देवायु के घटाने पर शेप रही ५८ का बन्ध होता है।

(५८) आठवें गुणस्थान मे उदय कितनी प्रकृतियो का होता है ?

सातवे गुणस्थान मे जो ७६ प्रकृतियो का उदय कहा है उनमे से व्युच्छिन्न प्रकृति चार घटाने पर शेष रही ७२ प्रकृतियो का उदय होता है। (व्युच्छिन्न चार=सम्यक्त्व प्रकृति, उर्द्ध-नाराच, कीलित, असप्राप्त सृपाटिका सहनन)।

(५९) आठवे गुणस्थान मे सत्व कितनी प्रकृतियों का रहता है ?

सातवे गुणस्थान मे जो १४६ का सत्व कहा है, उनमे से व्युच्छित्ति प्रकृति अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ इन चार को घटाकर द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि उपशम श्रेणी वाले के तो १४२ का सत्व है। किन्तु क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशम श्रेणीवाले के दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृति रहित १३९ का सत्व है, और क्षपक श्रेणीवाले के सातवे गुणस्थान की व्युच्छित्ति प्रकृति आठ घटाकर शेष १३८ प्रकृतियो का सत्व है। व्युच्छित्ति आठ=अनन्तानुबन्धी ४, दर्शनमोहनीय ३, और देवायु १)।

(६०) नवमें अर्थात अनिवृत्तिकरण गुणस्थान मे कितनी प्रकृतियों का बन्ध होता है ?

आठवे गुणस्थान मे जो ५८ प्रकृतियो का बन्ध कहा है, उनमे

से व्युच्छित्ति प्रकृति ३६ को घटाने पर शेष रही २२ प्रकृति का बन्ध होता है। (व्युच्छित्ति की ३६=निद्रा, प्रचला, तीर्थंकर, निर्माण, प्रशस्त विहायोगति, पचेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्माण शरीर, आहारक शरीर, आहारक अगोपाग, समचतुरस्र सस्थान, वैक्रियक शरीर, वैक्रियक अगोपाग, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, रूप. रस, गन्ध, स्पर्श, अगुरुलघुत्व, उपघात, परघात, उच्छ्वास, त्रस, बादर, पर्याप्ति, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, हास्य, रति, जुगुप्सा, भय)।

(६१) नवमे गुणस्थान में उदय कितनी प्रकृतियो का होता है ?

आठवे गुणस्थान मे जो ७२ प्रकृतियों का उदय होता है, उनमें से व्युच्छित्ति प्रकृति ६ को घटाने पर शेष ६६ प्रकृतियो का उदय होता है। (व्युच्छित्ति की ६=हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा)।

(६२) नवमें गुणस्थान में सत्व कितनी प्रकृतियो का होता है ?

आठवे गुणस्थान की तरह इस गुणस्थान मे भी उपशम श्रेणी वाले द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि के १४२, क्षायिक सम्यग्दृष्टि के १३९ और क्षपक श्रेणीवाले के १३५ का ही सत्व है।

(६३) दशवे सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थान का स्वरूप क्या है ?

अत्यन्त सूक्ष्म अवस्था को प्राप्त लोभ कषाय के उदय को अनुभव करते हुए जीव के सूक्ष्म साम्पराय नामका दशवा गुणस्थान होता है।

(६४) दशवे गुणस्थान में बन्ध कितनी प्रकृतियो का होता है ?

नवमे गुणस्थान मे जो २२ प्रकृतियों का बन्ध होता है, उनमे से व्युच्छित्ति प्रकृति पाच को घटाने पर शेष रही १७ प्रकृतियों का बन्ध होता है। (व्युच्छित्ति की पाच=पुरुष वेद, संज्वलन क्रोध मान माया लोभ)।

(६५) दशव गुणस्थान मे उदय कितनी प्रकृतियो का है ?

नवमे गुणस्थान में जो ६६ प्रकृतियो का उदय होता है, उन

मे से व्युच्छित्ति प्रकृति ६ को घटाने पर शेप रही ६० प्रकृतियो का उदय होता है। (व्युच्छित्ति की ६=स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद, सज्वलन क्रोध मान माया)।

(६६) दशवे गुणस्थान मे सत्व कितनी प्रकृतियो का होता है ?

उपशम श्रेणी मे तो नवमे की तरह द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि के १४२ और क्षायिक सम्यग्दृष्टि के १३६। क्षपक श्रेणी वाले के नवमे गुणस्थान मे जो १३८ प्रकृतियो का सत्व है उनमे से व्युच्छित्ति प्रकृति ३६ को घटाने पर शेप रही १०२ प्रकृतियो का सत्व रहता है। (व्युच्छित्ति की ३६=तिर्यंगति, तिर्यंग्गत्यानुपूर्वी, विकलत्रय ३, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, उद्योत, आतप, एकेन्द्रिय, साधारण, सूक्ष्म, स्थावर, अप्रत्याख्यानावरण ४, प्रत्याख्य नावरण ४, नोकषाय ६, सज्वलन क्रोध मान माया, नरक गति, नरक गत्यानुपूर्वी)।

(६७) ग्यारहवे उपशान्तमोह गुणस्थान का क्या स्वरूप है ?

चारित्र मोहनीय की २१ प्रकृतियो के उपशम होने से यथाख्यात चारित्र को धारण करनेवाले मुनि के उपशान्त मोह नामक गुणस्थान होता है। इस गुणस्थान का काल समाप्त होने पर मोहनीय के उदय से जीव निचले गुणस्थानो मे आ जाता है।

(६८) ग्यारहवे गुणस्थान मे बन्ध कितनी प्रकृतियो का होता है ?

दशवें गुणस्थान मे जो १७ प्रकृतियो का बन्ध होता था, उनमे से व्युच्छित्ति प्रकृति १६ अर्थात ज्ञानावरणीय की ५, दर्शनावरणीय की ४, अन्तराय की ५, यशस्कीर्ति व उच्चगोत्र इन सबको घटा देने पर शेष रही एकमात्र साता वेदनीय का बन्ध होता है।

(६९) ग्यारहवे गुणस्थान में उदय कितनी प्रकृतियों का होता है ?

दशवे गुणस्थान मे जो ६० प्रकृतियो का उदय होता है, उनमे से व्युच्छित्ति प्रकृति एक सज्वलन लोभ को घटा देने पर शेष रही ५९ प्रकृतियो का उदय रहता है।

(७०) ग्यारहवे गुणस्थान मे सत्व कितनी प्रकृतियो का रहता है ?

नवमे और दशवें गुणस्थानकी तरह द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि के १४२ और क्षायिक सम्यग्दृष्टि के १३६ का सत्त्व है। (क्षपक श्रेणी यहा होती नही)।

(७१) क्षीणमोह नामक बारहवे गुणस्थान का स्वरूप क्या है ?

मोहनीय कर्म के अत्यन्त क्षय होने से स्फटिक भाजनगत जल की तरह अत्यन्त निर्मल अविनाशी यथाख्यात चारित्र के धारक मुनि के क्षीणमोह नामक गुणस्थान होता है ।

(७२) बारहवे गुणस्थान मे बन्ध कितनी प्रकृतियों का होता है ?

एक साता वेदनीय मात्र का बन्ध होता है।

(७३) बारहवे गुणस्थान मे उदय कितनी प्रकृतियों का होता है ?

ग्यारहवे गुणस्थान मे जो ५६ प्रकृतियो का उदय होता है, उनमे से वज्रनाराच और नाराच सहनन इन दो व्युच्छित्ति प्रकृतियो को घटा देने पर ५७ प्रकृतियो का उदय होता है।

(७४) बारहवे गुणस्थान मे सत्व कितनी प्रकृतियों का रहता है ?

(यहा केवल एक क्षपक श्रेणी ही सम्भव है) दशवे गुणस्थान मे क्षपक श्रेणीवाले की अपेक्षा १०२ प्रकृतियो का सत्व है। उन मे से व्युच्छित्ति प्रकृति सज्वलन लोभ को घटा देने पर शेष रही १०१ प्रकृतियो का सत्व रहता है।

(७५) सयोग केवली नामक तेरहवे गुणस्थान का स्वरूप क्या है और वह किसके होता है ?

घातिया कर्मो की ४७ (देखो अध्याय ३, अधिकार १) और अघातिया कर्मो की १६ (नरकगति, नरक गत्यानुपूर्वी, विकल-त्रय ३, आयुत्रिक ३, उद्योत, आतप, एकेन्द्रिय, साधारण, सूक्ष्म, स्थावर) ये मिलकर ६३ प्रकृतियो का क्षय होने से लोकालोक प्रकाशक केवलज्ञान तथा मनोयोग, वचनयोग, काययोग के धारक अर्हन्त भट्टारक के सयोग केवली नामक तेरहवा गुणस्थान होता है। यही केवली भगवान अपनी दिव्यध्वनि से भव्य

जीवो को मोक्षमार्ग का उपदेश देकर ससार मे मोक्षमार्ग का प्रकाश करते है।

(७६) तेरहवे गुणस्थान मे बन्ध कितनी प्रकृतियो का होता है ?

एक मात्र साता वेदनीय का बन्ध होता है।

(७७) तेरहवे गुणस्थान में उदय कितनी प्रकृतियो का होता है ?

बारहवे गुणस्थान मे जो ५७ प्रकृतियो का उदय होता है, उनमे से व्युच्छित्ति प्रकृति १६ को घटा देने पर शेष रही ४१ प्रकृतियो मे तीर्थंकर की अपेक्षा से एक तीर्थंकर प्रकृति (जो अनुदय रूप थी) को मिलाने से ४२ प्रकृतियो का उदय होता है। (व्यच्छित्ति की १६=ज्ञानावरण ५, दर्शनावरणीय ४, अतराय ५, निद्रा और प्रचला)।

(७८) तेरहवे गुणस्थान मे सत्व कितनी प्रकृतियो का होता है ?

बारहवे गुणस्थान मे जो १०१ प्रकृतियो का सत्व है, उनमे से व्युच्छित्ति प्रकृति १६ को घटा देने पर शेष ८५ प्रकृतियो का सत्व रहता है। (व्युच्छित्ति की १६=ज्ञानावरणीय ५, दर्शनावरणीय ४, अन्तराय ५, निद्रा और प्रचला)।

(७९) अयोग केवली गुणस्थान का स्वरूप क्या है, और वह किसके होता है ?

मन वचन काय के योगो से रहित केवलज्ञान सहित अर्हन्त भट्टारक के चौदहवा गुणस्थान होता है। इस गुणस्थान का काल अ, इ, उ, ऋ, लृ इन पाच ह्रस्व स्वरो के उच्चारण करने के बराबर है। अपने गुणस्थान के काल के द्विचरम समय मे सत्ता की ८५ प्रकृतियो मे से ७२ प्रकृतियो का और चरम समय मे १३ प्रकृतियो का नाश करके अर्हन्त भगवान मोक्षधाम (सिद्धाशिला) को पधारते है।

(८०) चौदहवे गुणस्थान मे वन्ध कितनी प्रकृतियों का होता है ?

तेरहवे गुणस्थान मे जो एक सातावेदनीय का वन्ध होता था, उसकी उसी गुणस्थान मे व्युच्छित्ति हो जाने से यहा किसी भी प्रकृति का बन्ध नही होता।

(८१) चौदहवें गुणस्थान मे उदय कितनी प्रकृतियों का होता है ?
तेरहवे गुणस्थान मे जो ४२ प्रकृतियों का उदय होता है, उनमें से व्युच्छित्ति प्रकृति ३० को घटाने पर शेप रही १२ प्रकृतियों का उदय होता है। (व्युच्छित्ति की ३०=असाता वेदनीय, वज्रर्पभ नाराच सहनन, निर्माण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुस्वर, दु स्वर, प्रशस्त विहायोगत्ति, अप्रशस्त विहायोगति, औदारिक शरीर, औदारिक अगोपाग, तैजस शरीर, कार्माण शरीर, समचतुरस्र, न्यग्रोध, स्वाति, कुब्जक, वामन, हुंडक सस्थान, स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छवास, प्रत्येक), (शेप १२ प्रकृतिया=साता वेदनीय, मनुष्यगति, मनुष्यायु, पचेन्द्रिय जाति, सुभग, त्रस, बादर, पर्याप्त, आदेय, यश कीर्ति, तीर्थंकर, उच्चगोत्र)

(८२) चौदहवे गुणस्थान में सत्व कितनी प्रकृतियो का रहता है ?
तेरहवे गुणस्थान की तरह इस गुणस्थान मे भी ८५ प्रकृतियो का सत्त्व है, परन्तु द्विचरम समय मे ७२ और अन्तिम समय मे १३ प्रकृतियों का सत्व नष्ट करके अर्हन्त भगवान मोक्ष पधारते है।

प्रश्नावली

अध्याय स्वय प्रश्नावली है।

षष्टम् अध्याय

(तत्वार्थ)

१ नव पदार्थाधिकार

---

१. तत्व किसको कहते हैं ?

द्रव्य के भाव या स्वभाव को तत्व कहते है ।

२ द्रव्य व तत्व में क्या अन्तर है ?

द्रव्य तो स्वभाव व गुणो का आश्रय है और तत्व उसके आश्रित है । द्रव्य मे प्रदेशात्मक क्षेत्र प्रधान है और तत्व मे भावात्मक गुण प्रधान है ।

३. पदार्थ किसको कहते हैं ?

द्रव्य गुण, पर्याय, अथवा उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, अथवा सामान्य विशेष; अथवा द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव इन सभी से पृथक पृथक भी पदार्थ कहा जा सकता है और इकट्ठा करके इन सबके एक अखण्ड रूप को भी पदार्थ कहा जा सकता है । अत 'पदार्थ' शब्द अति व्यापक है ।

४ वस्तु किसको कहते हैं ?

जो अपने प्रयोजनभूत कार्य को सिद्ध करने वाली हो उसको वस्तु कहते है । जैसे गोत्व नाम की सामान्य जाति स्वय अवस्तु है, क्योकि उससे दूध दूहने रूप प्रयोजन की सिद्धि नही होती है; और 'गौ' नाम का पशु वस्तु है, क्योकि उससे वह प्रयोजन सिद्ध होता है ।

५ तत्व कितने है ?

सात हैं—जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, सवर, निर्जरा, मोक्ष ।

६ जीव तत्व किसको कहते है ?

ज्ञान दर्शन आदि चेतनात्मक गुणो का समूह जीव द्रव्य ही जीव तत्व है ।

७. अजीव तत्व किसको कहते हैं ?

जीव से अतिरिक्त पुद्गलादि शेष पाच द्रव्य ही अजीव तत्व है । अथवा जो न स्वय अपने को जाने न दूसरे को, ऐसे सर्व पदार्थ अजीव है, भले ही वे द्रव्य हो गुण हो या पर्याय । इस प्रकार अजीव द्रव्य तो अजीव है, ही, जीव के ज्ञान दर्शन-आदिक प्रकाश स्वभावी गुणो के अतिरिक्त राग द्वेपादि सभी विकारी गुण या भाव व उसकी प्रदेशात्मक आकृति भी अजीव है । यह कथन भेद विवक्षा से है सर्वथा नही ।

८ आस्रव किसको कहते है ?

आने के द्वार को आस्रव तत्व कहते है, अर्थात जीव मे कर्मों के आने को आस्रव कहते है ।

९ कर्म कितने प्रकार के होते है ?

तीन प्रकार के—भाव कर्म, द्रव्य कर्म, नोकर्म ।

१० भावकर्म किसको कहते हैं ?

जीव के रागद्वेषादि मोहजनित परिणामो को भावकर्म कहते हैं

११. द्रव्य कर्म किसको कहते है ?

उपरोक्त भाव कर्मो के निमित्त से कार्माण वर्गणा रूप जो पुद्गल स्कन्ध ज्ञानावरणीय आदि अष्ट कर्म रूप से परिणत होकर जीव के साथ वन्ध को प्राप्त होता है, वह द्रव्य कर्म है ।

१२. नोकर्म किसको कहते है ?

उपरोक्त भाव कर्म के निमित्त से ही आहारक वर्गणा रूप जो यह स्थूल शरीर अथवा जगत के सभी दृष्ट पुद्गल स्कन्ध नोकर्म हैं, क्योकि वे सभी किसी न किसी के शरीर ही हैं या थे ।

१३. तीनो प्रकार के ये कर्म जीव हैं या अजीव ?

द्रव्य कर्म व नोकर्म तो पुद्गल वर्गणा जनित होने से अजीव है

ही, पर भाव कर्म भी स्व पर को जानने मे असमर्थ होने से अजीव ही हैं।

१४ आस्रव कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—भावास्रव और द्रव्यास्रव।

१५. भावास्रव किसको कहते हैं ?

जीव के जिन परिणामो के निमित्त से द्रव्य कर्मो का आगमन जीव के प्रदेशो मे हो जायें उन परिणामो को भावास्रव कहते है।

१६ भावास्रव रूप जीव के परिणाम कौन से हैं ?

तीन है—मन, वचन, व काय की क्रियाये या योग।

१७. द्रव्यास्रव किसको कहते हैं ?

भावास्रव के निमित्त से जो द्रव्य कर्मों का आगमन होता है, उसे द्रव्यास्रव कहते है।

१८ बन्ध तत्व किसको कहते हैं ?

कर्मो का जीव के प्रदेशो के साथ सश्लेप सम्वन्ध को प्राप्त हो जाना वन्ध है।

१९. बन्ध कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—भाव बन्ध व द्रव्य बन्ध।

२०. भाव बन्ध किसको कहते हैं ?

जीव के जिन रागादि भाव कर्मो या परिणामो के निमित्त से द्रव्य कर्म जीव के प्रदेशो से वन्धते है, उन परिणामो को भाव वन्ध कहते है अथवा जीव के उन सस्कारो या वासनाओ को भाववन्ध कहते है जिनके कारण उसे रागद्वेषादि करने की प्रेरणा मिलती है।

२१ भाव बन्ध रूप जीव के परिणाम कौन से हैं ?

पांच है—मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय व योग। (इन सबका विस्तृत कथन पहले किया जा चुका है)

२२. **द्रव्य बन्ध किसको कहते हैं ?**
भाव बन्ध के निमित्त से जो द्रव्य कर्मो का जीव प्रदेशो के साथ बन्धान होता है, वह द्रव्यबन्ध है ।

२३ **द्रव्य बन्ध मे कितने विकल्प होते है ?**
चार—प्रकृति, स्थिति, अनुभाग व प्रदेश ।
(विस्तार के लिये देखो अध्याय ३ अधिकार १)

२४ **संवर तत्व किसको कहते है ?**
कर्मो के आगमन का द्वार रुक जाना अर्थात आस्रव का निरोध सवर है ।

२५ **संवर तत्व कितने प्रकार का है ?**
दो प्रकार का—भाव सवर, द्रव्य सवर ।

२६ **भाव संवर किसको कहते हैं ?**
जीव के जिन परिणामो से कर्मो का आस्रव रुक जाये उन परिणामों को भाव सवर कहते है ।

२७ **भाव संवर रूप जीव के परिणाम कौन से हैं ?**
आठ प्रकार के है—सम्यग्दर्शन, व्रत, समिति, गुप्ति, धर्म, अनुप्रक्षा, परीषह जय व चारित्र ।

२८ **द्रव्य संवर किसको कहते हैं ?**
भाव सवर के निमित्त से द्रव्य कर्मों के नवीन आगमन का रुक जाना द्रव्य सवर है ।

२९. **निर्जरा तत्व किसको कहते है ?**
पूर्ववद्ध कर्मो का जीव प्रदेशो से धीरे धीरे पृथक होना या झड़ जाना निर्जरा कहलाता है ।

३०. **निर्जरा कितने प्रकार की होती है ?**
दो प्रकार की—भाव निर्जरा व द्रव्य निर्जरा ।

३१ **भाव निर्जरा किसको कहते हैं ?**
जीव के जिन परिणामो के निमित्त से पूर्ववद्ध कर्म झडते हैं, या सस्कारक्षीण होते है उन्हे भाव निर्जरा कहते हैं ।

३२. भाव निर्जरा रूप जीव के परिणाम कौन से है ?
तप सहित भाव सवर वाले परिणाम ही निर्जरा रूप है।

३३ तप किसको कहते हैं ?
इच्छा का निरोध करना तप है, अथवा अत्यन्त प्रतिकूल व विपम स्थितियो मे, उपसर्गो तथा परीपहो मे सम रहना ही आत्मा का प्रताप होने से तप है।

३४ तप कितने प्रकार का होता है ?
दो प्रकार का—वाह्य तप और अभ्यन्तर तप।

३५. वाह्य तप किसको कहते है और कितने प्रकार का है ?
जिसका सम्वन्ध शरीर से हो उसे बाह्य तप या द्रव्य तप कहते है। वह छ प्रकार का होता है—अनशन, ऊनोदर, वृत्ति-परिसख्यान, रस परित्याग, विविक्त शय्यासन और कायक्लेश।

३६ अभ्यन्तर तप किसको कहते हैं और कितने प्रकार का है ?
जिसका सम्बन्ध आत्मा के चेतन परिणामो या भावो से हो उसे अभ्यन्तर तप या भाव तप कहते हैं। वह छ प्रकार का है—प्रायश्चित, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग (कायोत्सर्ग), ध्यान।

३७ द्रव्य निर्जरा किसको कहते है ?
भाव निर्जरा रूप तप के निमित्त से द्रव्य कर्मों का आत्म प्रदेशो से झगडा द्रव्य निर्जरा है।

३८ द्रव्य निर्जरा कितने प्रकार की होती है ?
दो प्रकार की—सविपाक व अविपाक।

३९ सविपाक अविपाक निर्जरा किसे कहते हैं ?
अपने अपने समय पर क्रम पूर्वक कर्मो मे उदय आआ कर झडना सविपाक निर्जरा है; और तप द्वारा कर्मो को काल से पहले ही पकाकर उदीरणा से झाड देना अविपाक निर्जरा है।

४०. सविपाक अविपाक निर्जरा मे कौन प्रयोजनीय है ?
सवर युक्त तथा साक्षात मोक्ष का कारण होने से अविपाक

निर्जरा प्रयोजनीय है। सविपाक निर्जरा के साथ नवीन बन्ध होता रहने से वह मोक्षमार्ग मे प्रयोजनीय नही है।

४१ सविपाक व अविपाक निर्जरा किनको होती हैं ?
स्वकालपाक होने से सविपाक निर्जरा सर्व जीवो को सामान्य रूप से होती रहती है; और तप साध्य होने से अविपाक निर्जरा तपस्वी योगियो व साधको को ही होती है।

४२ मोक्ष तत्व किसको कहते हैं ?
कर्मो के सम्पूर्णतया छूट जाने को मोक्ष कहते है।

४३ मोक्ष कितने प्रकार की होती है ?
दो प्रकार की—भाव मोक्ष, द्रव्य मोक्ष।

४४ भाव मोक्ष किसको कहते है ?
जीव के रागद्वेषादि भाव कर्मो से या वासनाओ से मुक्त हो जाने को भाव मोक्ष कहते है। इसे जीवन मुक्ति भी कहते है।

४५ द्रव्य मोक्ष किसको कहते है ?
भाव मोक्ष के निमित्त से द्रव्य कर्म व नोकर्म का जीव से पृथक हो जाना द्रव्य मोक्ष है। इसे विदेह मुक्ति भी कहते है।

४६. द्रव्य व भाव मोक्ष किनको होती है ?
भाव मोक्ष तेरहवें गुणस्थानवर्ती अर्हंत भगवान को होती है और द्रव्य मोक्ष चौदहवें गुणस्थान के अन्त मे सिद्ध लोक मे जा विराजने वाले सिद्ध भगवन्तो को होती है।

४७ पदार्थ कितने है ?
नौ है—सात तो उपरोक्त तत्व तथा पुण्य, पाप।

४८ पुण्य किसको कहते है ?
शुभ कर्म को पुण्य कहते है।

४९ पुण्य कितने प्रकार का होता है ?
दो प्रकार का—भाव-पुण्य और द्रव्य पुण्य।

५० भाव पुण्य किसे कहते है ?
जीव की मन वचन काय की शुभ प्रवृत्ति को भाव पुण्य कहते है।

५१ भाव पुण्य रूप वह शुभ प्रवृत्ति कैसी होती है ?

दया, दान, शील, सयम, तप, उपवास, पूजा, भक्ति आदि अनेक प्रकार की है ।

५२ द्रव्य पुण्य किसको कहते है ?

भाव पुण्य के निमित्त से बन्धने वाली द्रव्य कर्मों की प्रशस्त प्रकृतिये द्रव्य पुण्य कहलाती है । (देखो अध्याय ३)

५३ पाप किसको कहते हैं ?

अशुभ कर्म को पाप कहते है ।

५४ पाप कितने प्रकार का है ?

दो प्रकार का—भाव पाप व द्रव्य पाप ।

५५. भाव पाप किसको कहते हैं ?

जीव के मन वचन व काय की अशुभ प्रवृत्ति को भाव पाप कहते है ।

५६ भाव पाप रूप वह अशुभ प्रवृत्ति कौन सी है ?

पाच है—हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह ।

५७. द्रव्य पाप किसको कहते हैं ?

भाव पाप के निमित्त से बन्धने वाली द्रव्य कर्मों की अप्रशस्त प्रकृतियें द्रव्य पाप कहलाती हैं । (देखो अध्याय ३)

५८ सातो तत्वो मे पुण्य पाप क्यों नहीं कहा ?

वहा इनको आस्रव व बन्ध तत्वो मे गर्भित कर दिया गया है ।

५९ तत्व व पदार्थ मे क्या अन्तर है ?

कोई विशेष अन्तर नही; केवल पुण्य पाप की विशेषता बताने के लिये सात तत्वो मे पुण्य पाप का पृथक से ग्रहण कर लिया गया है ।

६० पुण्य पाप को पृथक से दर्शाने की क्या आवश्यकता है ?

क्योकि पुण्य व पाप ही इस लोक मे सर्वत्र प्रधान है ।

६१ जीव व अजीव ये दोनो पदार्थ द्रव्य के भेदों मे भी गिनाए गए और तत्वों मे भी ।

द्रव्य के प्रकरण मे जीव व अजीव का अर्थ प्रदेशात्मक आकृति

वाले जीव व अजीव विवक्षित जो कि अपने अपने गुणो के आश्रयभूत है, और तत्वो के प्रकरण मे भावात्मक जीव व अजीव विवक्षित है। द्रव्य के प्रकरण मे राग द्वेषादि जीव रूप है और तत्व के प्रकरण मे वही अजीव रूप है।

६२ आस्रवादि तत्वों के भाव व द्रव्य दो भेद करने का क्या प्रयोजन है ?

आस्रवादि जीव रूप भी होते है और अजीव रूप भी यही बताने के लिये।

६३. आस्रवादि सर्व तत्व जीव व अजीव रूप कैसे होते है ?

सात तत्वों मे पहिले दो जीव व अजीव मूल तत्व होने से सामान्य है। इन दोनो के सयोग व वियोग के कारण ही अगले पाच तत्व अथवा सात पदार्थ बन जाते है। इस लिये वे सब इन्ही दोनो के विशेष या पर्याय है। तहा भावास्रव, भावबन्ध, भाव सवर, भाव निर्जरा, भाव मोक्ष, भावपुण्य और भाव पाप तो जीव के विशेष है, और द्रव्य आस्रवादि सब अजीव के विशेष है।

६४. आस्रवादि स्वयं जीव व अजीव के विशेष होने से जीव व अजीव दो ही तत्व कहना पर्याप्त था ?

यह कोई दोष नही है। यहाँ मोक्ष मार्ग के प्रकरण मे जीव व अजीव की जिन विशेषताओ को जानना अत्यन्त प्रयोजनीय है, उनको दर्शाने के लिये ही वे विशेष पृथक से ग्रहण किये गये हैं। सक्षेप से कहने पर तो ही दो ही तत्व है—जीव व अजीव।

६५ इन सात तत्वों की सत्ता किसमे पाई जाती है ?

जीव व पुद्गल इन दो द्रव्यो मे पाई जाती है।

६६. जीव मे सात तत्वो की सत्ता कैसे पाई जाती है ?

मैं चेतन लक्षण अन्तस्तत्व जीव हूँ। यह शरीर तथा इसके साधक बाधक सब वहिर्तत्व अजीव है। यद्यपि धन धान्यादि सभी वहि तत्व अजीव हैं, फिर भी इनमे मेरे तेरे पने की अथवा

है, यही बन्ध तत्व है। जीव के निर्मल परिणामो रूप भाव सवर के निमित्त से उनका आगमन रुक जाता है, जिससे कर्म सग्रह की वृद्धि रुक जाती है, यही सवर तत्व है। तत्पश्चात जीव के भाव निर्जरा रूप तप के प्रभाव से सचित पूर्व कर्म भी अपने काल से पहिले ही उदय आ आकर झड़ने लगते है, यही निर्जरा तत्व है। अन्त में जीव के भावमोक्ष के निमित्त से समस्त कर्म व शरीर भी पूर्णरूपेण उस जीव का साथ छोडकर अपने अपने कारणो मे लय हो जाते है, यही मोक्ष तत्व है। इस प्रकार सातो तत्वो के द्रव्यात्मक विकल्प अजीव तत्व मे घटित होते है।

२ रत्नत्रयाधिकार

(१ धर्म)

१ **धर्म किसको कहते हैं ?**

जो ससार के जीवो को दु खो से निकालकर उत्तम जो मोक्ष सुख उसमे धरदे, उसे धर्म कहते है, अथवा वस्तु के स्वभाव को धर्म कहते है।

२. **धर्म के दोनो लक्षणो का समन्वय करो।**

'वस्तु' शब्द से यहा आत्मा नामक वस्तु का ग्रहण करने पर उसका स्वभाव सच्चिदानन्द है। चिदानन्द की प्राप्ति ही मोक्ष शब्द वाच्य है। उसे प्राप्त करने के उपाय को धर्म कहते हैं।

३ **आनन्द या मोक्ष की प्राप्ति का उपाय क्या है ?**

रत्नत्रय।

४ **रत्नत्रय किसको कहते हैं ?**

सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यग्चारित्र को रत्नत्रय कहते है।

(२. सम्यग्दर्शन)

५ **दर्शन किसको कहते है ?**

श्रद्धा, रुचि या प्रतीति रूप अन्तरग के सामान्य अवलोकन को दर्शन कहते है।

६. **दर्शन कितने प्रकार का होता है !**

दो प्रकार का—सम्यक् व मिथ्या।

७ मिथ्यादर्शन किसको कहते है ?
तत्वो की या आत्मा के स्वरूप की विपरीत श्रद्धा या प्रतीति अथवा धारणा मिथ्यादर्शन है।

८. विपरीत श्रद्धा से क्या तात्पर्य ?
शरीर को ही अपना स्वरूप समझते हुए, इसी के जन्म मरण को अपना जन्म मरण अथवा इसी की साधक बाधक बाह्य साधन सामग्री को अपनी साधक बाधक मानना विपरीत श्रद्धा है।

९ सम्यग्दर्शन किसको कहते है ?
सातो तत्वो मे अथवा आत्मा के स्वरूप मे सच्ची श्रद्धा को सम्यग्दर्शन कहते है।

१० सच्ची श्रद्धा से क्या समझे ?
मैं चेतन स्वरूप अमूर्तीक व अविनाशी आत्मा हू, शरीर नही। शरीर के जन्म मरण आदि से मेरा जन्म मरण नही होता। शरीर के सुख दुख या विघ्न बाधा से मुझे सुख दुख या विघ्न बाधा नही होती। शरीर की प्रत्येक अवस्था मे मैं तो नित्य टकोत्कीर्ण एक मात्र ज्ञायक भाव से स्थित रहता हूँ। ऐसी दृढता को सच्ची श्रद्धा कहते है।

११. सम्यग्दर्शन कितने प्रकार का है ?
दो प्रकार का—निश्चय व व्यवहार।

१२ व्यवहार सम्यग्दर्शन किसको कहते है ?
सच्चे वीतरागी देव, तन्मुख विनिर्गत उपदेश व तन्मार्गानुगामी वीतरागी गुरु पर एकनिष्ठ श्रद्धा व भक्ति को अथवा पूर्वोक्त सात तत्वो पर दृढ आस्था को व्यवहार सम्यग्दर्शन कहते है।

१३ निश्चय सम्यग्दर्शन किसको कहते है ?
शुद्धात्म की दृष्टि, अभिप्राय, रुचि, प्रतीति व श्रद्धा का होना निश्चय सम्यग्दर्शन है।

१४ सम्यग्दर्शन के निश्चय व्यवहार भेदों का क्या प्रयोजन ?
देव गुरु आदि के ससर्ग अथवा सात तत्वो मे स्व पर का या

हेयोपादेय का भेद करके कथन किया गया है इसलिये व्यवहार है, और अखण्ड व निर्विकल्प एक आत्म तत्व का कथन किया गया है, इसलिये निश्चय/पहला पराश्रय जनित विकल्प होने से व्यवहार और दूसरा निज स्वरूप होने से निश्चय है।

१५. शास्त्रों में निश्चय सम्यग्दर्शन पर ही जोर क्यो दिया गया ?

क्योकि स्व स्वरूप होने से साक्षात रूप से मोक्षमार्ग मे वही कार्यकारी है।

१६ फिर व्यवहार सम्यग्दर्शन की आवश्यकता ही क्या थी ?

क्योकि व्यवहार के विना निश्चय सम्यग्दर्शन व प्राथमिक जनों को वताया जा सकता, न अभ्यास मे लाकर प्राप्त किया जा सकता है। व्यवहार सम्यग्दर्शन साधन है और निश्चय साध्य।

१७. दोनों सम्यग्दर्शनो में साधन साध्य भाव क्या है ?

प्राथमिक अनिष्णात व्यक्ति को पहले स्थूल रूप से मन्दिर में आने तथा देव शास्त्र व गुरु की अन्धश्रद्धा करने के लिये कहा जाता है। उन पर आस्था टिक जाने के पश्चात शास्त्र पढकर सात तत्व समझने के लिये कहा जाता है। सात तत्वो का शाब्दिक अर्थ समझ लेने के पश्चात उनका रहस्यार्थ ग्रहण करने को कहा जाता है, अर्थात उन्हे अपने जीवन मे खोजकर उनका स्व-पर विभाग देखने को कहा जाता है। स्व-पर का विवेक हो जाने पर ही वह स्वानुभव करने को सफल हो सकता है अन्यथा नही। इस प्रकार व्यवहार सम्यग्दर्शन के तीनो लक्षण उत्तरोत्तर एक दूसरे के साधन होते हुए अन्त मे निश्चय सम्यग्दर्शन को उत्पन्न करते है।

१८. आगम मे सम्यग्दर्शन के कितने लक्षण प्रसिद्ध हैं ?

चार लक्षण प्रसिद्ध है—

(क) सच्चे देव शास्त्र व गुरु पर दृढ श्रद्धा होना।

(ख) सात तत्वो या नव पदार्थो का श्रद्धान।

(ग) स्व-पर भेद विज्ञान या स्व-पर मे विवेक।

(घ) स्वानुभव या आत्म प्रतीति।

१९ सम्यग्दर्शन के चारों लक्षणों का समन्वय करो।

सच्चा देव शुद्ध क्षायिक भाव होने से मोक्ष स्वरूप है, सच्चे गुरु आस्रव बन्ध का निरोध तथा संवर निर्जरा की प्रतिमूर्ति है। शस्त्र रत्नत्रयरूप सच्चे धर्म का अधिष्ठान है। 'सच्चा धर्म' अजीव, आस्रव, बन्धन इन तत्वो से हटकर, जीव, संवर निर्जरा इन तीन तत्वो की ओर झुकने का नाम है। उसका फल मोक्ष है। अत सच्चे देव शास्त्र व गुरु की श्रद्धा व सात तत्वो की श्रद्धा एक ही बात है।

सात तत्वो मे जीव, संवर, निर्जरा व मोक्ष ये चार तत्व आत्म स्वभाव के अनुकूल तथा अन्तर्प्रकाश वर्धक होने से स्वतत्व है, और अजीव, आस्रव व बन्ध ये तीन तत्व आत्मस्वभाव से विपरीत तथा अन्दर मे अन्धकार वर्धक होने से पर-तत्व है। अत सप्रतत्व श्रद्धा व स्व-पर भेद विज्ञान एक ही है।

स्व-पर भेद विज्ञान का प्रयोजन पर से हटकर स्व मे लगना है। वही स्वानुभव का साक्षात उपाय है। अत. ये दोनो भी एक ही है।

२० सम्यग्दर्शन की व्याख्या में कितने शब्दों का प्रयोग किया जाता है?

पाच शब्दो का—दृष्टि, अभिप्राय, रुचि, प्रतीति, श्रद्धा।

२१ दृष्टि किसको कहते हैं?

व्यक्ति के लक्ष्य विशेष को दृष्टि कहते हैं। जिस प्रकार बम्बई जाने वाले का लक्ष्य 'बम्बई' है, बीच के स्टेशन नही; उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि का लक्ष्य नित्य टकोत्कीर्ण शुद्धात्मा रूप एक मात्र ज्ञायक भाव है, शरीर अथवा अन्य कोई भी प्रयोजन नही। इसके अतिरिक्त उसकी दृष्टि मे सब कुछ असत् है।

२२. अभिप्राय किसको कहते हैं?

कोई कार्य करने मे व्यक्ति का जो प्रयोजन होता है, उसे अभि-

प्राय कहते है। जिस प्रकार खेती करने मे किसान का अभिप्राय धान्य प्राप्ति है, भूसा नही, भले ही भूसा स्वतः प्राप्त हो जाये उसी प्रकार प्रत्येक धार्मिक क्रिया करने मे सम्यग्दृष्टि का प्रयोजन ज्ञायक भाव की प्रतीति करना है, पुण्यादि नही, भले ही पुण्य स्वत प्राप्त हो जाये।

२३ रुचि किसको कहते हैं?

अन्तरग से कोई कार्य विशेष करने की प्रेरणा को रुचि कहते हैं। जिस बात की रुचि होती है, उसके लिये अवश्य ही भरसक प्रयत्न किया जाता है। जिस प्रकार लौकिक व्यक्तियो को धन कमाने की रुचि है और इसलिये वे उसे प्राप्त करने को नित्य अथक परिश्रम करते है; उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि को शुद्धात्म-प्राप्ति की या ज्ञाय भाव निष्ठा की रुचि है और इसलिये वह उसे प्राप्त करने को नित्य अथक परिश्रम व तपश्चरण करता है।

२४ प्रतीति किसको कहते हैं?

अन्तरग मे अनुभव करने को प्रतीति कहते है। अनुभव भी इसी का नाम है। जिस प्रकार किसान को हरा भरा खेत देखकर हर्ष की प्रतीति होती है, उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि को आत्मदर्शन मे अपूर्व आल्हाद व आनन्द की प्रतीति होती है। उसे ही शुद्धात्मानुभूति आत्मदर्शन कहा जाता है।

२५ श्रद्धा किसको कहते हैं?

'यह ही वात ठीक है, यह तीन काल में भी अन्यथा हो नही सकती' ऐसी दृढ आस्था को श्रद्धा कहते हैं। जिस प्रकार लौकिक व्यक्तियो को 'विपय भोगो मे ही सुख है' ऐसी श्रद्धा होती है, उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि को 'शुद्ध ज्ञायक भाव ही स्वयं आनन्द स्वरूप है, उसे आनन्द या सुख के लिये किसी भी वाह्य विपय का आश्रय लेने की आवश्यकता नहीं' ऐसी श्रद्धा होती है।

२६. दृष्टि, अभिप्राय, रुचि, प्रतीति व श्रद्धा इन पांचों का समन्वय करो।

जिस ओर लक्ष्य या दृष्टि होती है, उसी को प्राप्त करने की रुचि होती है, उसी की प्राप्ति के अभिप्राय से यथा योग्य व्यापार या क्रिया की जाती है। जैसी क्रिया की जाती है उसके फल स्वरूप वैसी ही प्रतीति होती है, और उसी पर दृढ श्रद्धा होती है। इस प्रकार ये पांचो उत्तरोत्तर एक दूसरे के पूरक है।

२७ सम्यग्दर्शन के प्रकरण में दृष्टि आदि पांचों का महत्व क्या है ?

किसी व्यक्ति को सम्यग्दर्शन है यह बात तब कही जा सकती है जबकि उसकी दृष्टि या लक्ष्य एकमात्र शुद्धात्मा पर हो, उसके अतिरिक्त सब कुछ असत् भासता हो। रुचि भी उसेउसी परमतत्व को प्राप्त करने की हो, शुद्धात्मा की प्राप्ति के अभिप्राय से यथाशक्ति कुछ न कुछ आचरण भी अवश्य करता हो, अन्तरग मे शुद्धात्मा की साक्षात प्रतीति भी कदाचित होती हो, और 'यही शुद्धात्मा का स्वरूप तथा उसकी प्राप्ति का उपाय है, अन्य नही' ऐसी दृढ आस्था हो।

२८. दृष्टि रुचि आदि पांचों की परीक्षा किस बात से होती है ?

व्यक्ति की मन वचन काय की क्रियाओ व आचरण पर से होती है। किसी व्यक्ति का आचरण भोग विलास मे फसा हुआ हो अथवा स्वच्छन्दाचारी हो और मन मे समझता रहे कि मुझे शुद्धात्मा की रुचि है तो उसका भ्रम है।

२९. भगवान व सम्यग्दृष्टि में किसका सम्यग्दर्शन बड़ा है ?

सम्यग्दर्शन एक सामान्य गुण है। इसमे तरतमता नही होती, चारित्र मे होती है। जिस प्रकार गरीब व अमीर सभी व्यक्तियो मे धन की रुचि समान है, भले ही उनके पास धन हीन हो या अधिक, उसी प्रकार भगवान व साधारण सम्यग्दृष्टियो मे आत्मा की रुचि समान है, भले उनमे स्थिरता व तत्कृत आनन्द अधिक व हीन हो।

३०. इसे सम्यग्श्रद्धा की बजाये सम्यग्दर्शन क्यों कहा ?
सम्यग्दर्शन का विषय आत्मा का सामान्य प्रतिभास है, यह बताने के लिये 'दर्शन' शब्द का प्रयोग ही युक्त है। श्रद्धा कहने से अतिव्याप्ति होने का भय है, क्योकि लोक मे सभी व्यक्तियो को कोई न कोई श्रद्धा तो है ही।

३१. सम्यग्दर्शन की पहचान कैसे हो ?
सम्यग्दर्शन के आठ अगो पर से सम्यग्दर्शन की पहचान होती है।

३२. सम्यग्दर्शन के आठ अंग कौन से हैं ?
नि शकित, निष्काक्षित, निर्विचिकित्सा, अमूढदृष्टि, उपगूहन या उपवृहेण, स्थितिकरण, वात्सल्य, प्रभावना।

३३. निःशंकित अंग किसको कहते हैं ?
तत्वो में सशय या शका न करना, तथा अपने अखण्ड ज्ञायक स्वरूप पर निश्चल श्रद्धा रखते हुए जन्म मरण रोग आदि के भय न करना। उनमे पहिला व्यवहार नि शकित गुण है और दूसरा निश्चय।

३४ निष्कांक्षित गुण किसको कहते है ?
इस लोक तथा परलोक सम्बन्धी भोगो की आकाक्षा न करना व्यवहार है; तथा निज स्वरूप के अतिरिक्त सब कुछ असत् दीखना निश्चय है।

३५ निर्विचिकित्सा गुण किसको कहते हैं ?
धर्मी जीवो व साधुओं का शरीर प्रारब्धवश अत्यन्त ग्लानि युक्त हो जाने पर भी उनसे घृणा न करना बल्कि उनकी सेवा को सदा उद्यत रहना व्यवहार है, और वस्तु स्वरूप पर लक्ष्य टिकाने के कारण किसी भी पदार्थ से ग्लानि न करना निश्चय है।

३६. अमढ़ दृष्टि किसको कहते हैं ?
लौकिक चमत्कारों को देखकर, अथवा भय लज्जा गौरव या अन्य किसी कारण से वीतराग मार्ग के अतिरिक्त अन्य मार्ग

की ओर न झुकना व्यवहार है, और वस्तु के नित्य टकोत्कीर्ण स्वभाव के अतिरिक्त सभी असत् पदार्थों की इच्छा न करना निश्चय है।

३७ **उपगूहन या उपवृहेण गुण किसको कहते हैं ?**
दूसरे के दोष छिपाना व गुण प्रगट करना, इसके विपरीत अपने गुण छिपाना व दोष प्रगट करना उपगूहन गुण या व्यवहार है। अपने आन्तरिक स्वभाव के प्रति अधिकाधिक बहुमान जागृत करके उसमे अधिकाधिक निष्ठ होते जाना उपवृहेण या निश्चय है।

३८ **स्थितिकरण गुण किसको कहते हैं ?**
किसी कारणवश कोई व्यक्ति वीतराग धर्म से गिरता हो तो तन मन धन से उसकी सहायता करके उसे धर्म पर टिकाना व्यवहार है, और कर्मोदयवश कुछ दोष लग जाने पर स्वयं को पुन: प्रायश्चित्तादि लेकर सन्मार्ग मे टिकाना निश्चय है। अथवा उपयोग को पुनः पुन बाहर से लौटाकर अन्तस्तत्व में स्थित करना निश्चय है।

३६ **वात्सल्य गुण किसको कहते हैं ?**
अन्य सम्यग्दृष्टि या धर्मात्मा व्यक्ति को देखकर अन्दर से हृदय खिल उठना व्यवहार है और निज शुद्धस्वरूप का साक्षात दर्शन होने पर अपने को कृतकृत्य मानना निश्चय है।

४० **प्रभावना गुण किसको कहते है ?**
जिस किसी प्रकार भी वीतराग धर्म का प्रचार व प्रसार करना व्यवहार है; और निज शुद्धात्मानुभूति जनित आनन्द से सदा स्वय प्रभावित रहते हुए अन्य किसी भी पदार्थ के प्रभाव मे न आना निश्चय है।

४१ **'मैं तो धर्म शका नहीं करूंगा अथवा पुण्य की आकांक्षा नहीं करूंगा' इस प्रकार कृत्रिम गुणो को पालने वाला सम्यग्दृष्टि है या मिथ्यादृष्टि ?**
वह मिथ्यादृष्टि है, क्योकि भले ही बाहर मे प्रगट न करे

परन्तु उसके अन्तरग मे तो शका व आकाक्षा है ही।

४२ सम्यग्दृष्टि की कुछ अन्य भी पिछान है क्या?

प्रशम, सवेग, अनुकम्पा व आस्तिक्य ये चार गुण भी सम्यग्दृष्टि मे सहज होते है।

४३. प्रशम आदि गुण कैसे होते हैं?

कपायो की अति मन्दता प्रशम गुण है, ससार व भोगो से डर लगना सवेग अथवा भोगो से विरक्त रहना निर्वेद है, दुखियों को देखकर स्वय हृदय आद्रित हो जाना अनुकम्पा है तथा निज अन्तस्तत्व के अस्तित्व का निश्चय रहना आस्तिक्य है।

४४ कृत्रिम रूप से इन आठ या चार गुणों को प्रगट करने के लिये जो धर्मियों की सेवा अथवा प्रभावना आदि करता है, वह क्या हैं?

वह मिथ्यादृष्टि है, क्योकि उसे कृत्रिमता करनी पडती है।

४५ ये सभी गुण सम्यग्दृष्टि में किस प्रकार होते है?

उसमें ये गुण स्वाभाविक होते है, कृत्रिम नही। सम्यग्दृष्टि का ऐसा स्वभाव सहज ही होता है और इसलिये विना किये ही उसमे ये सब लक्षण प्रगट रहते है।

४६. क्या ये गुण मिथ्यादृष्टि मे नहीं होते?

मिथ्यादृष्टि मे भी कदाचित इनमे से एक दो अथवा सारे ही होने सम्भव है, परन्तु प्राय करके अविकल रूप से सम्यग्दृष्टि मे ही पाये जाते है।

४७ तब सम्यग्दृष्टि व सम्यग्दृष्टि की क्या विशेषता?

ये सब गुण व्यवहार लक्षण है, इसलिये इनके द्वारा सम्यक्त्व की ठीक पिछान नही होती। उसकी यथार्थ पिछान तो आनन्दानुभूति है और स्वय उसे ही होती है परीक्षक को नही। अत परीक्षक के लिये तो इन व्यवहार लक्षणो पर से अनुमान लगाना ही एक मात्र उपाय है।

(३ सम्यग्ज्ञान)

४८ सम्यग्ज्ञान किसको कहते हैं ?

शुद्धात्मा के विशेष प्रतिभास को, अथवा सात तत्वो के विशेप परिज्ञान को सम्यग्ज्ञान कहते है।

४९ सम्यग्दर्शन व सम्यग्ज्ञान में क्या अन्तर है ?

सामान्य व विशेष का अन्तर है। जैसे दर्शनोपयोग सामान्य प्रतिभास है और 'ज्ञानोपयोग' विशेष प्रतिभास है वैसे ही सम्यग्दर्शन का विषय शुद्धात्मा तथा सात तत्वो का सामान्य स्वरूप है और सम्यग्ज्ञान का विषय उन्ही का विशेष ग्रहण है।

५०. क्या ज्ञान भी सम्यक् व मिथ्या होता है ?

वास्तव मे ज्ञान कभी सम्यक् मिथ्या नही होता। अभिप्राय के सम्यक् व मिथ्यापने मे वह सम्यक् व मिथ्या कहाता है।

५१. सम्यग्दृष्टि ने अन्धेरे में रस्सी को सांप समझा और मिथ्या दृष्टि ने उसे रस्सी ही समझा। किसका ज्ञान सम्यक् ?

ज्ञान तो सम्यग्दृष्टि का ही सम्यक् है, क्योंकि यहा मोक्ष मार्ग मे शुद्धात्मा का ज्ञान ही इष्ट है। अन्य विषयो को जानो अथवा न जानो, ठीक जानो या विपरीत जानो, हीन जानो या अधिक जानो उससे सम्यग्ज्ञान का सम्बन्ध नही। सम्यग्दृष्टि रस्सी को सर्प जानता हुआ भी अपने शुद्ध स्वरूप को उससे सर्वथा अस्पृष्ट समझता रहता है और मिथ्यादृष्टि रस्सी को रस्सी जानता हुआ भी उसे अपने लिये इष्ट अनिष्ट समझता है।

५२. सम्यग्ज्ञान के साथ सम्यग्दर्शन का क्या सम्बन्ध है ?

सम्यग्दर्शन प्रगट होने पर अभिप्राय ठीक हो जाने के कारण पहले वाला ज्ञान ही सम्यक् सज्ञा को प्राप्त हो जाता है, कोई नया ज्ञान उत्पन्न नही होता।

५३ सम्यग्दर्शन व सम्यग्ज्ञान मे पहले कौन होता है ?

दोनो युगपत होते है, क्योकि सम्यग्दर्शन हो जाने पर ज्ञान का विशेषण ही बदलता है, उसकी तरतमता मे अन्तर नही पडता।

५४. जो वस्तु जानी जा चुकी है उसी की श्रद्धा की जाती है, इसलिए सम्यग्ज्ञान पूर्वक सम्यग्दर्शन होना चाहिये।

यह बात ठीक है कि सम्यग्दर्शन से पहिले सात तत्वो का ज्ञान होना आवश्यक है, परन्तु वह ज्ञान उस समय तक सम्यक् विशेषण को प्राप्त नही होता जब तक कि सम्यग्दर्शन न हो जाये। इसीलिये उनकी उत्पत्ति युगपत बताई है।

५५. सम्यग्ज्ञान कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—व्यवहार व निश्चय।

५६ व्यवहार सम्यग्ज्ञान किसको कहते है ?

शास्त्रो के शाब्दिक ज्ञान को द्रव्य या व्यवहार सम्यग्ज्ञान कहते है।

५७ निश्चय सम्यग्ज्ञान किसको कहते हैं ?

शास्त्रो के वाच्य उस रहस्यात्मक शुद्धात्म तत्व का साक्षात ज्ञान हो जाना भाव या निश्चय सम्यग्ज्ञान है।

५८. व्यवहार व निश्चय सम्यग्ज्ञान का समन्वय करो।

प्रतिपादन की अपेक्षा ही दोनो मे भेद है, स्वरूप की अपेक्षा नही। शास्त्र का आश्रय लेकर कहा गया है इसलिये व्यवहार और वाच्यभूत पदार्थाकार ज्ञान को ही ज्ञान कहा गया है इसलिये निश्चय है।

५९. दोनों मे सच्चा कौन ?

वास्तव मे निश्चय ज्ञान ही सच्चा है, क्योकि व्यवहार ज्ञान तो शाब्दिक है।

६० फिर व्यवहार को ज्ञान क्यों कहा ?

बिना व्यवहार ज्ञान के अर्थात बिना शास्त्र पढे सुने निश्चय भावात्मक ज्ञान सम्भव नही, इसलिये व्यवहार ज्ञान साधन है और निश्चय साध्य।

६१ शास्त्र ज्ञान प्राप्त करने का क्या उपाय ?

सम्यग्ज्ञान के आठ अगो का पालन करने से शास्त्र ज्ञान सुलभ हो जाता है।

६२ सम्यग्ज्ञान के आठ अग कौन से है ?

१ व्यञ्जनोर्जित अग, २ अर्थ समग्राग, ३ तदुभय समग्राग ३ कालाचाराग, ४ उपाधानाचाराग, ६ विनयाचार, ७ अनिह्लवाचार, ८ बहुमानाचार ।

६३. व्यञ्जनोर्जित अंग किसको कहते है ?

स्वर, व्यञ्जन व मात्राओ आदि का शुद्ध उच्चारण करना ।

६४. अर्थ समग्रांग किसको कहते है ?

शास्त्र की आवृत्ति मात्र न करके उसका अर्थ समझकर पढना ।

६५ तदुभय समग्रांग किसको कहते हैं ?

अर्थ समझते हुए शुद्ध उच्चारण सहित पढना ।

६६ कालाचारांग किसको कहते है ?

शास्त्र पढने के योग्य काल मे ही पढना अयोग्य काल में नही । सवेर, साझ व रात्रि के सन्धि कालो मे, सूर्य चन्द्र ग्रहण मे अथवा विद्रोह आदि के अवसर पर शास्त्र पढना वर्जित है । सूर्योदय, सूर्यास्त, मध्यान्ह व मध्यरात्रि ये चार सन्धि काल है क्योकि इनमे पूर्व दिन व उत्तर दिन का अथवा पूर्व रात्रि व उत्तर रात्रि का अथवा रात्रि व दिन का अथवा दिन व रात्रि का सयोग होता है ।

६७. उपाधानांग किसको कहते है ?

शास्त्र पढते हुए किसी से भी बात न करना, अथवा शास्त्र के अतिरिक्त अन्य लौकिक बाते न करना ।

६८ अनिह्लवांग किसको कहते हैं ?

जिस गुरु से शास्त्र पढा हो उसका नाम कभी न छिपाना, भले आगे जाकर गुरु से भी अधिक ज्ञान क्यो न बढ जाये ।

६९ बहुमानांग किसको कहते है ?

ज्ञान के प्रति बहुमान व भक्ति रखना । ज्ञान प्राप्ति को अपना बडा भारी सौभाग्य मानना ।

(४. सम्यग्चारित्र)

७० सम्यग्चारित्र किसको कहते हैं ?

शुद्धात्मा की प्राप्ति के लिय प्रवृत्ति या व्यापार करने को सम्यक्चारित्र कहते है ।

७१. प्रवृत्ति या व्यापार से क्या समझे ?

मन वचन व काय की क्रियाओ को प्रवृत्ति या व्यापार कहते है ।

७२ सम्यग्चारित्र कितने प्रकार का है ?

दो प्रकार का—व्यवहार व निश्चय ।

७३ व्यवहार सम्यक्चारित्र किसको कहते हैं ?

अशुभ प्रवृत्ति से हटकर शुभ प्रवृत्ति करना व्यवहार चारित्र है ।

७४ अशुभ प्रवृत्ति किसको कहते हैं ?

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह सचय आदि पाप तथा क्रोधादि कषाय सब अशुभ प्रवृत्ति है ।

७५ शुभ प्रवृत्ति किसको कहते हैं ?

व्रत, शील, सयमादि धारण करना, सत्य बोलना, दया दान सेवा करना, सच्चे देव शास्त्र गुरु की विनय भक्ति पूजा आदि करना शुभ है ।

७६ निश्चय चारित्र किसको कहते है ?

बाह्य क्रिया अर्थात पापो के निरोध से अथवा अभ्यन्तर क्रिया अर्थात योग व कषायो के निरोध से आविर्भूत आत्मा की शुद्धि विशेष निश्चय चारित्र है । इसी को साम्यता, माध्यस्थता व वीतरागता कहते हैं । अथवा शुद्धात्मध्यान मे रत रहना निश्चय चारित्र है ।

७७ शुद्धात्मा के ध्यान से क्या होता है ?

निराकुलता होती है और वही स्वाभाविक आनन्द है ।

७८. चारित्र को निश्चय व व्यवहार विशेषण क्यों दिये गए ?

निश्चय अभेद या अद्वैत को कहते हैं और व्यवहार भेद या द्वैत को। ध्यान मे जीव की प्रवृत्ति निर्विकल्प तथा आत्म-स्वरूप निमग्न होने के कारण अद्वैत है। इसलिये वह निश्चय कहलाती है। व्रतादि मे जीव की प्रवृत्ति व्रतादि धारने के तथा यत्नाचार रखने के विकल्पों सहित होती है। इसी कारण आत्म स्वरूप बाह्य होने से द्वैत रूप है। अतः वह व्यवहार कहलाती है।

७९. फिर निश्चय चारित्र [illegible] चाहिये व्यवहार से क्या ?

व्यवहार चरित्र के बिना प्रारम्भ मे ही निश्चय चारित्र सम्भव नही, इसलिये व्यवहार चारित्र साधन है और निश्चय चारित्र साध्य।

८० व्यवहार चारित्र निश्चय का साधन कैसे है ?

इच्छाये व कषाये दूर किये बिना निर्मल आत्मा का ध्यान व अनुभव नही हो सकता। इच्छाये व कषाये विषय भोगों के त्याग बिना रुक नही सकती। विषय भोग वैराग्य बिना त्यागे नही जा सकते। वैराग्य प्राप्ति के अभ्यासार्थ वीतराग देव शास्त्र गुरु का आश्रय भक्ति सेवा आदि करना तथा उनके उपदेश आदि सुनना आवश्यक है। इसलिये व्यवहार चारित्र निश्चय का साधन है।

८१ चारित्र कितने प्रकार का है ?

चार का प्रकार है—स्वरूपाचरण चारित्र, देशचारित्र, सकल चारित्र, यथाख्यात चारित्र।

८२ इन चार चारित्रो में निश्चय चारित्रो कौन सा है ?

यथाख्यात चारित्र निश्चय चारित्र है।

८३ स्वरूपाचरण भी तो निश्चय चारित्र है ?

स्वरूपाचरण सामान्य है और यथाख्यात उसका विशेष। स्वरूपाचरण के पूर्व विकास का नाम ही यथाख्यात है।

८४. **क्या स्वरूपावरण भी पूर्ण व अपूर्ण होता है ?**
हाँ, क्योकि सामान्य अपने विशेषों को छोड़कर नही वर्तता। चौथे गुण स्थान मे इसका सर्वप्रथम प्रारम्भिक अश प्रगट होता है, जो अत्यन्त तुच्छ शक्ति वाला है। गुण स्थान परिपाटी के अनुसार उत्तरोत्तर वृद्धिगत होता हुआ अन्त मे कषायो के सर्वथा अभाव हो जाने पर १२ वे गुण स्थान मे पूर्ण व्यक्त हो जाता है।

८५ **क्या चारित्र प्राप्त करने मे कोई क्रम पडता है ?**
हा, सम्यग्दर्शन तो एक दम हो जाता है परन्तु चारित्र मे गुण स्थान का क्रम पड़ता है; क्योकि यह धीरे-धीरे वृद्धि को पाता हुआ वृक्षवत् बहुत काल पश्चात् पूर्णता को प्राप्त होता है।

८६ **चारित्र की पूर्णता का क्या क्रम है ?**
सम्यग्दर्शन प्रगट हो जाने पर जीव पहले गुण-स्थान से एकदम चौथे गुणस्थान को प्राप्त हो जाता है अर्थात मिथ्या दृष्टि से एकदम सम्यग्दृष्टि हो जाता है। यहा उसको चारित्र का अत्यन्त तुच्छ अश प्रगट होता है। अव्रत सम्यग्दृष्टि का यह चारित्र व्रतादि रूप परिणत न होने के कारण बाहर मे व्यक्त नही हो पाता। वह अन्दर ही अन्दर भोगो आदि से हटकर व्रत आदि धारने की भावना करता रहता है। गृहस्थ के कारण लौकिक व्यापार व्यवहार करने मे जो उसके द्वारा नित्य पाप होते है अथवा कषाय जागृत होती हैं, उनके लिये वह अन्दर ही अन्दर अपने को धिक्कारता रहता है, अपनी निन्दा करता रहता है। यही स्वरूपाचरण का प्रारम्भिक अश है क्योकि बिना स्वरूप के प्रति झुके दोषो की यथार्थ प्रतीति सम्भव नही। ऐसा यह प्रारम्भिक अन्तरग चारित्र सम्यग्दर्शन के साथ ही साथ उत्पन्न हो जाता है अर्थात उसका अविनाभावी है।

आगे दिनों दिन वैराग्य का अश वढते रहने से वह पचम गुण-

स्थान मे पदार्पण करता है, जिसमे वह अणुव्रत आदि रूप से श्रावक का देश चारित्र ग्रहण कर लेता है। अन्तरग मे सामायिक व ध्यान द्वारा स्वरूप मे किंचित स्थिरता का अभ्यास करके उसे पहले वाले स्वरूपाचरण चारित्र का सिञ्चन करता रहता है। यहाँ आकर उसके स्थूल लक्षण कुछ कुछ व्यक्त होते है।

वैराग्य और भी बढ जाने पर समस्त परिग्रह को छोडकर नग्न दिगम्बर यथाजात रूप धर छटे गुणस्थान मे प्रवेश करता है। बाहर का समस्त त्याग हो-जाने से महाव्रत रूप सफल चारित्र नाम पाता है। अन्तरग मे वह स्वरूप स्थिरता रूप साम्यतामे अधिकाधिक टिके रहने का प्रयत्न करता है। कदाचित निर्विकल्पता का अनुभव करने लगता है तब सातवाँ गुणस्थान कहलाता है। पुनः धर्मोपदेश आ जाने पर पुन छठा गुण स्थान कहलाता है। इस प्रकार हजारो बार छटे से सातवे मे और सातवे से छटे आता हुआ उतार चढाव के झूले मे झूलता रहता है।

कदाचित चित्त स्थिर हो जाये तो उसे चारित्र की श्रेणी पर चढा हुआ कहा जाता है। यहाँ वुद्धि पूर्वक कोई भी राग या विकल्पादिक नही होते, फिर भी अन्दर मे अबुद्धि पूर्वक विकल्प आते जाते रहते है। स्वरूपाचरण की इस अत्यन्त वृद्धिगत अवस्था का नाम शुक्ल ध्यान है। इस श्रेणी के अन्तर्गत तीन गुणस्थान है - आठवॉ, नवमाँ, व दशवाँ। इन तीनो गुण-स्थानो मे उत्तरोत्तर अवुद्धिपूर्वक वाले विकल्प भी नष्ट होते जाते है और साथ-साथ स्वरूपाचरण (स्वरूप स्थिति) वढता जाता है। दशवे गुणस्थान के अन्त मे सूक्ष्मातिसूक्ष्म विकल्प या राग भी नि शेष हो जाता है।

अव वह ग्यारहवें व बारहवे गुणस्थान को प्राप्त हो जाता है, जहाँ उसमे स्वरूपाचरण के परिपूर्ण अंश प्रगट होते है, यही

यथाख्यात सज्ञा को धारण कर लेता है। इस प्रकार चारित्र पूरा होने मे एक लम्बा क्रम है, जिसके बीच मे साधक को पूजा, भक्ति, शील, सयम, तप, उपवास, सामायिक ध्यान आदि अनेक बातों का अभ्यास व प्रवृत्ति करनी पड़ती है।

८७ **व्यवहार व निश्चय चारित्र का समन्वय करो।**

व्यवहार चारित्र बाह्य की व्रतादि शुभ क्रियाओ को कहते है और निश्चय चारित्र अन्तरग के स्वरूपाचरण को। इन दोनो की दो अवस्थाये होती है—एक मिथ्यादृष्टि मे, दूसरी सम्यग्दृष्टि मे। मिथ्यादृष्टि मे तो पहिले शुष्क व्यवहार क्रियायें होती है, पीछे उसके निमित्त से कदाचित विरक्त चित्त हो जाये तो सम्यक्त्व प्राप्त हो जाता है, अथवा नही भी होता है। सम्यक्त्व होने से पहिले वह चारित्र आगामी समीचीनता की सम्भावना के उपचार से सम्यक्चारित्र कहा जाता है, वास्तव मे वह मिथ्या ही है।

सम्यग्दृष्टि को ये दोनो चारित्र युगपत प्रारम्भ होते है, परन्तु इनकी पूर्णता आगे पीछे क्रम से होती है। पहले पहल व्यवहार चारित्र का अश बहुत अधिक होता है और निश्चय का अत्यन्त अल्प। ऊपर की भूमिकाओ मे व्यवहार का बाह्य विकल्पात्म अंश घटता जाता है और निश्चय का अन्तरग साम्यता वाला अश बढता जाता है। जैसा कि ऊपर वाले प्रश्न मे दर्शाया जा चुका है। अन्त मे जाकर निश्चय चारित्र पूर्ण हो जाता है और विकल्पात्मक व्यवहार चारित्र इसी मे लीन होकर रह जाता है।

८८ **देश चारित्र के कितने अंग हैं ?**

बारह—पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षा व्रत।

८९. **सकल चारित्र के कितने अंग हैं ?**

तेरह—पांच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति।

(५ रत्नत्रय सामान्य)

९० रत्नत्रय किसको कहते हैं ?
सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र को रत्नत्रय कहते हैं।

९१ इन तीनों को रत्न क्यों कहा ?
क्योंकि रत्नवत अत्यन्त दुर्लभ मूल्यवान व इष्ट है।

९२ रत्नत्रय कितने प्रकार का होता है ?
दो प्रकार का—व्यवहार व निश्चय।

९३ व्यवहार रत्नत्रय किसको कहते हैं ?
व्यवहार सम्यग्दर्शन, व्यवहार सम्यग्ज्ञान व व्यवहार सम्यक्-चारित्र को द्वैत या भेद होने के कारण व्यवहार रत्नत्रय कहते है।

९४ निश्चय रत्नत्रय किसको कहते हैं ?
शुद्धात्मा की श्रद्धा, उस ही का परिज्ञान और उस ही मे स्थिर चित्तवाली अत्यन्त निष्ठा; एक अद्वैत व अखण्ड रूप होने के कारण निश्चय रत्नत्रय कहलाता है।

९५ व्यवहार रत्नत्रय किसको होता है ?
सम्यग्दर्शन प्रगट होने के पश्चात से साधु होने तक अर्थात चौथे गुणस्थान से छठे सातवें गुणस्थान तक व्यवहार रत्नत्रय होता है, क्योंकि इन भूमिकाओ मे अभेद व निर्विकल्प ध्यान नही होता।

९६ निश्चय रत्नत्रय किनको होता है ?
आठवे से दशवें गुणस्थान तक शुक्लध्यानी साधुओं को निश्चय रत्नत्रय होता है, और आगे सिद्धावस्था पर्यन्त भी वही बना रहता है।

९७ रत्नत्रय में कौन प्रधान है ?
वैसे तो तीनो ही अपने अपने स्थान पर प्रधान है; फिर भी अपेक्षावश सम्यग्दर्शन ही प्रधान माना गया है।

९८ सम्यग्दर्शन को प्रधानता क्यों ?
सम्यग्दर्शन के बिना बडे बडे विद्वानों का शास्त्रज्ञान भी

मिथ्याज्ञान, वड़े-वडे साधुओ का सफल चारित्र मिथ्याचारित्र और वडे-वडे तपस्वियो का तप मिथ्या तप है।

९९ सम्यग्दर्शन के विना सब कुछ मिथ्या क्यों ?

सम्यग्दर्शन के अभाव मे शुद्धात्मा का भावात्मक साक्षात परिचय नही होता। इसलिये ज्ञान का लक्ष्य व अभिप्राय केवल शाब्दिक शास्त्रज्ञान तथा तत्सम्वन्धी चर्यायें मात्र ही रहता है। इसी प्रकार चारित्र तथा तप का भी लक्ष्य व अभिप्राय केवल शरीर सम्बन्धी वाह्य क्रियायें अथवा वाद विषयो का हठ पूर्वक त्याग करना मात्र रहता है। अन्तरग आत्मा का स्पर्श नही हो पाता, और उसके अभाव में वह स्वाभाविक आनन्द से वञ्चित ही रहता है।

१०० प्रधान होने से सम्यग्दर्शन की प्राप्ति का उद्यम ही प्रयोजनीय है। ज्ञान व चारित्र से हमें क्या लेना है ?

ऐसा नही है क्योकि विना सात तत्वो का विशेषज्ञान किये सम्यग्दर्शन व ध्यान होता नही और विना ध्यान के आनन्द प्राप्त होता नही। इसलिये अपने अपने स्थान पर सभी को प्रधान समझना। किसी एक का भी अभाव कर देने पर शेष दो की स्थिति रह नही सकती। ये नाम मात्र को तीन है वास्तव मे एक ही हैं।

१०१. तीन होते हुए भी एक क्यों ?

क्योकि तीनों एक साथ रहते है। यदि वास्तव मे सम्यग्दर्शन है तो सम्यग्ज्ञान व सम्यग्चारित्र अवश्यभावी है, भले ही कम क्यो न हो; जैसे बिना टहनी पत्तो के वृक्ष होता नही।

१०२ ये तीनो युगपत होते है या आगे पीछे ?

चौथे गुणस्थान मे युगपत उत्पन्न होते है, परन्तु इनकी पूर्ति क्रम से होती हैं। सबसे पहिले चौथे से सातवे के अन्त तक सम्यग्दर्शन पूर्ण होता है, फिर तेरहवे गुण स्थान मे सम्यग्ज्ञान पूर्ण होता है और चौदहवे के अन्त मे सम्यग्चारित्र पूर्ण होता है।

१०३ सम्यक्चारित्र १२ वें गुणस्थान में पूर्ण होता है ?
भावात्मक चारित्रपूर्ण हो जाने पर भी योग शेष रहने से चारित्र अपूर्ण माना जाता है।

१०४ अविरत सम्यग्दृष्टि को केवल सम्यग्दर्शन है चारित्र नहीं ?
ऐसा नही है। वह सर्वथा अविरत नही होता, उसे भी सम्यक्त्वाचरण या चारित्र अवश्य होता है और जैसा कि पहले बताया गया है वह स्वरूपाचरण का अश ही है। अपनी लौकिक प्रवृत्ति के प्रति निन्दन गर्हण तथा व्रतादि धारण की उत्तरोत्तर दृढ भावना उसे निरन्तर बनी रहती है। यही उसका चारित्र है, क्योकि यदि ये न हो तो वह आगे सच्चा त्याग वैराग्य कर नही सकता।

सप्तम अध्याय

(स्याद्वाद)

७/१ वस्तु स्वरूपाधिकार

(सामान्य विशेष)

१ सामान्य किसको कहते हैं ?

अनेकता मे रहने वाली एकता को सामान्य कहते है, जैसे अनेक मनुष्यो मे एक मनुष्यत्व ।

२ सामान्य कितने प्रकार का है ?

दो प्रकार का—तिर्यग्सामान्य और ऊर्ध्वता सामान्य ।

३ तिर्यग्सामान्य किसको कहते हैं ?

एक समयवर्ती अनेक पदार्थो मे रहनेवाली एकता को तिर्यग्-सामान्य कहते है, जैसे अनेक मनुष्यो मे एक मनुष्यत्व ।

४. उर्ध्वता सामान्य किसको कहते हैं ?

एक पदार्थ की भिन्न समयवर्ती अनेक पर्यायो मे रहने वाली एकता को उर्ध्वता सामान्य कहते है; जैसे दूध, दही, छाछ, घी, आदि पर्याय मे एक गोरसत्व ।

५ विशेष किसको कहते हैं ?

एकता मे रहने वाली अनेकता को विशेष कहते है । जैसे मनुष्य जाति कहने पर अनेक मनुष्यों का ग्रहण होता है ।

६ विशेष कितने प्रकार का है ?

दो प्रकार का—व्यतिरेकी विशेष और पर्याय विशेष ।

७ व्यतिरेकी विशेष किसको कहते हैं ?

एक जाति में रहने वाले अनेक व्यक्तियों को व्यतिरेकी विशेष

कहते है; जंमे एक मनुष्यत्व जाति मे अनेक मनुष्य।

८ व्यतिरेक किसको कहते हैं ?
प्रदेशो की पृथकता को व्यतिरेक कहते है।

९. पर्याय किसको कहते है ?
प्रदेशो से अपृथ रहने वाले द्रव्य के विशेष को पर्याय कहते है।

१० पर्याय रूप विशेष कितने प्रकार का है।
दो प्रकार का—सहभावी पर्याय और क्रमभावी पर्याय।

११ सहभावी पर्याय किसको कहते हैं ?
द्रव्य के अनेक गुण उसके सहभावी पर्याय या सहभावी विशेष है, क्योकि वे द्रव्य मे एक साथ रहते है, जैसे जीव मे ज्ञान दर्शन आदि।

१२ क्रमभावी पर्याय किसको कहते हैं ?
द्रव्य व गुण की उत्पन्नध्वसी अवस्था में उसके क्रम भावी पर्याय या क्रमभावी विशेष हैं, क्योकि आगे पीछे होती है; जैसे सुख दुख आदि।

१३. सामान्य व विशेष कहां रहते हैं ?
पदार्थ मे।

१४ क्या पदार्थ में इनकी सत्ता पृथक्-पृथक है ?
नही, एकमेक है। अर्थात पदार्थ सामान्य-विशेपात्मक ही होता है। जो पदार्थ सामान्य रूप है वही विशेप रूप है।

१५ सामान्य व विशेप दोनों विरोधी वातें एक साथ कैसे रहें ?
ये परस्पर विरोधी नही है वल्कि एक ही पदार्थ के दो धर्म है। वास्तव में विशेप से रहित सामान्य या सामान्य से रहित विशेष अवस्तुभूत कल्पना मात्र है। जैसे कि द्रव्य से पृथक गुण कोरी कल्पना है।

१६ सामान्य और विशेष में अविरोध को सिद्धि करो।
(क) जो यह जाति रूप तिर्यक् सामान्य है वह अपने व्यक्तियो रूप व्यतिरेकी विशेपो में अनुगत हुआ ही देखा जा सकता है, उससे पृथक नही, जैसे मनुष्यत्व मनुष्यो में

अनुगत हुआ ही देखा जाता है, उनसे पृथक नही।

(ख) जो यह गुणो का समूह रूप एक सामान्य द्रव्य है, वह अपने गुणो रूप सहभावी विशेषो मे अनुगत हुआ ही देखा जाता है, उनसे पृथक नही। जैसे–जीव द्रव्य ज्ञानादि गुणो मे अनुगत ही सत् है उनसे पृथक नही।

(ग) जो यह ऊर्ध्वता सामान्य रूप एक द्रव्य है वह अपनी पर्यायो रूप क्रमभावी विशेषो मे अनुगत हुआ ही देखा जाता है, उनसे पृथक नही। जैसे कि गो रस नाम का द्रव्य, दूध, दही, छाछ, घी आदि मे अनुगत ही है, इनसे पृथक नही।

१७. सामान्य व विशेष मे किसका प्रत्यक्ष होता है ?

प्रत्यक्ष केवल विशेष का हुआ करता है, सामान्य का नही। जैसे—प्रत्यक्ष मनुष्यो का ही होता है मनुष्यत्व का नही, दूध दही आदि का ही होता है। गोरस का नही।

१८ तव सामान्य को कैसे जाना जाये ?

अनुमान से जाना जाता है। विशेष कार्यरूप है और सामान्य कारण रूप। 'कारण हो तो कार्य हो अथवा न भी हो, पर कार्य से तो उसका कारण अवश्य होना चाहिये' ऐसे तर्क पर से उसका अनुमान होता है। जैसे—यदि मनुष्यत्व रूप सामान्य जाति न होती तो मनुष्य किसको कहते ? अथवा यदि गोरस न होता तो दूध दही आदि कहां से आते।

१९ सामान्य का प्रत्यक्ष क्यों नही होता ?

क्योकि विशेषो से पृथक उसकी कोई स्वतन्त्र सत्ता नही है। जैसे—योद्धाओ हाथियो व घोडो आदि से पृथक सेना नामका कोई सत्ताभूत पदार्थ नही है। योद्धाओ आदि को देखकर ही 'यह सेना है' ऐसा सामान्य जाना जाता है और व्यवहार मे आता है। उनसे पृथक सेना नाम के पदार्थ की सत्ता नही जिसका कि प्रत्यक्ष किया जा सके।

(२ स्व चतुष्टय)

२०. पदार्थ मे सामान्य विशेष किस रूप मे देखे जाते हैं ?
स्वरूप चतुष्टय के रूप मे ।

२१ स्वरूप चतुष्टय किसका कहते है ?
द्रव्य के स्वभाविक चार अशो को स्वरूप चतुष्टय कहते हैं।

२२. स्वरूप चतुष्टय कौन से है ?
चार है—द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव ।

२३ द्रव्य किसको कहते है ?
गुण व पर्यायो के आश्रय या आधार को द्रव्य कहते है ।

२४ क्षेत्र किसको कहते है ?
द्रव्य के प्रदेशो को अथवा उसके आकार को द्रव्य का स्वक्षेत्र कहते है ।

२५. काल किसको कहते हैं ?
द्रव्य व गुण की अपनी अपनी पर्याय उस उसका स्वकाल है ।

२६. स्वभाव किसको कहते है ?
द्रव्य के गुणो को उसका स्व-भाव कहते है ।

२७ चतुष्टय के कारण द्रव्य के चार खण्ड हो जायेगे ?
नही होगा, क्योकि ये चार विकल्प केवल द्रव्य को विशेष प्रकार से जानने के लिये है, उसका विभाग करने के लिये नही । ज्ञान द्वारा द्रव्य मे चार विशेप देखे जा सकते हैं ।

२८ द्रव्य की सिद्धि मे इन चार बातो का क्या स्थान ?
द्रव्य अवश्य प्रदेशात्मक कुछ होना चाहिये, अन्यथा उसमे गुण अथवा पर्याय आश्रय नही पा सकती और गुण पर्याय के अभाव में उसकी सिद्धि नही हो सकती । द्रव्य अवश्य पर्यायात्मक होना चाहिये अन्यथा उसमे अर्थ क्रिया नहीं हो सकती, और अर्थ क्रिया के अभाव मे उसकी सिद्धि नही हो सकती । द्रव्य अवश्य गुणात्मक होना चाहिये अन्यथा उसका कुछ भी स्वभाव नहीं हो सकता और स्वभाव के अभाव मे उसकी सिद्धि नही हो सकती । इन्ही चार विकल्पो से उसके द्रव्य क्षेत्र काल व भाव जाने जाते है ।

२९ द्रव्य गुण व पर्याय में इस चतुष्टय का क्या स्थान है ?
द्रव्य मे क्षेत्र प्रधान है, क्योकि वह आश्रय या आधार है। गुण मे भाव प्रधान है, क्योकि वह उसका स्वभाव है। पर्याय मे काल प्रधान है, क्योकि वह आगे पीछे उत्पन्न व नष्ट होती रहती है।

३०. स्व-चतुष्टय किस लिये बताये जाते है।
पदार्थ मे सामान्य व विशेष धर्मो की स्पष्ट प्रतिपत्ति के लिये।

३१. स्व चतुष्टय मे परस्पर सामान्य विशेष बताओ ?
(क) द्रव्य सामान्य है और क्षेत्र उसका विशेष क्योकि उसमे क्षेत्रात्मक पर्याय या आकार की प्रधानता है।
(ख) भाव सामान्य है और काल उसका विशेष क्योकि गुणो मे परिणमन रूप पर्यायो की प्रधानता है।

अथवा

(क) द्रव्य की अपेक्षा करने पर क्षेत्र काल व भाव इन तीनों मे अर्थात प्रदेशो, गुणो व पर्यायो मे 'अनुगत द्रव्य' सामान्य है और ये तीनो उसके विशेष।
(ख) क्षेत्र की अपेक्षा करने पर अनेक प्रदेशो मे अनुगत द्रव्य का अखण्ड आकार सामान्य है और प्रदेश उसके विशेष।
(ग) काल की अपेक्षा करने पर अनेक द्रव्य पर्यायो मे अनुगत द्रव्य का ध्रुवत्व सामान्य है और उत्पाद व्यय रूप वे द्रव्य पर्याय मे उसके विशेष।
(घ) भाव की अपेक्षा करने पर त्रिकाली अनेक अर्थपर्यायो मे अनुगत गुण सामान्य है और वे अर्थपर्याय उसके विशेष।

३२ यदि चतुष्टय एकमेक तो इन्हे कहने की क्या आवश्यकता ?
सर्वथा एक ही हो, सो बात नही है। इन चारो में अपने अपने स्वरूप की अपेक्षा भेद भी है।

(३ अभाव)

(३३) अभाव किसको कहते हैं ?

एक पदार्थ की (द्रव्य, गुण या पर्याय की) दूसरे पदार्थ मे गैर मौजूदगी को अभाव कहते है।

३४ एक पदार्थ की दूसरे मे गैर मौजूदगी क्या ?

एक पदार्थ का दूसरे रूप न होना, जैसे 'घट' का 'पट' रूप न होना।

(३५) अभाव के कितने भेद है ?

चार है—प्रागभाव, प्रध्वसाभाव, अन्योन्याभाव, अत्यन्ताभाव।

(३६) प्रागभाव किसको कहते हैं ?

वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय मे जो अभाव उसको प्रागभाव कहते हैं।

३७ वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय मे अभाव क्या ?

उत्पन्न होने से प्राक् (पहले) अर्थात पूर्व पर्याय की सत्ता रहते हुए वर्तमान पर्याय की सत्ता का अभाव था, क्योकि उस समय तक वह उत्पन्न ही नही हुई थी। जैसे—दूध की सत्ता के रहते दही की सत्ता का अभाव है।

(३८) प्रध्वसाभाव किसको कहते है ?

आगामी पर्याय मे वर्तमान पर्याय के अभाव को प्रध्वंसाभाव कहते हैं।

३९. आगामी पर्याय में वर्तमान पर्याय का अभाव क्या ?

वर्तमान पर्याय की सत्ता अपने से उत्तरवर्ती पर्याय की सत्ता मे ध्वस (नष्ट) रूप से रहती है। क्योकि इसका ध्वस ही उत्तर पर्याय का उत्पाद है, जैसे—दही का ध्वस हो घी का उत्पाद है।

४०. दही का दूध में अथवा दूध का दही मे 'अभाव' दोनों बातें समान सी दीखती है ?

समान नही है। इनमे 'का' और 'मे' के प्रयोग का अन्तर है।

जिस विवक्षित पर्याय की सत्ता खोजनी हो उसके साथ 'का' का प्रयोग करना चाहिये और जिस दूसरी पर्याय के साथ उसकी भिन्नता देखनी है उसके साथ 'मे' का प्रयोग करना चाहिये। जैसे– दही की सत्ता अपने से पूर्ववर्ती दूध की सत्ता मे प्राग-भाव (अनुत्पन्न) रूप से रहती है और दूध की सत्ता अपने से उत्तरवर्ती दही की सत्ता मे ध्वस (नष्ट) हुई रहती है।

(४१) अन्यान्याभाव किसको कहते हैं ?

पुद्गल द्रव्य की एक वर्तमान पर्याय मे दूसरे पुद्गल की वर्तमान पर्याय के अभाव को अन्योन्याभाव कहते है।

४२ एक पुद्गल पर्याय मे दूसरी पर्याय का अभाव क्या ?

एक पुद्गल स्कन्ध से दूसरा पुद्गल स्कन्ध भिन्न है, जैसे--घटसे पट भिन्न है अथवा एक घट से दूसरा घट भिन्न है।

(४३) अत्यन्ताभाव किसे कहते हैं ?

एक द्रव्य मे दूसरे द्रव्य के अभाव को अत्यन्ताभाव कहते है।

४४ एक द्रव्य में दूसरे द्रव्य का अभाव क्या ?

लोक मे जितने भी सत्ताभूत मौलिक द्रव्यो का अस्तित्व है, वे सव परस्पर भिन्न है, जैसे जीव से पुद्गल भिन्न है अथवा एक जीव से दूसरा जीव भिन्न है।

४५. अत्यन्ताभाव कहने से क्या समझें ?

कोई भी दो द्रव्य मिलकर तीन काल मे भी कभी एक नही हो सकते, उनकी सत्ता पृथक पृथक ही रहती है। द्रव्य क्षेत्र का फल व भाव चारो, प्रकार से भिन्न रहने को अत्यन्ताभाव कहते है।

४६ अन्योन्याभाव व अत्यन्ताभाव मे क्या अन्तर है ?

स्वरूप का सर्वदा पृथक वने रहना अत्यन्ताभाव है. यह बात छहो मूल द्रव्यो में पाई जाती हैं, पुद्गल की द्रव्य पर्यायों मे नही, क्योंकि वे मूल द्रव्य नही हैं। वे हैं समान जातीय पर्याय रूप स्कन्ध जो अपने स्वरूप को वदल लेते है। जो आज पट

है वह कल को पट बन जाता है और जो घट है वही कल को घट बन बैठता है। वर्तमान मे तो इनमे परस्पर भिन्नता अवश्य है, परन्तु आगे जाकर वह बनी ही रहे यह निश्चय नही। इसलिये पुद्गल स्कन्धो मे अत्यन्ताभाव नही अन्योन्याभाव है। अथवा यो कहिये कि त्रिकाली द्रव्य न होने से स्कन्धो मे अत्यन्त भाव घटित नही होता।

४७ दो परमाणुओं में परस्पर कौन सा अभाव है ?

त्रिकाल सत्ताधारी मौलिक द्रव्य न होने से उनमे अत्यन्ताभाव है।

४८. परमाणुओं मे अत्यन्ताभाव और स्कन्धों मे अन्योन्याभाव ऐसा क्यों ?

परमाणु त्रिकाली द्रव्य है और स्कन्ध द्रव्य पर्याय। स्कन्ध बन जाने पर भी परमाणुओ की स्वाभाविक सत्ता अक्षुण्ण रहती है, परन्तु स्कन्धो की सत्ता स्थायी नही। एक परमाणु बदल कर दूसरे परमाणु रूप नही हो जाता, परन्तु एक स्कन्ध बदलकर दूसरे स्कन्ध रूप हो जाता है, जैसे लकडी जलकर कोयला हो जाती है।

४९ अन्योन्याभाव केवल पुद्गल स्कन्ध मे ही लागू होता है ऐसा क्यो ?

क्योकि वे ही बदलकर एक दूसरे रूप हो सकते है, अन्य द्रव्य नही।

५० द्रव्य गुण पर्याय मे कौन कौन अभाव घटित होता है ?

द्रव्य मे अत्यन्ताभाव सभी अर्थ पर्यायो मे प्रागभाव व प्रध्वसाभाव, पुद्गलातिरिक्त द्रव्य पर्यायो मे भी प्रागभाव व प्रध्वसाभाव, पुद्गल की द्रव्य पर्याय रूप स्कन्ध मे अन्योन्याभाव।

५१ स्कन्ध रूप पर्यायो में प्राग प्रध्वंस अभाव लागू नही होते ?

स्वभाव व्यञ्जन पर्याय मे लागू किये जा सकते है पर स्कन्धों मे नही।

५२. समय एक और पदार्थ अनेक, समय अनेक व पदार्थ एक, इनमे कौनसे अभाव घटित होते हैं ?

एक समयवर्ती अनेक पदार्थ मौखिक द्रव्य या स्कन्ध होते है, अत. अत्यन्ताभाव व अन्योन्याभाव घटित होते है। और अनेक समयवर्ती एक पदार्थ पर्याय रूप होने से वहाँ प्रागभाव व प्रध्वसाभाव घटित होते है।

५३. द्रव्य गुण मे अथवा एक द्रव्य के दो गुणो मे परस्पर कौन सा अभाव लागू होता है ?

इन चारो अभावो मे से कोई नही। तहाँ तदभाव है।

५४ तदभाव किसको कहते हैं ?

स्वरूप से भिन्न हो, अर्थात सज्ञा लक्षण प्रयोजन भिन्न हो पर प्रदेशो से भिन्न न हो वहा तदभाव होता है। जैसे—द्रव्य का स्वरूप द्रव्य रूप ही है गुण रूप नही, और गुण का स्वरूप गुण का ही है द्रव्य रूप नहीं। अथवा रस गुण रस ही है वर्ण नही और वर्ण गुण वर्ण ही है रस नही। यही तत् तत् अभाव है।

५५ एक द्रव्य के गुण व पर्यायो में तथा दो द्रव्य के गुण व पर्यायो मे कौन से अभाव ?

एक द्रव्यगत गुणो मे परस्पर तदभाव हैं, पर्यायो में परस्पर प्रागभाव प्रध्वसाभाव है। दो द्रव्यो मे तथा उनके गुणो व पर्यायो में अत्यन्ताभाव है। दो स्कन्ध पर्यायो मे अन्योन्याभाव हैं।

५६. निम्न पदार्थो में परस्पर कौन सा अभाव ? —

१ दूध-दही, २ कुम्हार घड़ा, ३ घट पट, ४ सम्यग्दर्शन, मिथ्यादर्शन, ५ तैजस व कर्माण शरीर, ६. गुरु व शिष्य, ७ पुस्तक व विद्यार्थी, ८. इच्छा व भाषा, ९ चशमा व ज्ञान, १०. शरीर व वस्त्र, ११ शरीर व जीव, १२ ज्ञान व सुख, १३ आम का रूप व रस ?

१. प्राक् व प्रध्वसाभाव अथवा अन्योन्याभाव, अत्यन्ताभाव, ३. अन्योन्याभाव, ४ प्राग भाव प्रध्वसाभाव, ५ अन्योन्या

भाव, ६ अत्यन्ताभाव, ७ अत्यन्ताभाव, ८ अत्यन्ताभाव, ९. अत्यन्ताभाव, १० अन्योन्याभाव, ११ अत्यन्ताभाव, १२. तदभाव, १३ तदभाव।

५७ **निम्न पदार्थों में कौनसा अभाव है ? —**

१ श्रुतज्ञान का मतिज्ञान मे, २ घड़ी का हाथ में, ३ सम्यग्दर्शन का मिथ्यादर्शन मे, ४ जीव की मनुष्य गति का देव गति मे, ५ आम के हरे पन का पीले पन मे; ६. इन्द्रिय सुख का अतिन्द्रिय सुख मे, ७ केवल ज्ञान का सम्यग्दर्शन में, ८. जीव की अर्हन्त अवस्था का सिद्ध अवस्था में, ९. सीमन्धर भगवान का महावीर भगवान में, १० घड़े के एक परमाणु का दूसरे परमाणु मे।

१ प्रागभाव, २ अन्योन्याभाव ३ प्रागभाव व प्रध्वंसाभाव दोनो संभव है क्योकि सम्यग्दर्शन से मिथ्यादर्शन और मिथ्यादर्शन से सम्यग्दर्शन दोनो होने सम्भव है; ४ उपरोक्त न० ३ की भाँति ही प्रागभाव व प्रध्वसाभाव दोनो, क्योकि मनुष्य से देव व देव से मनुष्य दोनो पक्ष सम्भव है, ५ प्रध्वसाभाव, ६. प्रध्वसाभाव, ७ तदभाव, ८. प्रध्वसाभाव, ९ अत्यन्ताभाव, १० अत्यन्ताभाव।

५८ **निम्न पदार्थों मे प्रागभाव व प्रध्वंसाभाव बताओ।**

१. श्रुत ज्ञान, २. मिथ्यादर्शन, ३. मोक्ष, ४ दही, ५. दूध, ६. मक्खन, ७ घी, ८ जल की उष्णता —१ श्रुत ज्ञान मे मति ज्ञान का प्रध्वसाभाव और केवल ज्ञान का प्रागभाव; २. मिथ्यादर्शन मे सम्यग्दर्शन का प्रागभाव व प्रध्वसाभाव दोनो; ३ मोक्ष मे ससार का प्रध्वसाभाव प्रागभाव कुछ नही, ४ दही मे दूध का प्रध्वसाभाव और छाछ का प्रागभाव, ५ दूध मे दही का प्रागभाव और प्रध्वसाभाव कुछ नही; ६ मक्खन मे दही का प्रध्वसाभाव और घी का प्रागभाव, ७ घी मे मक्खन का प्रध्वसाभाव, प्रागभाव कुछ नही, ८ जल की उष्णता मे पूर्व शीतलता का प्रध्वसाभाव और उत्तर शीतलता का प्रागभाव।

५९. चारो अभाव किस-किस द्रव्य में लागू होते हैं ?
केवल पुद्गल मे ।

६०. अत्यन्ताभाव को न मानें तो क्या हानि ?
सब दव्य मिलकर एकमेक हो जाये ।

६१. अन्योन्याभाव न मानें तो क्या हानि ?
पुद्गल स्कन्धो मे भिन्नता की प्रतीति ही न हो, सब एक स्कन्ध वन बैठे ।

६२ प्रागभाव न माने तो क्या हानि ?
द्रव्य की पर्याय अनादि बन जायें ।

६३. प्रध्वंसाभाव न माने तो क्या हानि ?
द्रव्य की पर्यायो का कभी नाश न हो ।

६४. तदभाव न मानें तो क्या हानि ?
द्रव्य मे अनेक गुणो की सिद्धि न हो अथवा सब गुण मिल कर एक हो जाये ।

६५ चारों अभावों को समझने का प्रयोजन क्या ?
द्रव्य, गुण व पर्याय का अपना-अपना पृथक-पृथक अस्तित्व व स्वरूप समझना ।

६६ जगत की हृष्ट चित्रता विचित्रता में कौन सा अभाव कारण हैं ?
अन्योन्याभाव ।

६७. द्रव्य, उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, स्वभाव इन पांचो अभावों को कारणपना दर्शाओ ?
प्रागभाव मे उत्पाद कारण है, प्रध्वसाभाव मे व्यय, अन्यन्ताभाव व तदभाव मे ध्रौव्य, अन्योन्या भाव मे उत्पाद व्यय ।

६८. व्यतिरेकी विशेषो मे कौनसा अभाव ?
अत्यन्ताभाव और अन्योन्याभाव ।

६९. सहभावी विशेषों मे कौनसा अभाव ?
तदभाव ।

७० क्रमभावी विशेषों में कौनसा अभाव ?

प्रागभाव व प्रध्वसाभाव ।

७१ द्रव्य के स्व चतुष्टय मे परस्पर कौनसा अभाव ?

केवल तदभाव, क्योकि उन सब मे प्रदेश भेद नही स्वरूप भेद है ।

७२. इन अभावो को जानने से क्या लाभ ?

पादार्थ के सामान्य व विशेष धर्मो का विशद ज्ञान होना ।

७३ पदार्थो के सामान्य विशेष धर्मो की एकता अनेकता कैसे जानी जाती है ?

अनेकान्त तथा नय सिद्धान्त द्वारा ।

———

७/२ अनेकान्ताधिकार

---

१. अनेकान्त किसको कहते हैं ?

अनेक+अन्त अर्थात अनेक धर्म । वस्तु मे वस्तुपने को निपजाने वाली अस्तित्व, वस्तुत्वादि (सामान्य व विशेष आदि) दो विरोधी शक्तियो (धर्मों) का प्रकाशित होना अनेकान्त है ।

२ वस्तुये विरोधी शक्तियां कौन सी है ?

सामान्य व विशेष धर्मों की अपेक्षा करने पर वस्तु मे अनन्तों विरोधी शक्तिया देखी जा सकती हैं, परन्तु इनमे से चार प्रधान है—सत् व असत्, तत् व अतत्, एक व अनेक, नित्य व अनित्य, ये वस्तु के युग्म चतुष्टय कहलाते है ।

३ सत् किसको कहते हैं ?

पदार्थ की 'सत्ता' स्वचतुष्टय ही है; जैसे घट की सत्ता घट रूप ही है ।

४ असत् किसको कहते हैं ?

पदार्थ की 'सत्ता' परचतुष्टय स्वरूप नही है, जैसे घट की सत्ता पट आदि अन्य वस्तु स्वरूप बिल्कुल नही है । इसे ही पहले अत्यन्ताभाव कहा गया है ।

५. तत् किसको कहते हैं ?

अखण्ड एक द्रव्य मे भी द्रव्य का स्वरूप द्रव्यरूप ही है और गुण पर्याय का स्वरूप गुण पर्याय रूप ही ।

६. अतत् किसको कहते हैं ?
द्रव्य का स्वरूप गुण पर्याय रूप बिल्कुल नही है और गुण पर्याय का स्वरूप द्रव्य रूप बिल्कुल नही है। इसी प्रकार एक गुण का स्वरूप अन्य गुण रूप बिल्कुल नही है। इसे ही पहले तद्भाव कहा गया है।

७ एक किसको कहते हैं ?
द्रव्य अपने गुण पर्यायों के साथ तन्मय रहने के कारण एक है। अथवा अनेक पर्यायो मे अनुस्यूत वह एक है।

८ अनेक किसको कहते है ?
'पदार्थ' द्रव्य गुण व पर्याय का भेद करने पर अनेक रूप दीखता है। अथवा द्रव्य की व्यञ्जन पर्यायो की ओर लक्ष्य करने से वह अनेक रूप है।

९. नित्य किसको कहते है ?
अनेक पर्यायो मे अनुगत ऊर्ध्वता सामान्य रूप द्रव्य नित्य है।

१० अनित्य किसको कहते हैं ?
पदार्थ मे सब तन्मय होने से, पर्याय के उत्पन्न व नष्ट होने पर द्रव्य ही उत्पन्नध्वसी दीखता है।

११ पदार्थ मे ये धर्म किस प्रकार रहते हैं ?
परस्पर मे एकमेक होकर रहते हैं, अथवा इनको आदि लेकर पदार्थ अनन्त धर्मो का एक रसात्मक पिंड है।

१२ परस्पर विरोधी होते हुए भी ये धर्म पदार्थ में मैत्री भाव से कैसे रहते हैं ?
क्योकि सामान्य विशेषात्मक ही पदार्थ का स्वरूप है, अकेले सामान्य या अकेले विशेष रूप नही। सामान्य का विशेष के साथ कोई विरोध नही।

१३- युग्म चतुष्टय में सामान्य व विशेषपना क्या है ?
(क) 'सत्-असत्' धर्म-युगल तिर्यक सामान्य मे व्यतिरेकी विशेष को उत्पन्न करता है।

(ख) 'तत्-अतत्' धर्म-युगल भी तिर्यक सामान्य रूप एक द्रव्य मे गुण पर्याय रूप सहभावी विशेष उत्पन्न करता है ।

(ग) 'एक-अनेक' धर्म-युगल ऊर्ध्वता सामान्य मे क्रमभावी विशेष उत्पन्न करता है ।

(घ) 'नित्य-अनित्य' धर्म-युगल ऊर्ध्वता सामान्य रूप ध्रुवत्व मे उत्पाद व्यय रूप विशेप उत्पन्न करता हे ।

१४ युग्म चतुष्टय मे पांचों भाव कैसे घटित होते है ?

अत्यन्ताभाव व अन्योन्याभाव के द्वारा सत्-असत् धम उत्पन्न होते है । तद्भाव के द्वारा तत्-अतत् व एक अनेक धर्म उत्पन्न होते है । प्रागभाव व प्रध्वसाभाव के द्वारा एक अनेक तथा नित्य-अनित्य धर्म उत्पन्न होते है ।

१५ पदार्थ के स्वरूप मे विरोध भले न हो पर सुनने मे तो लगता है ?

साधारण रूप से कहने सुनने मे अवश्य विरोध लगता है, परन्तु स्याद्वाद पद्धति से कहने पर विरोध नही लगता ।

१६ अनेकान्त कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—सम्यक् व मिथ्या ।

१७. सम्यक् अनेकान्त किसको कहते है ?

पदार्थ मे समस्त धर्मो को एक रूप से अखण्ड देखना सम्यक् अनेकान्त है अथवा एक ही पदार्थ मे अपेक्षावश विरोधी शक्तियो को देखना अनेकान्त है, जैसे जो घट 'सत्' धर्म युक्त है वही किसी अन्य अपेक्षा मे 'असत्' धर्म युक्त है ।

१८ मिथ्या अनेकान्त किसको कहते हैं ?

पदार्थ के समस्त धर्मो को इस प्रकार देखना, मानो वे कोई पृथक पृथक स्वतन्त्र पदार्थ हो, जिनका परस्पर मे एक दूसरे से कोई सम्बन्ध नही । जैसे—सत् धर्मयुक्त घट तो कोई और है और असत् धर्म युक्त कोई और ।

७/३ स्याद्वादाधिकार

१ स्याद्वाद किसको कहते है ?

स्यात्+वाद=स्याद्वाद। अर्थात प्रत्येक बात को 'स्यात्' पद से अलकृत करके बोलने की पद्धति को स्याद्वाद कहते है।

२ अनेकान्त व स्याद्वाद में क्या अन्तर है ?

अनेक धर्मात्मक पदार्थ का अपना अखण्ड स्वरूप तो अनेकान्त है और उसको कहने की पद्धति का नाम स्याद्वाद है। स्याद्वाद वाचक है और अनेकान्त वाच्य।

३ 'स्यात्' पद का क्या अर्थ है ?

स्यात्, कथञ्चित, किसी अपेक्षा से, किसी अभिप्राय से, किसी दृष्टिविशेष से, किसी प्रयोजनवश—ये सभी पद एकार्थवाची है।

४. अपेक्षा या दृष्टि किसको कहते हैं ?

वक्ता के अभिप्राय को उसकी अपेक्षा या दृष्टि कहते है।

५ वक्ता का अभिप्राय किसको कहते है ?

यद्यपि वस्तु मे सभी धर्म एक रस रूप से युगपत रहते है, परन्तु युगपत कहे जाने सम्भव नही, इसलिये वक्ता कभी तो सामान्य को तरफ अपना लक्ष्य ले जाकर उस ओर से उस पदार्थ का कथन करने लगता है, और कभी विशेष की ओर लक्ष्य ले जाकर उस ओर से पदार्थ का कथन करने लगता है। इसे ही वक्ता का अभिप्राय कहते हैं। यह लक्ष्य या अभिप्राय वह

श्रोता की प्रकृति को अथवा परिस्थिति को अथवा अन्य द्रव्य क्षेत्रकाल भाव के विकल्पो को लेकर स्वय निर्धारण करता है, कोई नियम नही कि पहिले अमुक ही धर्म रहे।

६ 'स्यात' का अर्थ तो शायद होता है ?

ठीक है, परन्तु एक शब्द के कई अर्थ होते है। यहां उसका प्रसिद्ध शायद या सशय वाची अर्थ इष्ट नही हैं, बल्कि कथंचित वाला अर्थ ही इष्ट है।

७ स्याद्वाद की कथन पद्धति किस प्रकार है ?

'स्यात् सत् एव' 'स्यात् असत् एव इत्यादि प्रकार से कहना स्याद्वाद पद्धति है। इसी प्रकार सभी विरोधी धर्मो के साथ समझना।

८ 'स्यात् सत् एव' इसका क्या अर्थ है ?

स्यात् सत् ही है, अर्थात पदार्थ किसी अपेक्षा से सत् स्वरूप ही है।

९ किसी अपेक्षा सत् स्वरूप होना क्या ?

अपने स्वरूप चतुष्टय की अपेक्षा वह सत् ही है। इसे ही सरल भाषा मे यो कह लीजिये कि पदार्थ की सत्ता स्वय अपने रूप ही होती है, जैसे घट की सत्ता घट रूप ही होती है।

१० 'स्यात् असत् एव' इसका क्या अर्थ है ?

स्यात् असत् ही है अर्थात पदार्थ अपेक्षा से असत् स्वरूप ही है।

११. किसी अपेक्षा असत् स्वरूप होना क्या ?

पर चतुष्टय की अपेक्षा पदार्थ असत् ही है, अर्थात सत् नही है। इसे ही सरल भाषा मे यों कह लीजिये कि पदार्थ की सत्ता अन्य पदार्थो रूप बिल्कुल भी नही है। जैसे घट की सत्ता पट आदि अन्य पदार्थो रूप बिल्कुल भी नही है।

१२ क्य प्रत्येक वाक्य के सात 'स्यात्' पद का होना आवश्यक है ?

हा, स्याद्वाद की समीचीन पद्धति का यही नियम है।

१३ **शास्त्रों में तथा व्यवहार में ऐसा सर्वत्र किया तो नहीं जाता ?**
जहा 'स्यात' पद बोला या लिखा नही है, वहा भी स्याद्वादी जन उस का उक्त रूप से ग्रहण कर लेते है ।

१४ **सर्वत्र इस नियम का अनुसरण करने से सभी वाक्यों का एक ही अर्थ हो जायेगा ?**
नही, क्योकि 'स्यात्' शब्द सामान्य है, इसलिये वह एक ही शब्द प्रकरणवश भिन्न भिन्न अर्थ का द्योतक बन जाता है ।

१५ **एक स्यात् पद भिन्नार्थ द्योतक कैसे हो सकता है ?**
जैसा प्रकरण होता है वैसा ही वक्ता का अभिप्राय या अपेक्षा होती है । जैसा वक्ता का अभिप्राय या अपेक्षा होती है, उस समय उस स्थल पर 'स्यात्' पद का भी वही अर्थ समझा जाना स्वाभाविक है । जसे–'स्यात् सत् एव' इस पहिले वाक्य मे इस पद का अर्थ है 'पदार्थ के स्वचतुष्टय या स्व स्वरूप की अपेक्षा' और 'स्यात् असत् एव' इस दूसरे वाक्य मे उसी पद का अर्थ है 'पदार्थ से अन्य पर चतुष्टय या पर स्वरूप की अपेक्षा' ।

१६. **स्वचतुष्टय व परचतुष्टय की अपेक्षा क्या ?**
विवक्षित पदार्थ का निज द्रव्य क्षेत्रकाल भाव उसका स्व चतुष्टय है, वही उसका अपना स्वरूप है । अन्य पदार्थो का द्रव्य क्षेत्र काल व भाव उस विवक्षित पदार्थ के लिये पर-चतुष्टय है, वही उसके लिये परस्वरूप है । जब वह विवक्षित पदार्थ अपने स्वरूप मे खोजा जाता है तव तो वह वहा उपलब्ध होता है, इसलिये सत् प्रतीत होता है, परन्तु उसे ही यदि परस्वरूप में खोजने जाते है तब वह वहा उपलब्ध नही होता, इसलिये असत् प्रतीत होता है । जैसे कि, घट की इच्छा वाले के लक्ष्य मे पट है ही नही ।

१७ **सत्ताभूत पदार्थ असत् कैसे प्रतीत हो सकता है ?**
जिस समय स्वरूप मे खोजा जाता है, उस समय स्वरूप ही दृष्टि मे होता है, पर रूप नही । और जिस समय पररूप

खोजा जाता है उस समय वही दृष्टि मे होता है स्वरूप नही। इसलिये स्वरूप की दृष्टि के समय वह असत् और पररूप दृष्टि के समय वह असत् दीखता है। वास्तव में असत् हो जाता हो ऐसा नही है क्योकि स्वरूप तो वह है ही ।

१८ 'स्यात्' पद के साथ एवकार या 'ही' का प्रयोग किस लिये ?

निर्धारण अर्थात निर्णय कराने के लिये है। यदि एवकार न हो तो पदार्थ के स्वरूप के सम्बन्ध मे सशय बना रहता है, कि पदार्थ आखिर क्या है—सत् रूप या असत् रूप, नित्य या अनित्य।

१९. 'ही' कहने से तो एकान्त हो जाता है ?

अवश्य हो जाता है, यदि इसके साथ 'स्यात्' पद न हो तो। जैसे 'देवदत्त पिता ही है' ऐसा कहना एकान्त या मिथ्या है; तथा 'देवदत्त स्यात् पिता ही है' ऐसा कहना ठीक है। क्योकि इसका अर्थ है देवदत्त का किसी अपेक्षा से अर्थात अपने पुत्र की अपेक्षा से पिता होना,और पहले,का अर्थ था सर्वथा पिता होना।

२० एकान्त किसको कहते है ?

वस्तु के अनेक धर्मों को छोडकर केवल किसी एक धर्म को स्वीकार करना और अन्य धर्मों का सर्वथा निषेध कर देना एकान्त है, जैसे कि ऊपर के दृष्टान्त मे देवदत्त का केवल पितृत्व धर्म स्वीकार किया गया है। पुत्रत्व, भ्रातृत्व आदि धर्मो निरपेक्ष एवकार द्वारा लोप कर दिया गया है।

२१ एकान्त कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—सम्यक् व मिथ्या।

२२. एवकार के कारण एकान्त कैसे हो जाता है ?

किसी एक धर्म के साथ निरपेक्ष एवकार लगा देने से स्वतः अन्य धर्मों का निषेध हो जाता है: जैसे, 'पिता ही है' ऐसा कहने से स्वतः यह समझ लिया जाता है कि वह पुत्र या भाई आदि किसी का भी नही है।

२३ **सम्यगेकान्त किसको कहते हैं ?**
'स्यात्' पद सहित एवकार का प्रयोग करना सम्यगेकान्त है; जैसे देवदत्त स्यात पिता ही है।

२४ **मिथ्या एकान्त किसको कहते है ?**
'स्यात्' पद रहित एवकार का प्रयोग करना मिथ्या एकान्त है, जैसे देवदत्त पिता ही है।

२५ **'स्यात' पद में ऐसी कौनसी विशेषता है कि उसके सद्भाव व अभाव से ही एकान्त सम्यक् व मिथ्यापने को प्राप्त हो जाता है ?**
'स्यात्' पद वक्ता की दृष्टि-विशेषका सूचक है। यह बताता है कि वक्ता जो इस समय किसी विवक्षित धर्म की विधि तथा अन्य धर्मो का निषेध कर रहा है, वह वास्तव मे विधि निषेध नही है, बल्कि मुख्यता गौणता है। स्यात् पद से शून्य होने पर वही एवकार अन्य धर्मो का सर्वथा व्यवच्छेद कर डालता है।

२६. **मुख्यता और गौणता किसको कहते है ?**
वक्ता किसी एक दृष्टि से पदार्थ को जब विवक्षित एक धर्म रूप ही बताता है और एवकार द्वारा उस समय अन्य सर्व धर्मो का निषेध कर देता है, तब वह विधि तो मुख्यता और वह निषेध गौणता कहलाती है, क्योकि निषेध करते हुए भी अन्तरग मे उन्हे भूल नही जाता।

२७. **निषेध व गौणता में क्या अन्तर है ?**
निषेध द्वारा तो सर्वथा लोप किया जाता है, अर्थात किसी प्रकार कहा भी तथा कभी भी उस धर्म को स्वीकार करने की भावना नही रहती। परन्तु गौणता मे अन्य दृष्टि से उसे उन्हे भी किसी अन्य स्थल पर किसी अन्य समय स्वीकार कर लिया जाता है। जैसे—'देवदत्त पिता ही है' ऐसा कहने से घोषित होता है कि वक्ता उसको सारे जगत के जीवों का पिता मानता है, पुत्रादि किसी का भी नही मानता, यह निषेध

का उदाहरण है। परन्तु 'देवदत्त स्यात् अर्थात अपने पुत्र की अपेक्षा तो पिता ही है' ऐसा कहने से घोषित होता है कि वक्ता उसे केवल उसके अपने पुत्र का ही पिता मानता है, अन्य व्यक्तियो का नही।

इससे स्वत. यह अर्थ प्राप्त हो जाता है कि अन्य व्यक्तियो का वह पुत्र आदि भी हो सकता है; यह गौणता का उदाहरण है।

२८ सुना जाता है कि 'भी' के प्रयोग से अनेकान्त व 'ही' के प्रयोग से एकान्त हो जाता है ?

ठीक है, परन्तु एकान्त व अनेकान्त दोनो ही सम्यक् व मिथ्या ऐसे दो-दो प्रकार के होते हैं। तहा 'स्यात्' पद सहित किया गया 'भी' का प्रयोग सम्यगनेकान्त है, और 'स्यात्' रहित किया गया उसी का प्रयोग मिथ्या एकान्त है। इसी प्रकार 'स्यात' सहित किया गया 'ही' का प्रयोग सम्यगेकान्त है और 'स्यात' रहित किया गया उसी का प्रयोग मिथ्या एकान्त है।

२९. सम्यक् व मिथ्या अनेकान्त व एकान्त को दृष्टान्त से समझाओ।

जैसे—'देवदत्त पिता भी है, पुत्र भी है, मामा भी है' ऐसा कहने से यह भ्रम होता है कि अवश्य ही ये तोन देवदत्त नामक पृथक पृथक व्यक्ति हैं; क्योकि एक ही व्यक्ति पिता पुत्र मामा आदि सब कुछ कैसे हो सकता है। अथवा यह भ्रम होता है कि जिस किसी का भी पिता है तथा जिस किसी का भी पुत्र व मामा। दूसरी ओर 'देवदत्त स्यात् या किसी की अपेक्षा पिता भी है और किसी की अपेक्षा पुत्र मामा आदि भी' ऐसा कहने से उपरोक्त भ्रम नही होता। इसलिये पहिला मिथ्या अनेकान्त है और दूसरा सम्यक्।

इसी प्रकार "देवदत्त पिता ही है' ऐसा कहने से पुत्र मामा आदि किसी का भी नही है ऐसा भ्रम होता है और 'स्यात पिता ही है' ऐसा कहने से किसी व्यक्ति विशेष का पिता ही है और अन्य किन्ही का पुत्र आदि भी अवश्य होगा, ऐसा समझ मे आता है। इसलिये पहिला मिथ्या एकान्त है और दूसरा सम्यगेकान्त।

३०. **'भी' से अनेकान्त और ही से एकान्त कैसा हो जाता है ?**
'भी' पद अपनी शक्ति से स्वय अन्य धर्मों का सग्रह कर लेने से अनेकान्त या अनेक धर्म सूचक है, तथा 'ही' पद अपनी शक्ति से स्वय अन्य धर्मो का व्यवच्छेद कर देने से एकान्त या एक धर्म का सूचक है ।

३१. **स्याद्वाद रूप कथन पद्धति की महत्ता किस बात में है ?**
पदार्थ युगपत अनेक धर्मो का एक रसात्मक पिण्ड है, परन्तु कथनक्रम मे वे सव के सब धर्म युगपत एक रस रूप मे जैसे है वैसे कहे नही जा सकते । उन्हे पृथक-पृथक एक-एक करके आगे पीछे कहने के अतिरिक्त अन्य उपाय नही । बिल्कुल मौन रहने से भी तीर्थ प्रकृति व सकल व्यवहार के लोप का प्रसग आता है । इसलिये स्याद्वाद पद्धति द्वारा कहने का आविष्कार गुरुओ ने किया है । इस पद्धति द्वारा पृथक पृथक भी कहे गए सर्व धर्म अपने एकरसात्म गठन को छोडते हुए प्रतीत नही होते ।

३२ **स्याद्वाद को कुछ लोग संशयवाद बताते है ?**
यह उन लोगो का भ्रम है, वास्तव मे स्याद्वाद सिद्धान्त वहुत गहन व गम्भीर है । ठीक-ठीक विवेक हुए बिना इसका ठीक ठीक प्रयोग किया जाना असभव है । तव अपने अज्ञान के कारण ही अथवा किसी साम्प्रदायिक पक्षपात के कारण ही यह सिद्धान्त सशयवादवत प्रतीत होता है । वास्तव मे यह सशयवाद नही बल्कि वस्तु का ठीक-ठीक निर्णय कराने वाला है, तथा एकान्त व दृढ या पक्षपात का निराकरण करके व्यापक दृष्टि प्रदान करने वाला है ।

३३ **स्याद्वाद सिद्धान्त एकान्त का निराकरण कैसे करता है ?**
सप्तभगी सिद्धान्त द्वारा ।

७/४ सप्तभंगी अधिकार

१. सप्तभंगी किसको कहते हैं ?

प्रश्नवश एक वस्तु मे प्रमाण से अविरुद्ध विधि प्रतिषेध धर्मों की कल्पना सप्तभगी है ।

२ प्रमाण से अविरुद्ध कहने से क्या समझे ?

अपनी मर्जी से जिस किस प्रकार विधि प्रतिषेध करना सम्यक् सप्तभंगी नही है, बल्कि प्रमाण सिद्ध धर्मो का विधि निषेध ही सप्तभगी है ।

३ विधि प्रतिषेध धर्म क्या ?

पदार्थ के अनेक विरोधी धर्म युगलो मे से प्रत्येक को पृथक पृथक स्याद्वाद पद्धति सहित, विस्तार पूर्वक विश्लेषण करके समझाना ही विधि प्रतिषेध कल्पना है। विश्लेषण द्वारा विधि व प्रतिषेध ये दो धर्म मात्र बन जाते है ।

४ वे सात भग कौन से है ?

स्यात् अस्ति एव, स्यात् नास्ति एव, स्यात् अस्ति नास्ति एव, स्यात् अवक्तव्य एव, स्यात् अस्ति अवक्तव्य एव, स्यात् नास्ति अवक्तव्य एव और स्यात् अस्ति नास्ति अवक्तव्य एव ।

५. क्या सभी भगो के साथ प्रयुक्त शब्द एक ही अर्थ का प्रकाशक है ?

नही, प्रकरण व प्रश्नवश प्रत्येक भग के साथ उसका अर्थ

वदल जाता है, जैसे—'अस्ति' धर्म के साथ प्रयुक्त करने पर उसका अर्थ 'स्व चतुष्टय की अपेक्षा' ऐसा होता है, और 'नास्ति' धर्म के साथ प्रयुक्त करने पर उसी का अर्थ 'पर चतुष्टय की अपेक्षा' ऐसा हो जाता है।

६ **'स्यात् अस्ति एव' का क्या अर्थ है ?**
पदार्थ स्व-चतुष्टय की अपेक्षा अस्ति ही है, जैसे कि घट अपने स्वरूप की अपेक्षा सत् स्वरूप ही है। यह सैद्धान्तिक भाषा है, सरल भाषा मे यो कहा जाता है कि घट की सत्ता घट रूप ही है।

७ **'स्यात् नास्ति एव' का क्या अर्थ है ?**
पदार्थ पर-चतुष्टय की अपेक्षा नास्ति ही है, जैसे कि घट अन्य पट आदि पदार्थों के स्वरूप की अपेक्षा असत् स्वरूप ही है। यह सैद्धान्तिक भाषा है, सरल भाषा मे यो कहा जाता है कि घट की सत्ता पट आदि अन्य पदार्थों रूप विल्कुल नही है।

८. **'स्यात् अस्तिनास्ति एव' का क्या अर्थ है ?**
पदार्थ को एक ही बार क्रम पूर्वक जब दोनो धर्मो को मुख्य करके कहा जाता है, तव यह सयोगी भग प्रगट होता है। इसका अर्थ यह है कि स्वचतुष्टय की अपेक्षा पदार्थ अस्ति रूप होता हुआ भी परचतुष्टय की अपेक्षा नास्ति रूप ही है; और परचतुष्टय की अपेक्षा नास्तिरूप होता हुआ भी वह स्वचतुष्टय की अपेक्षा अस्ति रूप ही है जैसे–घट की सत्ता घट रूप होते हुए भी घट आदि रूप नही ही है। और पट आदि रूप न होते हुए भी घट रूप तो है ही।

९ **पहले दो भंगों के रहते इस तीसरे संयोगी भंग की क्या आवश्यकता ?**
किसी के हृदय के प्रश्न को रोका नही जा सकता। पृथक-पृथक अस्ति व नास्ति धर्मों के सुनने पर कदाचित किसी को पूर्वापर विरोध भासने लगे और वह कहने लगे कि कभी तो 'अस्ति' कहते हो कभी 'नास्ति', कुछ समझ मे नही आता

है कि घट की सत्ता आखिर है या नहीं। तब उसका संशय दूर करने के लिये यह तीसरा भंग है, जो यह प्रगट करता है कि घट है तो परन्तु पट आदि रूप नहीं है, अपने रूप ही है।

१०. केवल 'अस्ति' धर्म कहने मे क्या हानि है ?

केवल अस्ति ही अस्ति कहते जाने से भ्रम वश पदार्थ सर्वरूप समझा जा सकता है। भिन्न भिन्न पदार्थों मे जो परस्पर व्यतिरेक है वह दृष्टि से लुप्त हो जाता है। जैसे 'घट है ही' ऐसा कहने से यह ग्रहण होना सम्भव है कि सभी द्रव्यों रूप से, सभी जगह, हर समय, हर प्रकार से वह ही घट है अर्थात् सर्व लोक मे जो कुछ भी है सर्व घट रूप है।

११ केवल 'नास्ति' धर्म कहने में क्या हानि है ?

केवल नास्ति ही नास्ति कहते जाने से भ्रम वश पदार्थ का सर्वथा लोप होना प्रतीत होता है। जैसे कि 'घट नहीं ही है' ऐसा कहने से यह प्रतीत होता है कि लोक मे घट नाम का कोई पदार्थ ही नहीं है। अथवा दूसरे पदार्थों के अभाव का नाम ही घट है, जैसे कि प्रकाश का अभाव अन्धकार।

१२ 'अस्ति नास्ति' तीसरे भंग को कहने से क्या लाभ है ?

१३ 'अवक्तव्य' भंग का क्या अर्थ है तथा इससे क्या लाभ है ?

तीसरे भग को भी सुनकर श्रोता यह नही जान पाया कि सत् और असत् धर्मो का यह क्रम केवल कथन मे ही है, पदार्थ के स्वरूप मे नही। पदार्थ तो दोनो का एक रसात्मक पिण्ड है। वह तो जैसा है वैसा ही है, जो कहा नही जा सकता। यही बात स्पष्ट करने के लिये यह चौथा 'अवक्तव्य' नाम वाला भग है।

१४ पाचवे व छटे भंग से क्या लाभ ?

अवक्तव्य सुनकर कदाचित श्रोता यह सोच बैठे कि पदार्थ तो कहने व सुनने की वस्तु ही नही है, इसके सम्बन्ध मे पूछना, तर्क करना, विचारना आदि सर्व प्रयास विफल है, तो उसके इस भ्रम को निवारण करने के लिये ये दोनों भग है। इनके द्वारा बताया जाता है कि अवक्तव्य होते हुए भी पदार्थ की सत्ता स्वचतुष्टय अथवा परचतुष्टय के विकल्पो का आश्रय लेकर किंचित बताई अवश्य जा सकती है। जैसे घट को एक रसात्मक रूप से कहने लगे तो उसका अखण्ड रूप किसी भी शब्द द्वारा वक्तव्य नही है, फिर भी वह स्वरूप की अपेक्षा है ही और पर रूप से सदा व्यावृत है। इन दोनो धर्मो की युगपत प्रवृति सम्भव न होने से अवक्तव्य है, पर पृथक-पृथक कहने से वक्तव्य हो सकता है।

१५ 'अस्ति नास्ति अवक्तव्य' नाम के सातवे भंग का क्या लाभ ?

स्वरूप का सद्भाव, पररूप का अभाव, अखण्ड रूप की अवक्तव्य, इन तीनो धर्मो या विकल्पो की एक साथता दर्शाने के लिये वह सातवा भग है। इसका यह अर्थ है कि ये सब बातें विधि निषेध के क्रम से कहने के द्वारा अथवा युगपत देखने के द्वारा पदार्थ मे प्रत्येक समय पाई जाती हैं, पृथक-पृथक नही। जैसे, घट नाम के पदार्थ मे घट के स्वरूप का सद्भाव, पट आदि अन्य पदार्थो के स्वरूप का अभाव और उनकी युगपत अव-

वक्तव्यता एक साथ पाये जाते है।

१६ इस प्रकार परस्पर के सयोग से तो अन्य भंग भी बन सकते हैं?
नही, क्योंकि सात भंग कह चुकने पर आगे प्रश्न शान्त हो जाते है और संशय निवृत्त हो जाता है। सब प्रकार के संशयों का स्पष्टीकरण इन सात भंगो से हो जाता है और सारा विरोध विराम पाता है।

१७ सत् असत् धर्मों मे ही सप्त भंगी लागू होती है या अन्यत्र भी?
सत् असत् इन दो विरोधी धर्मों की भांति सर्व ही विरोधी युगल धर्मों मे नियोजित होती है, तथा विशदता के लिये नियोजित करनी चाहिये। इस प्रकार पदार्थ मे जितने भी विरोधी युगल धर्म है, उतनी ही सप्तभंगियें समझनी चाहिये।

१८ तत् अतत् धर्म युगल मे सप्तभंगी दर्शाओ।
पदार्थ मे द्रव्य के सत्ता द्रव्य की अपेक्षा तत् है और गुण पर्यायों की अपेक्षा अतत्। दोनों की क्रम से नियोजना करने पर यह तत् होते हुए भी अतत् और अतत् होते हुए भी तत् है। दोनों धर्मों की युगपत अपेक्षा होने पर यद्यपि वह अवक्तव्य है, पर सर्वथा अवक्तव्य नही है। युगपत अखण्ड रूप से अवक्तव्य होते हुए भी द्रव्य रूप से तत् है तथा गुण पर्यायो रूप से अतत् है। इस प्रकार क्रम से व युगपत सभी विकल्प निकालने पर यह तत् अतत् अवक्तव्य तीनों रूप है।

१९ एक अनेक धर्म युगल मे सप्त भंगी दर्शाओं?

२० **नित्य अनित्य धर्म युगल में सप्तभगी दर्शाओ।**

अनेक पर्यायो मे समवेत त्रिकाली अखण्ड द्रव्य की अपेक्षा करने पर नित्य है, और उसी की पर्यायो की ओर देखने पर वह अनित्य है। दोनो धर्मो की क्रम से योजना करने पर वह नित्य होते हुए भी अनित्य और अनित्य होते हुए भी नित्य है, पर युगपत कहना सम्भव न होने से वह अवक्तव्य है। अवक्तव्य होते हुए भी नित्य धर्म द्वारा अथवा अनित्य धर्म द्वारा अथवा दोनो धर्मो की क्रम प्रवृत्ति द्वारा वह वक्तव्य है।

२१ **क्या सर्वत्र सातों भंग कहने आवश्यक हैं?**

नही, इन सातो मे पहिले दो ही मूल है। शेप पाँच इनके सयोग से उत्पन्न होते है। सातो के प्रयोग मे अभ्यस्त हो जाने के पश्चात उन दो मूल भगो के प्रयोग से शेप पाच का अनुक्त ग्रहण हो जाता है। अत व्यवहार मे प्राय स्यात् अस्ति' व 'स्यात नास्ति' वाले प्रथम दो भग ही प्रयुक्त होते है।

२२. **प्रथम दो मूल भंगो मे क्या विशेपता है?**

प्रथम दो भग विधि निषेध के सूचक है। सर्व विवक्षित अपेक्षा से पदार्थ विधि रूप तथा अविवक्षित अपेक्षा से निषेध रूप है। इन दो के कहने से उसकी स्पष्ट सिद्धि हो जाती है; जैसे अपने पिता की अपेक्षा वह पुत्र ही है पिता नही। ऐसा कहने से उसके पुत्रत्व का स्पष्ट निर्णय हो जाता है। अत सर्वत्र ये दो ही प्रधान हैं।

२३. **क्या सर्वत्र इन दोनों मूल भंगो का कहना भी आवश्यक है?**

नही, विधि या निषेध किसी भी एक भग के प्रयोग से भी प्रयोजन की सिद्धि हो जाती है, क्योंकि उनके साथ लगा हुआ एवकार स्वत अपने प्रतिपक्षी धर्म का निपेध कर देता है, जैसे 'अपने पिता की अपेक्षा वह पुत्र ही है' ऐसा कहने पर स्वत

समझ लिया जाता है कि अपने पिता की अपेक्षा पुत्र नहीं और पुत्र की अपेक्षा पिता नहीं। इसी प्रकार शेष भगो का भी ग्रहण स्वत. हो जाता है।

२४. सप्तभगी कितने प्रकार की हे ?
दो प्रकार की— नय सप्तभगी और प्रमाण सप्त भगी।

२५. नय सप्तभगी किसको कहते हैं ?
एवकार सहित भगो का प्रयोग करना नय सप्तभगी है, क्योकि इससे एकान्त का ग्रहण होता है, और एकान्त ग्रहण का नाम ही 'नय' है।

२६ एवकार से एकान्त कैसे होता है ?
क्योकि एवकार के प्रयोग द्वारा स्वत. अपनी विधि के साथ साथ तद्व्यतिरिक्त अन्य धर्मो का निषेध हो जाता है। एक धर्म को स्वीकार करके अन्य धर्मों का निषेध करना ही एकान्त है। परन्तु स्यात पदांकित होने से वह एकान्त सम्यक् है मिथ्या नही।

२७. प्रमाण सप्तभंगी किसको कहते हैं ?
प्रत्येक भग के साथ 'एवकार या ही' के स्थान पर 'भी' का प्रयोग कर देने से वही प्रमाण सप्तभगी वन जाती है, क्योकि इस से अनेकान्त का ग्रहण होता है, और अनेकान्त का ग्रहण ही प्रमाण है।

२८ 'भी' के प्रयोग से अनेकान्त कैसे होता है ?
'भी' पद द्वारा विवक्षित धर्म के साथ साथ अन्य धर्मो का भी गौण रूप से ग्रहण हो जाता है, उनका निषेध नहीं होता। जैसे—'किसी अपेक्षा देवदत्त पिता भी है' ऐसा कहने पर स्वत यह ग्रहण हो जाता है कि अन्य अपेक्षा वह पुत्र भी अवश्य होगा। अनेक धर्मों का युगपत ग्रहण ही अनेकान्त है। परन्तु स्यात् पदांकित होने से यह अनेकान्त सम्यक् होता है मिथ्या नही।

२९. 'ही' औ 'भी' के प्रयोग में क्या विवेक है ?

यदि विवक्षा स्पष्ट कह दी गई हो तो 'ही' का प्रयोग करना चाहिये, और यदि न कही गई हो तो 'भी' का प्रयोग करना चाहिये। जैसे 'अपने पिता की अपेक्षा' ऐसा कहने पर तो देवदत्त पुत्र ही है, पिता बिल्कुल नही है। अत. यहा 'ही' का प्रयोग आवश्यक है। परन्तु 'अपने पिता की अपेक्षा' ये शब्द न कहने पर देवदत्त को 'पुत्र ही है' ऐसा कहना नही बन सकता, क्योकि ऐसा कहने से तो वह हर व्यक्ति का पुत्र ही बन जायेगा, पिता किसी का भी न हो सकेगा। इसलिये वहा 'देवदत्त' पुत्र भी है, ऐसा कहना ही युक्त है, जिससे कि सुनने वाला भ्रम मे न पड़े और स्वयं समझ जायें कि देवदत्त केवल पुत्र ही नही किसी का पिता भी अवश्य है।

———

७/५. अनेकान्त योजना विधि

१. अनेकान्त का यह विषय क्यो पढाया जा रहा है ?
मोक्षमार्ग विषयक सब विकल्पो मे लागू करके विवेक उत्पन्न कराने के लिये तथा उनका विशद परिचय देने के लिये।

२. अनेकान्त किन किन विषयो पर लागू होता है ?
वस्तु स्वरूप, रत्नत्रय, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र व्रत, तप आदि सर्व विषयो पर लागू होता है।

३ प्रत्येक विषय पर अनेकान्त कैसे लागू होता है ?
नय के द्वारा, निक्षेप के द्वारा और प्रमाण के द्वारा।

अष्टम अध्याय

(नय-प्रमाण)

१ प्रमाणाधिकार

---

(१) प्रमाण किसको कहते हैं ?

(क) सच्चे ज्ञान को प्रमाण कहते हैं।

(ख) सकलार्थ ग्राही ज्ञान को प्रमाण कहते है।

२ सच्चा ज्ञान किसको कहते है ?

पदार्थ के अनुरूप यथातथ्य ज्ञान को प्रमाण ज्ञान कहते है।

३. पदार्थ के अनुरूप ज्ञान क्या ?

जैसा पदार्थ है बिल्कुल वैसा ही ज्ञान होना अथवा पदार्थ का सागोपाग ज्ञान मे आना पदार्थ के अनुरूप ज्ञान है। क्योंकि पदार्थ अनेकान्त अर्थात अनेक धर्मात्मक है, इसलिये अनेकान्तात्मक ज्ञान ही पदार्थ के अनुरूप होने से सच्चा है।

४ ज्ञान अनेकान्त कैसे होता है ?

अनेक एकान्तो को मिलाने से ज्ञान अनेकान्त हो जाता है। एकान्त का अर्थ है नय। अत अनेक नयो को मिलाने से ज्ञान अनेकान्त या प्रमाण बन जाता है।

५. अनेक नयों को मिलाने से क्या समझे ?

एक नय से वस्तु के किसी एक धर्म का निर्णय होता है। क्रम पूर्वक पृथक पृथक अनेक नयो के द्वारा पदार्थ के अनेक धर्मो का अपनी योग्यतानुसार धीरे धीरे निर्णय करते जाना चाहिये। इन अनेक धर्मो का ग्रहण यद्यपि ज्ञान मे पृथक पृथक आगे पीछे हुआ है, परन्तु पदार्थ मे ये सारे धर्म इस

प्रकार पृथक पृथक आगे पीछे नही रहते। वहा ये सब मिलकर एक रस बने रहते हैं, जैसे जीरे के पानी मे सारे मसालो का स्वाद एक रसात्मक होता है। अत ज्ञान में भी उन पृथक पृथक निर्णीत धर्मों का बुद्धि द्वारा मिश्रण करके कोई विचित्र एक रसात्मक भाव बनाना चाहिये। यही अनेक नयो का मिलाना है, और वस्तु के अनुरूप होने से सच्चा ज्ञान या प्रमाण है।

६. सकलार्थ ग्राही का क्या अर्थ ?

यथा सम्भव अनेक नयो का परस्पर में एक रस रूप से मिला हुआ ज्ञान ही सकलार्थ ग्राही कहा जाता है, क्योकि इसमे पदार्थ के सकल अर्थ अर्थात सम्पूर्ण धर्म युगपत आ जाते हैं।

७. एक धर्म बोधक होने से नय ज्ञान सच्चा नहीं है ?

नही, क्योकि नय के साथ ग्रहण किया गया 'स्यात्' या 'कथचित' पद गौण रूप से अन्य धर्मों के अस्तित्व की सूचना देता रहता है इसलिये नय-ज्ञान भी सच्चा बना रहता है। 'स्यात्-कार' के बिना अवश्य वह नय मिथ्या या कुनयपने को प्राप्त हो जाती है। क्योकि तब एकान्त से एक धर्म का बोध होगा। सत्ताभूत भी अन्य धर्मों का गौण रूप से ग्रहण होने की बजाये निषेध हो जायेगा। तब वह वस्तु के अनुरूप न रहने से मिथ्या बन जायेगा।

(८) प्रमाणाभास किसको कहते हैं ?

मिथ्या ज्ञान को प्रमाणाभास कहते है।

९. मिथ्याज्ञान से क्या समझे ?

पदार्थ के ज्ञान का न होना मिथ्याज्ञान है।

१०. पदार्थ के अनुरूप ज्ञान न होने का क्या तात्पर्य ?

अनेक धर्मो के द्वारा पृथक पृथक निर्णय किए गए अनेक धर्मों का परस्पर मे सम्मेल न बैठना और मुंह से कहते रहना कि इसमें यह धर्म भी है और वह भी। वास्तव मे उस वक्ता को

या तो नयो के शब्दो का ज्ञान है, या पृथक धर्मों का, परन्तु सर्व धर्मों का एक रसात्मक अखण्ड भाव का ज्ञान नही है।

११. प्रमाणाभास कितने है ?

तीन है—सशय, विपर्यय व अनध्यवसाय।

१२. संशय किसको कहते है ?

विरुद्ध अनेक कोटी स्पर्श करने वाले ज्ञान को सशय कहते है। जैसे यह सीप है या चान्दी।

१३ प्रमाणाभास मे संशय कैसे घटित होता है ?

नयो का पृथक पृथक बोध हो जाने पर जिसे उनके एक रसात्मक अखण्ड भाव का पता नही है, वह यह निर्णय नही कर पाता कि आखिर पदार्थ है कैसा—इस नय रूप या उस नय रूप। जैसे—निश्चय नय को सच्ची समझो या व्यवहार नय को, ऐसा ज्ञान।

(१४) विपर्यय किसको कहते है ?

विपरीत एक कोटि के निश्चय करने वाले ज्ञान को विपर्यय कहते हैं—जैसे सीप को चान्दी कहना।

१५ प्रमाणाभास मे विपर्यय कैसे होता है ?

नयो का पृथक पृथक बोध हो जाने पर जिसे उनके एक रसात्मक भाव का पता नही है, वही अपनी मर्जी या रुचि से किसी एक नय वाले ज्ञान को तो सत्यार्थ या पदार्थ के अनुरूप मान लेता है और दूसरी नयों वाले ज्ञान को अभूतार्थ या अप्रयोजनभूत।

(१६) अनध्यवसाय किसको कहते हैं ?

'यह क्या है' ऐसे प्रतिभास को अनध्यवसाय कहते है। जैसे—मार्ग में चलते हुए तृणस्पर्श वगैरह का ज्ञान।

१७ प्रमाणाभास में अनध्यवसाय कैसे होता है ?

नयो का पृथक पृथक बोध हो जाने पर जिसे उनके एक रसात्मक भाव का ग्रहण नही है, वह न तो पदार्थ को एक नय रूप ग्रहण कर पाता है, और न दूसरी नय रूप। केवल कहता

रहता है कि पदार्थ इस नय से ऐसा है और उस नय से ऐसा है। जैसे—निश्चय से ऐसा है व्यवहार से ऐसा है इत्यादि।

१८ प्रमाण में संशय विपर्यय अनध्यवसाय क्यों नहीं होता ?

नयो के एक रसात्मक भाव का ग्रहण हो जाने पर, वह सम्यग-ज्ञानी व्यक्ति जो कुछ भी पढता या सुनता है उसका ठीक ठीक समन्वय कर लेता है, इसलिये उसे सशय आदि नही हो पाते। अथवा तब वह न तो इतना मात्र कहकर सन्तुष्टि का अनुभव करता है, कि 'निश्चय नय से ठीक है, या व्यवहार नय से' और न एक नय को सत्यार्थ कहकर दूसरी नय का लोप करने का प्रयत्न करता है। न 'इस नय से ऐसा है इस नय से ऐसा है' इत्यादि प्रकार का वाग्विलास मान करके सन्तुष्ट होता है।

१९. समन्वय करना किसको कहते हैं ?

पदार्थं मे जिस प्रकार से उसके वे वे विरोधी धर्म परस्पर मैत्री से यथास्थान जडे हुए है, उसी प्रकार नयो के ज्ञान को अन्तरग मे यथास्थान फिर बैठा लेने को समन्वय करना कहते है। जैसे—निश्चय नय से जीव सदा मुक्त है सो ठीक है, क्योकि स्वभाव से वैसा ही है तथा व्यवहार नय से जीव बद्ध है सो ठीक है, क्योकि शरीरादि के सयोगवश वैसा ही है।

———

८/२. निक्षेपाधिकर

(१) निक्षेप किसको कहते हैं ?

युक्ति करके सुयुक्त मार्ग होते हुए कार्य के नाम से नाम स्थापना द्रव्य व भाव मे पदार्थ के स्थापन को निक्षेप कहते है ।

(२) निक्षेप के कितने भेद हैं ?

चार है—नाम, स्थापना, द्रव्य व भाव ।

(३) नाम निक्षेप किसको कहते है ?

जिस पदार्थ मे जो गुण नही हैं उनको उस नाम से कहना, जैसे—किसी ने अपने लड़के का नाम 'सिह' रखा । परन्तु उसमे सिह जैसा गुण नही है ।

(४) स्थापना निक्षेप किसको कहते है ?

साकार तथा निराकार पदार्थ मे 'वह यही है' इस प्रकार का अवधान करके निवेश करने को स्थापना निक्षेप कहते है । जैसे पार्श्वनाथ की प्रतिबिम्ब को पार्श्वनाथ भगवान कहना अथवा सतरज के मोहरे को 'हाथी' कहना ।

(५) नाम और स्थापना मे क्या भेद है ?

नाम निक्षेप मे मूल पदार्थ की तरह सत्कार आदि की प्रवृत्ति नही होती, परन्तु स्थापना निक्षेप मे होती है । जैसे—किसी ने अपने लडके का नाम पार्श्वनाथ रख लिया तो उस लडके का सत्कार पार्श्वनाथ भगवान की तरह नही होता, परन्तु पार्श्वनाथ की प्रतिमा का होता है ।

(६) द्रव्य निक्षेप किसको कहते हैं ?

जो पदार्थ भूत व भावी परिणाम की योजना की योग्यता रखने वाला हो उसको (उस गुण वाला कहना) द्रव्य निक्षेप कहते हैं। जैसे—राजा के (युवराज) पुत्र को राजा कहना।

(७) भाव निक्षेप किसको कहते हैं ?

वर्तमान पर्याय संयुक्त वस्त्र को भावनिक्षेप कहते हैं। जैसे—राज्य करते पुरुष को राजा कहना।

८ चारों निक्षेपों में द्रव्य पर्याय ग्राहीपने का भेद करो ?

नाम व स्थापना द्रव्य को ग्रहण करते है, और द्रव्य व भाव निक्षेप पर्याय को। तथा नाम मे द्रव्य की मनमानी कल्पना है और स्थापना मे श्रद्धा मान्य कल्पना है। द्रव्य निक्षेप द्रव्य की भूत व भविष्यत की पर्यायो में द्रव्य की कल्पना करता है और भाव निक्षेप उसकी वर्तमान पर्याय मे।

९. नय व निक्षेप मे क्या अन्तर है ?

निक्षेप केवल कल्पना गत व्यवहार हे और नय वस्तु स्वरूप का ज्ञान।

८/३ नय अधिकार

(१. नय सामान्य)

१ नय किसको कहते हैं ?

(क) वक्ता के अभिप्राय को नय कहते है।

(ख) वस्तु के एक धर्म के जानने वाला ज्ञान नय है।

(ग) श्रुत ज्ञान के विकल्प को नय कहते है।

(घ) एकान्त ग्रहण को नय कहते है।

२ नय कितने प्रकार के होते हैं ?

दो प्रकार के सम्यक् व मिथ्या।

३. सम्यक् नय किसको कहते है ?

सापेक्ष नय सम्यक् होती है, अर्थात अन्य नय या विवक्षा द्वारा गौण रूप से अविवक्षित धर्मों को भी स्वीकार करने वाली नय सम्यक् है।

४ मिथ्या नय किसको कहते हैं ?

निरपेक्ष नय मिथ्या होती है, अर्थात अपेक्षा का लोप कर देने के कारण अन्य धर्मों का सर्वथा निषेध करने वाली नय मिथ्या है।

५ नय का कथन कितने प्रकार से होता है ?

दो प्रकार से—आगम पद्धति से व अध्यात्म पद्धति से।

(२. आगम पद्धति)

६. आगम पद्धति किसको कहते हैं ?

जिसमें केवल पदार्थ के सामान्य विशेषात्मक स्वरूप का अथवा

उसकी मुख्य प्ररूपणा का प्रयोजन ज्ञान मात्र इष्ट हो, वह आगम पद्धति है। इसमें हेयोपादेय का विवेक नहीं कराया जाता।

७- आगम पद्धति में नय के कितने भेद हैं ?
तीन हैं—ज्ञान नय, अर्थ नय और व्यञ्जन नय।

८- तीन नय मानने की क्या आवश्यकता ?
क्योंकि पदार्थ तीन प्रकार के हैं—ज्ञानात्मक, अर्थात्मक व व्यञ्जनात्मक। इसलिये उन उनको विषय करने वाली नय भी तीन होनी चाहिये।

९- ज्ञानात्मक पदार्थ से क्या तात्पर्य ?
ज्ञान में वस्तु का जो प्रतिभास पड़ता है वह ज्ञानात्मक पदार्थ है। जैसे—ज्ञान में गाय का आकार।

१०- अर्थात्मक पदार्थ से क्या तात्पर्य ?
जिसमें अर्थ क्रिया की प्राप्ति हो उसे अर्थात्मक पदार्थ कहते हैं, जैसे दूध देने वाली असली गाय।

११- व्यञ्जनात्मक पदार्थ से क्या तात्पर्य ?
वस्तु के वाचक शब्द को व्यञ्जनात्मक पदार्थ कहते हैं, जैसे—ब्लैक बोर्ड पर लिखा गया 'गाय' ऐसा शब्द।

१२ ज्ञानात्मक पदार्थ कितने प्रकार का होता है ?
दो प्रकार का—सत् व असत्।

१३. सत् पदार्थ किसे कहते हैं ?
वर्तमान में विद्यमान पदार्थ को सत् कहते हैं, जैसे दृष्ट मनुष्य पशु आदि।

१४. असत् पदार्थ किसे कहते हैं ?
जो पदार्थ वर्तमान में विद्यमान नहीं है। या तो पहले था अब विनष्ट हो गया है, अथवा आगामी काल में उत्पन्न होगा, अभी उत्पन्न नहीं हुआ है। ऐसा पदार्थ असत् कहलाता है।

१५. सत् पदार्थ तो सम्भव है पर अनुत्पन्न व विनष्ट कैसे सम्भव है ?

अर्थक्रियाकारी पदार्थ के रूप मे भले उसका बाहर मे अस्तित्व न हो, परन्तु ज्ञान मे उसका अस्तित्व अवश्य है। जैसे आपके ज्ञान मे आपका मृत पिता सत् है।

१६. पदार्थ बड़ा है या ज्ञान ?

पदार्थ की अपेक्षा ज्ञान बडा है, क्योकि पदार्थ तो वर्तमान पर्याय युक्त ही प्रतीति मे आता है, पर ज्ञान उसकी त्रिकाली पर्याय युक्त होता है।

१७. ज्ञाननय किसको कहते है ?

ज्ञानात्मक पदार्थ के सम्बन्ध मे विचार करने अथवा कहने वाली नय 'ज्ञाननय' है।

१८. अर्थनय किसको कहते है ?

अर्थात्मक पदार्थ के सम्बन्ध मे विचार करने अथवा कहने वाली नय 'अर्थनय' है।

१९ व्यञ्जन नय किसको कहते हैं ?

व्यञ्जनात्मक पदार्थ के सम्बन्ध मे विचार करने अथवा कहने वाली नय 'व्यञ्जन नय' है। शब्दात्म होने से इसे 'शब्दनय' भी कह देते है।

२० ज्ञान में जाना गया सो ज्ञान नय और शब्द में बोला या लिखा गया सो शब्द नय, तीसरे अर्थनय की क्या आवश्यकता ?

ऐसा नही है, तुम नय के अर्थ को नही समझे। नय तो सर्वत्र ज्ञानात्मक ही होता है। ये भेद तो ज्ञेय की अपेक्षा से है। ज्ञेय तीन प्रकार के हैं—ज्ञान मे ज्ञेय का आकार, असली ज्ञेय पदार्थ और ज्ञेय पदार्थ का वाचक शब्द। यदि ज्ञेयाकार को लक्ष्य करके विचारा या बोला गया हो या लिखा गया हो तो वे सब विचार या शब्द ज्ञान नय कहलायेंगे। यदि असली अर्थात्मक पदार्थ को लक्ष्य करके विचार अथवा बोला या लिखा गया है तो वे सब विचार और शब्द अर्थनय कहलायेंगे। और इसी

प्रकार यदि वाचक शब्द की धातु विभक्ति कारक लिंग आदि के सम्बन्ध मे विचारा अथवा बोला या लिखा गया हो तो वे सब विचार या शब्द व्यजन नय या शब्द नय कहलायेगे ।

२१ ज्ञाननय के कितने भेद हैं ?

केवल एक——नैगम नय ।

२२ अर्थनय के कितने भेद हैं ?

दो——द्रव्यार्थिक व पर्यायार्थिक ।

२३ अर्थनय के दो भेदो का कारण क्या ?

क्योकि अर्थात्मक पदार्थ द्रव्य गुण पर्याय युक्त होता है ।

२४ द्रव्यार्थिक नय किसको कहते है ?

पर्याय अर्थात विशेषो को गौण करके जो ज्ञान पदार्थ के द्रव्याश या सामान्याश को ग्रहण करे उसे द्रव्यार्थिक नय कहते है जैसे पदार्थ को एक व नित्य कहना ।

२५. द्रव्यार्थिक नय कितने प्रकार की है ?

तीन प्रकार की---नैगम नय, सग्रह नय, व्यवहार नय ।

अथवा दो प्रकार की—शुद्ध द्रव्यार्थिक व अशुद्ध द्रव्यार्थिक ।

२६. पर्यायार्थिक नय किसको कहते हैं ?

द्रव्य अर्थात सामान्य को गौण करके जो ज्ञान पदार्थ के पयायाश को अर्थात विशेषाश को ग्रहण करे उसे पर्यायार्थिक नय कहते हैं, जैसे पदार्थ को अनेक व अनित्य कहना ।

२७ पर्यायार्थिक नय के कितने भेद हैं ?

केवण एक ऋजुसूत्र नय ।

अथवा दो—शुद्ध पर्यायार्थिक व अशुद्ध पर्यायार्थिक ।

अथवा चार—ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ व एवभूत ।

२८. द्रव्यार्थिक व पर्यायार्थिक के साथ गुणार्थिक क्यो नहीं कही ?

द्रव्यार्थिक नय पदार्थ के सामान्याश को ग्रहण करता है पर्यायार्थिक नय उसके विशेपाश को । सामान्य व विशेप मे सर्व पदार्थ समाप्त हो जाता है । जिस प्रकार पर्यायार्थिक नय क्रम-

भावी पर्यायों को ग्रहण करता है, उसी प्रकार सहभावी पर्यायो या गुणो को भी ग्रहण कर लेता है। इसलिये तीसरी गुणार्थिक नय की आवश्यकता नही।

२९ व्यञ्जन नय कितने प्रकार की होती है ?

तीन प्रकार की---शब्द नय, समभिरूढनय व एवभूतनय।

३० शब्दादि तीनों व्यञ्जन नयों को पर्यायार्थिक मे क्यों गिना गया ?

क्योकि व्यञ्जन या शब्द स्वय एक पर्याय है, द्रव्य नही।

३१. आगम पद्धति की अपेक्षा कुल नयों का चार्ट बनाओ।
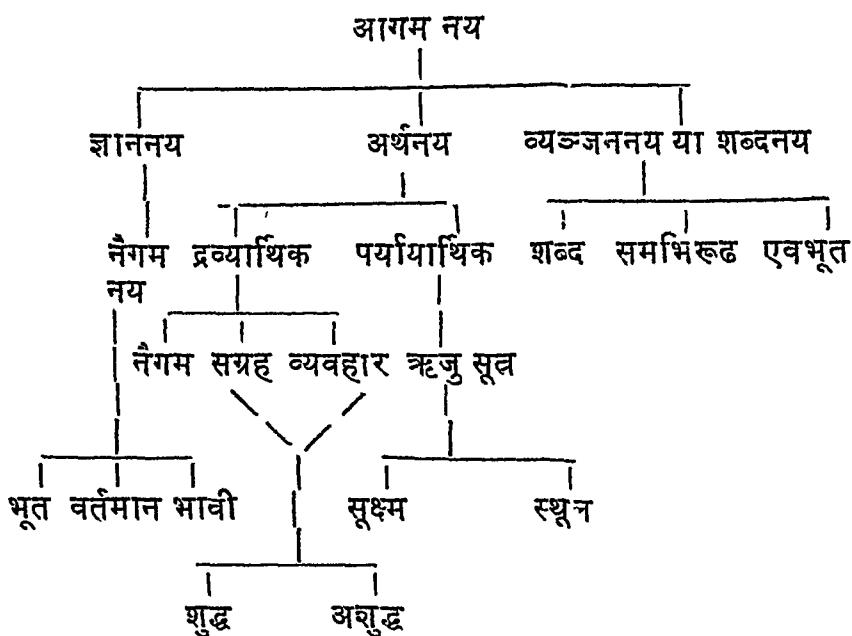
इस प्रकार आगम पद्धति की अपेक्षा मूल नय सात है—नैगम, सग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ व एवभूत।

३२ नैगमनय किसको कहते हैं ?

नैगम नय क्योंकि ज्ञाननय व अर्थनय दोनो विकल्पो में गिनी गई है, इसलिये इसके लक्षण भी दो प्रकार से किये जाते है—एक ज्ञान नय की ओर से दूसरा अर्थनय की ओर से।

(क) सकल्प मात्र ग्राही वैगमनय है। जैसे—भात पकाने का सकल्प करने पर ही चावलो को 'भात पकाता हूँ' ऐसा कहा जाता है। यह लक्षण ज्ञान नय की ओर से है, क्योकि 'भात' नामक पदार्थ अनुत्पन्न होने के कारण बाहर मे असत् है। उसका ग्रहण ज्ञान मे ही हो रहा है।

(ख) जो सग्रह व व्यवहार दोनो नयो के विषय को मुख्य गौण करके युगपत ग्रहण करे वह नैगम नय है। जैसे—जो यह वस्तु समूह सग्रह नय की अपेक्षा एक जाति रूप है वही व्यवहार नय की अपेक्षा जीव अजीवादि अनेक जाति रूप है। यह लक्षण अर्थ नय की तरफ से है, क्योकि सामान्य विशेष होने से उसी मे एकता अनेकता सिद्ध होती है।

(ग) जो एक को ग्रहण करके दोनो को अर्थात सामान्याश व विशेषाश दोनो को मुख्य गौण करके ग्रहण करे उसको नैगम नय कहते है। जैसे जो यह द्रव्य गुण पर्याय की अपेक्षा अनेक भेद रूप कहा गया है वह अखण्ड एक रूप है।

३३ नैगम नय व प्रमाण दोनों ही सामान्य व विशेष को युगपत ग्रहण करते है, तब दोनों मे क्या अन्तर ?

नैगम नय दोनो अशो को मुख्य गौण के विकल्प पूर्वक ग्रहण करता है अथवा जानता है, जबकि प्रमाण उन्हे ही निर्विकल्प रूप से जानता है। इसलिये नैगमनय वक्तव्य है और प्रमाण अवक्तव्य।

३४ ज्ञान रूप नैगमनय कितने प्रकार का है ?

तीन प्रकार का–भूत नैगम, वर्तमान नैगम, भावी नैगम।

३५ भूत नैगमनय किसको कहते हैं ?

भतकाल मे वीत गए विषय का वर्तमान मे सकल्प करना भूत-

नैगमनय है। जैसे—आज दीपावली के दिन भगवान वीर निर्वाण पधारे।

३६. **भावी नैगमनय किसको कहते हैं ?**
आगामी काल मे होने वाले विषय का संकल्प वर्तमान मे करना भावी नैगमनय है। जैसे—प्रतिमा बनाने के सकल्प से लाये गये पाषाण खण्ड मे 'यह प्रतिमा है' ऐसा व्यवहार करना।

३७. **वर्तमान नैगमनय किसको कहते है ?**
अर्ध निष्पन्न विषय को वर्तमान मे निष्पन्न कहना वर्तमान नैगमनय है। जैसे—आग पर रखे अधपके चावलों को भात कहना।

३८ **भावी व वर्तमान नैगमनय मे क्या अन्तर है ?**
भावी नैगमनय का विपय दूर निष्पन्न है अथवा उसकी निष्पत्ति मे राम के राज्यभिषेक वत् विघ्न पड सकता है; परन्तु वर्तमान नैगमनय का विषय निकट निष्पन्न है। इसकी निष्पत्ति निश्चित है।

३९. **अर्थ रूप नैगमनय कितने प्रकार का है ?**
तीन प्रकार का—द्रव्य नैगम, पर्याय नैगम तथा द्रव्य पर्याय नैगम।

४० **द्रव्य नैगमनय किसको कहते हैं ?**
किसी सामान्य धर्म द्वारा द्रव्य का निर्णय करने वाला अथवा द्रव्य द्वारा सामान्य धर्म का निर्णय करने वाला 'द्रव्य नैगम' है। जैसे—जो सत् है वही द्रव्य है और जो द्रव्य है वही सत् है।

४१. **पर्याय नैगमनय किसको कहते हैं ?**
किसी एक विशेष धर्म पर से किसी दूसरे विशेष धर्म का निर्णय करने वाला 'पर्याय नैगम' है। जैसे—जो वीतरागता है वही सुख है और जो सुख है वही वीतरागता है।

४२. द्रव्य पर्याय नैगमनय किसको कहते है ?

सामान्य धर्म पर से विशेष का और विशेष धर्म पर से सामान्य का निर्णय करने वाला 'द्रव्य पर्याय नैगमनय' है। जैसे—जो जीव है वही ज्ञान है और जो ज्ञान है वही जीव है।

४३. संग्रहनय किसको कहते हैं ?

अपनी जाति का विरोध न करके अनेक विषयो का एक रूप से जो ग्रहण करे उसको 'सग्रहनय' कहते हैं। जैसे—एक 'सत्' कहने से सभी द्रव्यो का युगपत ग्रहण हो जाता है; अथवा 'जीव' कहने से चारो जाति के सभी जीवो का ग्रहण हो जाता है।

४४ संग्रहनय कितने प्रकार का है ?

दो प्रकार का—शुद्ध सग्रह और अशुद्ध सग्रह।

४५ शुद्ध संग्रहनय किसको कहते हैं ?

जो महा सत्ता को एक रूप से ग्रहण करे। जैसे—लोक मे एक 'सत्' है और कुछ नही।

४६ अशुद्ध संग्रहनय किसको कहते हें ?

जो अवान्तर सत्ता को एक रूप से ग्रहण करे। जैसे—जीव एक है, पुद्गल एक है, ससारी जीव एक है, इत्यादि।

(४७) महासत्ता किसको कहते हैं ?

समस्त पदार्थों के अस्तित्व को ग्रहण करने वाली सत्ता को महा सत्ता कहते हैं। (महा सत्ता की अपेक्षा जीव व अजीव सब सन्मात्र स्वरूप हैं)।

(४८) अवान्तर सत्ता किसको कहते है ?

किसी विवक्षित पदार्थ के अस्तित्व को अवान्तर सत्ता कहते है। जैसे—जीव की सत्ता मे केवल जीव द्रव्य ही आते हैं अजीव नही।

४९. व्यवहार नय किसको कहते हैं ?

जो सग्रहनय से ग्रहण किये पदार्थ को विधिपूर्वक भेद करे, सो

व्यवहार नय है। जैसे—जीव को त्रस व स्थावर के भेद से दो प्रकार का कहना।

५०. व्यवहार नय कितने प्रकार का है ?
दो प्रकार का—शुद्ध व्यवहार व अशुद्ध व्यवहार।

५१ शुद्ध व्यवहारनय किसको कहते हैं ?
शुद्ध सग्रह के विपय को भेद करने वाला शुद्ध व्यवहार है। जैसे—जीव अजीव के भेद से 'सत्' दो भागो मे विभाजित है।

५२ अशुद्ध व्यवहारनय किसको कहते है ?
अशुद्ध संग्रह के विपय को भेद करने वाला अशुद्ध व्यवहार है। जैसे—ससारी व मुक्त के भेद से जीव दो प्रकार का है।

५३, ऋजुसूत्रनय किसको कहते हैं ?
भूत भविष्यत की अपेक्षा न करके वर्तमान पर्याय मात्र को जो ग्रहण करे वो ऋजुसूत्र है। जैसे—बालक एक स्वतन्त्र पदार्थ है, युवा व वृद्ध कोई और ही है।

५४. ऋजु सूत्रनय कितने प्रकार का है ?
दो प्रकार का—सूक्ष्म व स्थूल।

५५. सूक्ष्म ऋजुसूत्र किसको कहते हैं ?
द्रव्य की षट्गुण हानिवृद्धि रूप अवस्थाओ मे से किसी एक सूक्ष्म पर्याय मात्र को स्वतन्त्र द्रव्य रूप से ग्रहण करे सो सूक्ष्म ऋजुसूत्र है। इस नय को उदाहरण नही हो सकता क्योंकि सूक्ष्म पर्याय वचन गोचर नही है।

५६. स्थूल ऋजुसूत्र किसे कहते हैं ?
द्रव्य की स्थूल व्यञ्जन पर्याय मे से किसी एक को स्वतन्त्र द्रव्य रूप से ग्रहण करे सो स्थूल ऋजुसूत्रनय है। जैसे—मनुष्य एक द्रव्य है अथवा बालक एक स्वतन्त्र व्यक्ति है जिसका संबंध वृद्धत्व से कुछ नही।

५७ शब्दनय किसको कहते हैं ?
ऋजु सूत्रनय के द्वारा ग्रहण किये गए एकार्थवाची शब्दो में से

केवल समान लिंग व वचन आदि वाले शब्दो को ही एकार्थवाची मानता है, भिन्न लिंगादि वालो को नही ।

५८. समभिरूढ़नय किसको कहते है ?

शब्द नय द्वारा ग्रहण किये गये समान लिंगादि वाले शब्दो का भी जो पृथक-पृथक अर्थ ग्रहण करता है, वह समभिरूढनय है। इस नय मे एकार्थवाची शब्द नही होते। परन्तु एक अर्थ के लिये सर्वदा एक ही प्रसिद्ध शब्द का प्रयोग किया जाता है। जैसे गाय को हर अवस्था मे गाय कहना ।

५९ एवंभूतनय किसको कहते हैं ?

समभिरूढ नय के द्वारा ग्रहण किये गये अर्थ या पदार्थ को भी क्रिया की अपेक्षा लेकर भिन्न-भिन्न समयो मे नाम देता है। जैसे—चलती हुई गाय को 'गाय' कहना बैठी हुई को नही ।

६०. जब सभी नय शब्दों द्वारा व्यक्त की जाती है, फिर ऋजुसूत्र को अर्थनय और शब्दादि को व्यंजननय क्यो कहा ?

नयें तो सभी की सभी शब्दो द्वारा ही व्यक्त की जाती हैं, परन्तु इस अपेक्षा नयो का भेद नही किया गया है। बल्कि शब्द का लक्ष्य किस ओर है इस अपेक्षा को लेकर किया गया है। ऋजु सूत्र नय तक प्रयोग किये गये शब्दो का लक्ष्य 'वाच्यपदार्थ' के सम्बन्ध मे तर्क वितर्क करना है, और तीनो व्यञ्जन नयो मे प्रयुक्त शब्दो का लक्ष्य, वाच्य पदार्थ का वाचक जो नाम या शब्द है, उसके सम्बन्ध मे तर्क वितर्क करना है। अत ऋजुसूत्र पर्यन्त की सब नये अर्थ नये है और आगे की तीन व्यंञ्जन नये ।

६१. इन सातो नयो का क्रम समझाओ ।

यह सात नयें पदार्थ को स्थल से सूक्ष्मतम रूप तक पढना सिखाते हैं। अत' इनका क्रम स्थूल मे सूक्ष्म, सूक्ष्मतर व सक्ष्मतम होता जाता है । नैगमनय का विपय सबसे महान है । संग्रहनय का विपय नैगमनय से अल्प है, परन्तु आगे वाले सभी नयो से महान है । व्यवहार नय का विपय सग्रहनय से भी अल्प है,

परन्तु आगे वाले सभी नयो से महान है। इसी प्रकार आगे भी जानना।

६२. **सातों नयो के विषय की अल्पता व महानता दर्शाओ।**

नैगमनय ज्ञानमय होने के कारण सबसे महान है, क्योकि ज्ञान में सत् व असत् सभी सम्भव है। सग्रह व्यवहार व ऋजुसूत्र ये तीनो नये अर्थ नय होने के कारण व सब मिलकर भी अकेली नैगमनय से अल्प विपयक है क्योकि उनका विषयभूत क्रियाकारी अर्थ सत् ही होता है असत् नही। शब्द, समभिरूढ व एवभूत ये तीनों नये व्यञ्जन नये होने के कारण सबसे अल्प विपय वाले है, क्योंकि अर्थ की अपेक्षा उनका वाचक शब्द स्वय उनकी अपेक्षा सूक्ष्म है।

अथवा विशेष रूप से कहने पर—'नैगमनय' ज्ञाननय व अर्थनय दोनों रूप है, इसलिये सब से महान है। तहाँ भी इसका अर्थनय वाला लक्षण ज्ञाननय वाले लक्षण से अल्प विपय वाला है, क्योकि ज्ञानात्मक सकल्प सत् व असत् दोनो को स्पर्श करता है और अर्थ केवल सत् को ही।

अर्थनयो मे भी नैगमनय सबसे महान है, क्योकि वह संग्रह व व्यवहार दोनो के विपयो को युगपत अकेला ही ग्रहण कर लेता है। संग्रहनय नैगमनय से अल्प है, क्योकि भेद को छोडकर केवल अभेद को ग्रहण करता है। भेदग्राही होने के कारण व्यवहारनय संग्रह की अपेक्षा भी अल्प है, क्योकि अभेद की अपेक्षा भेद छोटा माना गया अथवा सामान्य की अपेक्षा विशेष छोटा होता है। व्यवहार के विषय मे से भी त्रिकाली सामान्य अश को छोडकर केवल वर्तमान समयवर्ती किसी एक अश को ग्रहण करने के कारण ऋजुसूत्र उससे भी अल्प विषय वाला है।

शब्दादि तीनों व्यञ्जन नये मिलकर भी एक ऋजुसूत्र से अल्प विषय वाले है, क्योकि इनका व्यापार अर्थ में न होकर केवल

उसके वाचक शब्द मे होता है। तहाँ ऋजुसूत्र नय तो भिन्न लिंग कारक आदि वाले अनेक शब्दो का भी एक ही अर्थ ग्रहण कर लेता है, और उनके वाच्यार्थ मे भेद का विकल्प नही करता। परन्तु शब्दनय केवल समान लिग कारक आदि वाले शब्दो की ही एकार्थता स्वीकार करता है, भिन्न लिंग आदि वालो की नही। इसलिये शब्दनय ऋजुसूत्र से अल्प विषय वाला है।

समभिरूढ नय शब्द नय के विषयभूत समान लिंग कारक आदि वाले एकार्थवाची शब्दो मे भेद करके उनका भिन्न भिन्न अर्थ स्वीकार करता है, इसलिये इसका विषय शब्दनय से अल्प है। प्रत्येक शब्द को भिन्नार्थ वाची मानकर भी समभि-रूढ नय पदार्थ की सर्व अवस्थाओ मे उसे एक ही नाम देता है, परन्तु एवभूत इतना अभेद भी पसन्द नही करता। वह पदार्थ की भिन्न समयवर्ती पृथक-पृथक भिन्न क्रियाओ को आश्रय करके, उसे प्रत्येक अवस्था में भिन्न नाम प्रदान करता है। क्रिया या अवस्था वदल जाने पर यहाँ उसका नाम भी वदल जाता है। इसलिये समभिरूढ की अपेक्षा भी एवभूत का विपय अत्यल्प है, जिसके पश्चात शब्द मे और सूक्ष्मता लाना सभव नही।

६३ शुद्ध द्रव्यार्थिक नय किसको कहते हैं?

अभेदरूप से सामान्य का कथन करने वाला सग्रह नय शुद्ध द्रव्यार्थिक है, अथवा पर्यायो को न देखकर त्रिकाली शुद्ध तत्व का विवेचन करना इसका काम है।

६४ अशुद्ध द्रव्यार्थिक नय किसको कहते हैं?

भेद रूप से सामान्य का कथन करने वाला व्यवहार नय अशुद्ध द्रव्यार्थिक है, अथवा स्थूल द्रव्य पर्यायो का आश्रय करके उसको द्रव्य रूप से विवेचन करना इसका काम है।

६५. शुद्ध पर्यायार्थिक नय किसको कहते हैं?

शुद्ध अर्थ पर्याय का कथन करने वाला सूक्ष्म ऋजुसूत्र नय शुद्ध

पर्यायार्थिक है। एक समयवर्ती अर्थपर्याय का द्रव्य रूप से विवेचन करना इसका काम है।

६६. अशुद्ध पर्यायार्थिक नय किसको कहते हैं ?
अशुद्ध या स्थूल व्यजन पर्याय का कथन करनेवाला स्थूल ऋजु सूत्रनय अशुद्ध पर्यायार्थिक है। वर्तमान काली अवस्था का ही विवेचन करना इसका काम है।

६७ स्थूल व्यञ्जन पर्यायग्राही होने से व्यवहार व ऋजुसूत्र दोनों को ही समान क्यों न कहा ?
नही, क्योंकि व्यवहार नय उन भेदो को पृथक-पृथक पदार्थ नही मानता उन भेदो द्वारा अथवा विश्लेपण द्वारा सग्रहनय के सामान्य का ही स्पप्टी करता है, जव कि स्थूल ऋजुसूत्र उसके किसी एक भेद को स्वतन्त्र द्रव्य या सत् मानकर बात करता है।

(३ अध्यात्म पद्धति)

६८. अध्यात्म पद्धति किसको कहते है ?
जिसमे पदार्थो की शुद्धता व अशुद्धता दर्शाकर उनमे हेयोपादेय बुद्धि उत्पन्न कराना इष्ट हो उसे अध्यात्म पद्धति कहते है।

६९ अध्यात्म पद्धति से नय का क्या लक्षण है ?
जो ज्ञान वस्तु के एक अश को ग्रहण करे उसको नय कहते हैं।

७० वस्तु के कितने अंश प्रधान हैं ?
दो - सामान्य व विशेप अथवा अभेद व भेद अथवा द्रव्य व पर्याय। मामान्य, अभेद, द्रव्य एकार्थवाची है और विशेप भेद व पर्याय एकार्थवाची है।

७१. नय के कितने भेद है ?
दो भेद है—निश्चय व व्यवहार।

७२ निश्चय नय किसको कहते हैं ?
जो समस्त द्रव्य को अभेद रूप से ग्रहण करे, अर्थात उसमें गुण गुणी भेद न करके गुणो व पर्यायों के साथ तादात्म्य भाव

को स्वीकार करे उसे निश्चय नय कहते हैं। जैसे—जीव ज्ञान स्वरूप है या ज्ञानात्मक है ऐसा कहना अभेद व तादात्म्य सूचक होने से निश्चय नय है।

७३. निश्चयनय के कितने भेद हैं ?

दो है—शुद्ध और अशुद्ध।

७४ शुद्ध निश्चय नय किसको कहते हैं ?

शुद्धगुण व शुद्ध पर्याय के साथ द्रव्य को अभेद दर्शाने वाला शुद्ध निश्चयनय है। जैसे-'ज्ञानस्वरूप जीवतत्व है' अथवा 'केवल ज्ञानस्वरूप सिद्ध भगवान है' ऐसा कहना।

७५ अशुद्ध निश्चय नय किसको कहते हैं ?

अशुद्ध पर्यायो के साथ द्रव्य का तादात्म्य दर्शानेवाला अशुद्ध निश्चय नय है। जैसे—'मतिज्ञान स्वरूप ससारी जीव है'। (गुण अशुद्ध नही होता पर्याय ही होती है, इसलिये गुण के साथ तादात्म्य वाला विकल्प यहा घटित नही होता)।

७६. व्यवहार नय किसको कहते हैं ?

अभेद द्रव्य मे गुण-गुणी भेद करने वाला अथवा भिन्न प्रदेश-वर्ती अनेक द्रव्यो मे निमित्तादि की अपेक्षा अभेद करने वाला उपचार व्यवहार नय कहलाता है।

७७ उपचार किसे कहते है ?

प्रयोजन वश, मूल वस्तु के अभाव मे, उनसे किसी प्रकार का सम्वन्ध रखने वाली अन्य वस्तु को अन्य वस्तु रूप कहना उपचार है। जैसे सिह के अभाव मे सिंह की पहचान कराने के लिये, शक्ल सूरत मे समानता होने के कारण बिल्ली को सिंह कह देना।

७८ उपचार कितने प्रकार का होता है ?

अनेक प्रकार का होता है। जैसे—द्रव्य को गुण का उपचार, द्रव्य मे पर्याय का उपचार, एक द्रव्य मे दूसरे द्रव्य का उपचार; एक गुण मे दूसरे गुण का उपचार, गुण मे द्रव्य का उपचार,

गुण मे पर्याय का उपचार, एक पर्याय मे दूसरी पर्याय का उपचार, पर्याय मे गुण का उपचार, पर्याय मे द्रव्य का उपचार; कारण मे कार्य का उपचार, कार्य मे कारण का उपचार आदि ।

७९. **व्यवहार नय के कितने भेद है ?**
दो है—सद्भूत और असद्भूत ।

८०. **सद्भूत व्यवहारनय किसको कहते है ?**
एक अखण्ड पदार्थ मे गुण-गुणी अथवा पर्याय-पर्यायी रूप भेदोपचार करने को सद्भूत व्यवहारनय कहते है । जैसे—जीव मे ज्ञान गुण है, ऐसा कहना भेदोपचार है ।

८१. **सद्भूत व्यवहार नय कितने प्रकार का है ?**
दो प्रकार का—शुद्ध सद्भूत व अशुद्ध सद्भूत ।

८२. **शुद्ध सद्भूत व्यवहारनय किसको कहते हैं ?**
शुद्ध गुण तथा शुद्धगुणी मे अथवा शुद्ध पर्याय तथा शुद्ध पर्यायी मे भेदोपचार करने को शुद्ध सद्भूत नय कहते है । जैसे—'जीव मे ज्ञान गुण है' अथवा 'सिद्ध भगवान केवल ज्ञानधारी है ।'

८३. **अशुद्ध सद्भूत व्यवहारनय किसको कहते है ?**
अशुद्ध पर्याय व अशुद्ध पर्यायी मे भेदोपचार करने वाला अशुद्ध सद्भूत व्यवहारनय है । जैसे–ससारी जीव रागद्वेष वाला होता है । यहा गुण गुणी भेद सम्भव नही क्योकि गुण अशुद्ध नही होता ।

८४. **असद्भूत व्यवहारनय किसको कहते है ?**
अनेक भिन्न पदार्थो मे अभेदापचार करनेवाला असद्भूत व्यवहार नय है । जैसे—'घी का घड़ा' ऐसा कहना ।

८५ **असद्भूत व्यवहारनय कितने प्रकार का होता है ?**
दो प्रकार का–उपचरित असद्भूत और अनुपचरित असद्भूत ।

८६ **उपचरित असद्भूत व्यवहारनय किसको कहते है ?**
आकाश क्षेत्र मे ही बिल्कुल पृथक पड़े हुए पदार्थो मे एकता या अभेदोपचार करने वाला उपचरित असद्भूत व्यवहारनय है ।

जैसे—घर व धन आदि मेरा है, ऐसा कहना ।

८७. अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय किसको कहते हैं ?

सश्लेश सम्बन्ध को प्राप्त भिन्न पदार्थों मे एकता या अभेदोपचार करनेवाला अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय है जैसे—शरीर मेरा है, ऐसा कहना ।

८८. निश्चयनय व सद्भूत व्यवहार नय मे क्या अन्तर है ?

निश्चय नय तत्स्वरूपता रूप से कथन करता है और सद्भूत व्यवहार नय उस गुणवाला या गुणधारी अथवा इसमें यह गुण है, इस प्रकार से भेदोपचार कथन करता है ।

८९. इन सर्व नयो में सप्तभंगी कैसे घटित होती है ?

पदार्थ के सामान्य या विशेप अगो मे से नय किसी एक अंश को मुख्य करके कथन करता है और दूसरे अश को उस समय गौण कर देता है । उसका यह गौण करना ही अनुक्त रूप से अन्य धर्म का निपेध करना है । इस प्रकार प्रत्येक नय मे विधि निषेध की प्रतीति होती है । यह विधि निषेध ही सातो भगो मे प्रथम व द्वितीय प्रधान भ ग है, जिनके सम्मेल से अगले पाच भ ग भी बन जाते है जैसे—निश्चय नय से जीव ज्ञानमयी ही है, ज्ञान से पृथक अर्थात व्यवहार रूप नही है ।

९०. निश्चयनय और व्यवहारनय का समन्वय करो ।

निश्चय सामान्याश ग्राही है, और व्यवहारनय विशेषाशग्राही है । पदार्थ युगपत सामान्य विशेषात्मक है । सामान्य के बिना विशेष और विशेष के बिना सामान्य आकाश पुष्पवत् असत् है । पदार्थ के स्वरूप मे इन दोनो अशो मे से कोई भी मुख्य गौण नही है । दोनो अग अपने रूप से सत्य है ।

इसी प्रकार इन दोनो अशो को ग्रहण करने वाले ये दोनो नयें भले ही कथन क्रम के कारण मुख्य व गौण रूप से आगे पीछे वर्तते हो, परन्तु प्रमाण ज्ञान युगपत दोनो त्रयी है । निश्चय के बिना व्यवहार और व्यवहार के बिना निश्चय दोनो आकाश

पुष्पवत् असत् है। प्रमाण ज्ञान मे इन दोनो मे से कोई भी मुख्य व गौण नही। दोनो नये अपने-अपने रूप से सत्य है।

९१. आगम में निश्चयनय को भूतार्थ और व्यवहार नय को अभूतार्थ कहा है।

वहा भूतार्थ अभूतार्थ का अर्थ ठीक-ठीक समझना चाहिये। व्यवहारनय अभूतार्थ है, ऐसा कहने का यह अभिप्राय नही है कि व्यवहार नय कल्पना मात्र है या गधे के सीगवत् असत् है या व्यर्थ बहकाने के लिये कह दिया गया है। वास्तव मे अपने-अपने स्थान पर दोनो सत्य है।

९२. भूतार्थ व अभूतार्थ का क्या अर्थ है ?

जैसा पदार्थ है वैसा ही कथन करना भूतार्थ है, और जैसा पदार्थ वास्तव में नही है वैसा कथन करना अभूतार्थ है।

९३. निश्चयनय भूतार्थ कैसे है ?

पदार्थ वास्तव मे अपने गुण-पर्यायो के साथ तन्मय रहने के कारण एक अखण्ड सत्स्वरूप है व तादात्मक है। निश्चय नय उसका ऐसे ही शब्दों मे विवेचन करता है, इसलिये भूतार्थ है।

९४ व्यवहारनय अभूतार्थ कैसे है ?

पदार्थ की सत्ता वास्तव मे अपने गुण पर्यायो की सत्ता से पृथक नही है, फिर भी व्यवहार नय उसका 'द्रव्य गुण पर्याय वाला द्रव्य है' 'द्रव्य मे अमुक अमुक गुण है' इत्यादि प्रकार से भेद कथन करता है। उसके कथन पर से ऐसा लगता है, मानो द्रव्य-गुण पर्याय तीनो कोई भिन्न पदार्थ हो जो संयोग या समवाय सम्बन्ध द्वारा मिला दिये गए हैं। (एकात्म अभेद द्रव्य को इस प्रकार भेद रूप कहना अभूतार्थ है, गधे के सीगवत् अभूतार्थ नही क्योकि उसके वाच्यभूत गुण पर्यायो की सत्ता अपने स्वरूप से है अवश्य)

अथवा जितने भी दृष्ट पदार्थ है वे वास्तव मे द्रव्य नही उनकी विभाव व्यञ्जन पर्याये है, फिर भी उन्हे द्रव्य कहता है, इस-

लिये अभूतार्थ है। यद्यपि ये सब व्यवहार द्रव्य भी क्षण-क्षण परिणमनशील होने के कारण बदल रहे है, फिर भी इन्हे ध्रुव सत्ताधारीवत् कथन करता है, इसलिये अभूतार्थ है।

९५. सद्भूत व्यवहारनय भले सत्य रहा आवे, पर असद्भूत व्यवहार नय तो सर्वथा असत्य है ही।

नही; ऐसा नही है। असद्भूत व्यवहार को भी सर्वथा असत्य मानना योग्य नही, क्योकि वह नय दो पदार्थो की किसी सयोगी-अवस्था-विशेष का परिचय देता है। यद्यपि सत्ताभूत मूल पदार्थ की ओर लक्ष्य ले जानेपर सयोगी पदार्थो की कोई सत्ता प्रतीत नही होती, न ही उनमे कोई सम्बन्ध प्रतीत होता है, परन्तु इस लोक मे सयोगी पदार्थो की सत्ता बिल्कुल न हो अथवा उनमे कुछ सम्बन्ध भी देखा न जा रहा हो, ऐसा नही है। सयोग का नाम ही वास्तव मे लोक है, इसका सर्वथा लोप कर देने पर तो भूतार्थ अभूतार्थ का निर्णय करनेवाले आप भी कहा हो। अतः सयोगी दृष्टि से देखने पर वे सब पदार्थ तथा उनके सम्बन्ध भूतार्थ हैं।

दूसरे प्रकार से यो कह लीजिये कि शुद्ध अध्यात्म दृष्टि मे सर्वत्र त्रिकाली स्वभाव का ग्रहण होता है उसकी उपाधियो का अथवा औपाधिक भावो का नही। अत उस दृष्टि मे सयोगी पदार्थ असत् है और इसलिये उसका प्रतिपादन करने वाला यह नय भी अभूतार्थ है।

(४ नय योजना विधि)

९६ नय का यह विषय क्यो पढाया जा रहा है ?

मोक्षमार्ग सम्बन्धी सर्व विषयो मे लागू करके विवेक उत्पन्न कराने के लिये अथवा पदार्थ का विशद परिचय देने के लिये।

९७ नय किन-किन विषयो पर लागू होते हैं ?

वस्तुस्वरूप, रत्नत्रय, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र, व्रत, तप आदि सर्व विषयो पर लागू होते है।

९८. उपरोक्त सर्व विषयों में कौन-कौन सी नय लागू होती है ?

मूल नय दो ही है—निश्चय व व्यवहार। निश्चय अभेद रूप सामान्य को दर्शाता है और व्यवहार भेद रूप विशेष को अत इन दोनो को लागू कर देने पर समस्त नय यथायोग्य रूप से स्वत लागू हो जाती हैं, क्योकि सामान्य विशेष का समन्वय हो जाने पर अन्य कुछ शेष नही रह जाता है।

९९. वस्तुस्वरूप मे निश्चय व व्यवहारनय लागू करके बताओ।

'पदार्थ या वस्तु अनेक गुणो व पर्यायो वाली है', ऐसा भेद रूप कथन करना व्यवहार नय है, और 'वही वस्तु उन गुण पर्यायो के साथ तन्मय एक अखण्ड रसस्वरूप है' ऐसा अभेद कथन करना निश्चय नय है।

१०० रत्नत्रय मे निश्चय व व्यवहार लागू करो।

'रत्नत्रय सम्दग्दर्शन सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र इस प्रकार तीन रूप है' ऐसा भेद कथन करना व्यवहार है, और 'वही रत्नत्रय उन तीनो को एक रसरूप अखण्ड आत्म समाधि है' ऐसा अभेद कथन करना निश्चय है।

१०१. सम्यग्दर्शन मे निश्चय व्यवहार लागू करो।

'विकल्प रूप से सातो तत्वो की श्रद्धा करना सम्यग्दर्शन है' ऐसा पराश्रित व भेद कथन करना व्यवहार है, और 'वही सम्यग्दर्शन उन्ही सातो तत्वों मे अनुस्यूत एक अखण्ड ज्ञायक भाव का दर्शन करना है' ऐसा स्वाश्रित व अभेद कथन करना निश्चय है।

१०२ सम्यग्ज्ञान में निश्चय व्यवहार लागू करो।

'आगमज्ञान अथवा आगम प्रतिपादित तत्वो का पृथक-पृथक वाच्य वाचक ज्ञान सम्यग्ज्ञान है' ऐसा भेद कथन व्यवहार है। 'अन्य तत्वो व पदार्थो से विलक्षण- एक अखण्ड निजस्वरूप का स्वसवेद सम्यग्ज्ञान है' ऐसा स्वाश्रित अभेद कथन निश्चय है।

१०३ सम्यक्चारित्र पर निश्चय व्यवहार लागू करो।

'अन्य पदार्थो के त्याग रूप व्रत, वचन व काय आदि यत्राचारी प्रवृत्ति रूप समिति, तथा मन वचन काय के भावो व कार्यो मे अत्यन्त विवेक रूप गुप्ति आदि सम्यक् चारित्र है' ऐसा पराश्रित व भेद रूप कथन व्यवहार है, और पदार्थो से विरक्ति रूप व्रत, अन्तरग प्रवृत्ति रूप समिति तथा मन वचन काय की क्रियाओ से निवृत्ति रूप गुप्ति आदि सब एकमात्र आत्म-रमणता मे स्वय गर्भित है' ऐसा स्वाश्रित अभेद कथन निश्चय है।

१०४. व्रत पर निश्चय व्यवहार लागू करो।

'हिसा आदि पराश्रित पापो व विषयो का त्याग करना व्रत है' ऐसा पराश्रित भेद कथन व्यवहार है, और 'विष आत्म रमणता मे तृप्ति के कारण बाह्य विषयो के प्रति स्वाभाविक विरक्ति व्रत है' ऐसा स्वाश्रित अभेद कथन निश्चय है।

१०५ तप पर निश्चय व्यवहार लागू करो।

'अनशन व कायक्लेश आदि रूप बाह्य तप अथवा प्रायश्चित्तादि रूप अन्तरंग तप करना तप है' ऐसा पराश्रित भेद कथन व्यवहार है, और 'एकमात्र आत्मस्वरूप मे प्रतपन होने से बाह्य के विघ्न बाधाये सव असत् होकर रह जाती है, यही तप है' ऐसा स्वाश्रित अभेद कथन निश्चय है।

१०६ उपरोक्त सर्व विषयों में व्यवहार व निश्चय के लक्षण कैसे घटित होते हैं?

जिस विषय का कथन भेद करके किया जाता है, वहा सद्भूत व्यवहार नय घटित होता है। जिस विषय का कथन पर का आश्रय लेकर किया जाता है वहा असद्भूत व्यवहार नय घटित होता है। जिस विषय का कथन स्वाश्रित तथा अभेद रूप से किया जाता है, वहा निश्चय नय घटित होता है।

(५. समन्वय)

१०७ सर्व विषयो में नय लागू करने से क्या लाभ ?

उन विषयो के स्वरूप मे अथवा तत्सम्बन्धी कथन मे दीखने वाले विरोध प्रनीत होते है, उनका समन्वय करके ज्ञान को सरल व व्यापक बनाना ही नय प्रयोग का प्रयोजन है।

१०८ समन्वय किसको कहते हैं ?

कथन क्रम मे भ्रान्तिवश भासमान होने वाले विरोधो को दूर करके उनमे मैत्री की स्थापना करना समन्वय है।

१०९. समन्वय कितने प्रकार से किया जाता है ?

दो प्रकार से—आगे पीछे क्रमपूर्वक बर्तने वाले धर्मो मे तो साधन साध्य भाव दिखाकर, और युगपत बर्तने वाले धर्मों मे परस्पर अविनाभाव दिखाकर।

११० साधन साध्य भाव क्या ?

कारण पूर्वक कार्य का उत्पन्न होना साधन साध्य भाव है, जैसे कुम्हार द्वारा अथवा मिट्टी के लोष्ट द्वारा घडा उत्पन्न होना।

१११. साधन साध्य भाव कितने प्रकार का होता है ?

दो प्रकार का—निमित्त नैमित्तिक और उपादान उपादेय।

११२. निमित्त नैमित्तिक भाव किसको कहते है ?

दो भिन्न द्रव्यो मे जहा कारण कार्य भाव देखा जाय, वहा कारण को निमित्त कहते है और कार्य को नैमित्तिक। जैसे—घडे की उत्पत्ति मे कुम्हार निमित्त है और घट रूप कार्य नैमित्तिक। वहा ऐसा कहने मे कि 'कुम्हार ने घडा बनाया या उसके निमित्त से घड़ा बना' कुम्हार साधन है और घट साध्य।

११३ उपादान उपादेय भाव किसको कहते है ?

एक ही द्रव्य मे उसकी पूर्ववर्ती पर्याय कारण है और उत्तरवर्ती पर्याय कार्य है, जैसे—मिट्टी का पिण्ड उपादान कारण और घडा उपादेय कार्य। तहा 'मिट्टी ने घडा बनाया अथवा

मिट्टी द्वारा घडा बना' ऐसा कहने मे मिट्टी साधन और घडा साध्य । इसी प्रकार यथा योग्य सर्वत्र लगा लेना ।

११४ दोनो प्रकार के साधन साध्य भाव किस किस नय के विषय है ?

निमित्त नैमित्तिक रूप साधन साध्य भाव पराश्रित होने के कारण असद्भूत व्यवहार नय का विपय है । और उपादान उपादेय रूप साधन साध्य भाव एक ही द्रव्य के क्रमवर्ती विशेष होने के कारण सद्भूत व्यवहार नय का विषय है ।

११५ युगपत धर्मो मे अविनाभाव किसको कहते हैं ?

जहा एक धर्म रहता है वहा दूसरा धर्म भी अवश्य हो और जहा वह धर्म नही होता वहा दूसरा भी न रहे, इसे अविनाभाव कहते हैं । जैसे— जहा जहा धुआ है वहा वहा अग्नि अवश्य होती है और जहा जहा अग्नि नही होती वहा वहा धुआ भी नही होता ।

११६ वस्तु स्वरूप में निश्चय व्यवहार साध्य साधन भाव दिखाओ ।

यद्यपि पदार्थ के स्वरूप मे सामान्य विशेष को कोई सत्ताभूत भेद नही है, फिर भी भेद किये विना कहना असम्भव है । इसलिये वक्ता व श्रोता दोनो को सर्वप्रथम उसका स्वरूप समझने या समझाने के लिये भेद ग्राहक व्यवहार का आश्रय लेना पडता ही है, क्योकि ऐसा करने से ही उसका अभेद निश्चय स्वरूप समझ मे आता है । अत तहा व्यवहार द्वारा कथन करना साधन है और निश्चय स्वरूप का समझना साध्य है । यहा सद्भूत व्यवहार वाला साधन साध्य भाव समझना ।

११७ रत्नत्रय मे निश्चय व्यवहार साध्य साधन भाव दिखाओ ।

यद्यपि रत्नत्रय का यथार्थ स्वरूप निर्विकल्प समाधि मे सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र रूप विकल्प या भेद नही है, फिर भी भेद किये बिना उस का समझना समझाना तथा साक्षात ग्रहण करना असम्भव है । इसलिये साधक को अपनी

प्रारम्भिक भूमिकाओ में व्यवहार रूप विकल्पात्मक या भेद रत्नत्रय का आश्रय लेना ही पड़ता है, क्योंकि ऐसा करने से गुणस्थान परिपाटी के अनुसार क्रमपूर्वक ऊपर चढते हुए अन्त में निश्चय रत्नत्रय रूप समाधि प्राप्त हो जाती है। इसलिये वहाँ व्यवहार रत्नत्रय साधन है और निश्चय रत्नत्रय साध्य है। यहा सद्भूत व्यवहार वाला साधन साध्य भाव समझना।

११८ सम्यग्दर्शन में निश्चय व्यवहार साध्य साधन भाव दिखाओ।

यद्यपि सम्यग्दर्शन के विषयभूत आत्मा मे सातो तत्वों का कोई सत्ताभूत भेद नही है, फिर भी भेद किये बिना उसका कथन करना अथवा समझना व समझाना अथवा उसे साक्षात प्राप्त करना अशक्य है। ऐसे साधक को सर्वप्रथम सात तत्वों के यथार्थ स्वरूप का निर्णय पडता ही है क्योंकि ऐसा करने से ही उन सात तत्वो मे अनुस्यूत एक चेतन अभेद आत्म तत्व का दर्शन होता है। इसलिये तहाँ व्यवहार सम्यग्दर्शन साधन है और निश्चय सम्यग्दर्शन साध्य है। 'तत्व' द्रव्य व भाव दोनों प्रकार से कहे जाने के कारण यहा भी सद्भूत व असद्भूत दोनों प्रकार का साधन साध्य भाव समझना।

११९. सम्यग्ज्ञान में निश्चय व्यवहार साध्य साधन भाव दिखाओ।

यद्यपि सम्यग्ज्ञान के विषयभूत स्वसंवेदन प्रत्यक्ष मे स्व व पर का कोई सत्ताभूत पार्थक्य दृष्टिगत नही होता, फिर भी भेद किये बिना उसका कथन तथा समझना समझाना अथवा साक्षात प्राप्त करना शक्य न होने से साधक को सर्व प्रथम बुद्धिपूर्वक स्व व पर का विकल्प जागृत करना पडता ही है, क्योंकि ऐसा करने से ही क्रमपूर्वक वह आगे जाकर उसे स्व-संवेदन उत्पन्न होता है। इसलिये यहां भी व्यवहार सम्यग्ज्ञान साधन है और निश्चय सम्यग्ज्ञान साध्य है। यहां 'पर' से पृथक विचारने का कहने के कारण असद्भूत और अपने अन्दर

मे ज्ञान ज्ञेय के विकल्प होने के कारण सद्भूत, ऐसे दोनों प्रकार का साधन साध्य भाव समझना।

१२० सम्यक्चारित्र में निश्चय व्यवहार साध्य साधन भाव दिखाओ। यद्यपि सम्यक्चारित्र के विषयभूत साम्यता या आत्मस्थिरता में व्रतादि के कोई विकल्पात्मक भेद नही हैं, फिर भी भेद किये बिना उसका समझना या समझाना अथवा साक्षात प्राप्त करना अशक्य होने से साधक को अपनी प्रारम्भिक भूमिका मे वैराग्य वृद्धि तथा वासना क्षति के अर्थ व्रतादि धारण करने पड़ते ही है, क्योकि ऐसा करने से क्रम पूर्वक आगे जाकर सम्पूर्ण विकल्प शान्त हो जाने पर बस वह परम साम्य रूप स्वतः उछलने लगता है। इसलिये तहा भी व्यवहार सम्यक्चारित्र साधन है और निश्चय सम्यक्चारित्र साध्य है। यहां भी यथायोग्य सद्भूत व असद्भूत दोनो प्रकार का साधन साध्य भाव जानना।

१२१. व्रत मे निश्चय व्यवहार साध्य साधन भाव दिखाओ। यद्यपि व्रत की विषयभूत विरक्ति भाव मे पदार्थो के ग्रहण त्याग आदि के कोई विकल्पात्मक भेद नही हैं, फिर भी भेद किये बिना उसका कथन करना तथा समझना समझाना अथवा साक्षात ग्रहण करना शक्य न होने से, साधक को अपनी प्रारम्भिक भूमिकाओ मे बुद्धिपूर्वक विषयों का त्याग करना पडता ही है, क्योकि ऐसा करने से क्रमपूर्वक आगे जाकर कदाचित वह भीतरी विरक्ति भाव जागृत हो जाता है इसलिये यहा भी व्यवहार व्रत साधन है और निश्चय व्रत साध्य। यहा भी यथायोग्य सद्भूत व असद्भूत दोनो प्रकार का साधन साध्य भाव समझना।

१६ तप में निश्चय व्यवहार साध्य साधन भाव दिखाओ। यद्यपि तप के विषयभूत आत्म प्रतपम मे अनशन आदि के विकल्प रूप भेद नही है फिर भी उसका कथन करना तथा

समझना समझाना अथवा साक्षात प्राप्त करना अशक्य होने से साधक को अपनी प्रारम्भिक भूमिकाओ मे जानबूझकर काय-क्लेश आदि उपसर्गो व परीषहो का आव्हानन करना पडता ही है, क्योकि ऐसा करने से ही उसमे आत्मबल जागृत होता है, और क्रमपूर्वक आगे जाकर उसको वह आमप्रताप भी साक्षात हो जाता है। यहा भी व्यवहार तप साधन है और निश्चयतप साध्य है। वहा पूर्ववत यथायोग्य सद्भूत व असद्भूत दोनों प्रकार का साधन साध्य भाव समझना।

१२३ **वस्तुस्वरूप में अविनाभाव दर्शाकर समन्वय करो।**
सामान्य विशेष के बिना नही रहता है और विशेष सामान्य के बिना नही रहता। इसलिये अभेद प्रतिपादक निश्चय स्वरूप तथा भेद प्रतिपादक व्यवहार स्वरूप मे परस्पर अविनाभाव है।

१२४. **रत्नत्रय में अविनाभाव दर्शाकर समन्वय करो।**
सम्यग्दर्शन आदिक तीनो मे ओतप्रोत आत्मा उन भेदो के बिना नही रहता और वे भेद भी अपने आश्रयभूत आत्मा के बिना नही रहते। इसलिये अभेद प्रतिपादक निश्चय रत्नत्रय तथा भेद प्रतिपादक व्यवहार रत्नत्रय में परस्पर अविनाभाव है।

१२५ **सम्यग्दर्शन में अविनाभाव दर्शाकर समन्वय करो।**
सात तत्वों मे अनुस्यूत त्रिकाली अखण्ड आत्मा उन सातों के विना नही रहता और वे सातो भी अपने आश्रयभूत उस आत्मा के बिना नही रहते। इसलिये अभेद प्रतिपादक निश्चय सम्यग्दर्शन व भेद प्रतिपादक व्यवहार सम्यग्दर्शन मे परस्पर अविनाभाव है।

१२६. **सम्यग्ज्ञान मे अविनाभाव दर्शाकर समन्वय करो।**
पर पदार्थों से व्यावृत या पृथक ही आत्मा के स्वरूप का स्व-सवेदन-गम्य लाभ होता है और वह स्वसवेदन-गम्य लाभ ही

पर पदार्थों से पृथकता है। एक के विना दूसरा नही। जैसे अन्धकार का नाश ही प्रकाश है और प्रकाश का अभाव ही अन्धकार है। इसलिये स्व के साथ अभेद करने वाले निश्चय सम्यग्ज्ञान और पर से पृथकता दर्शाने वाले व्यवहार सम्यग्ज्ञान मे परस्पर अविनाभाव है।

१२७ सम्यक्चारित्र में अविनाभाव दर्शाकर समन्वय करो।

यथार्थ व्रतादि की पूर्णता के विना आत्म स्वरूप मे स्थिरता अथवा साम्यता नही होती, और आत्मस्थिरता व साम्यता के विना यथार्थ व्रतो की पूर्णता नही होती। इसलिये अभेद प्रतिपादक निश्चय चारित्र और भेद प्रतिपादक व्यवहार चारित्र दोनो में परस्पर अविनाभाव है।

१२८ व्रत में अविनाभाव दर्शाकर समन्वय करो।

विषयो के त्याग के बिना यथार्थ विरक्ति नही होती और यथार्थ विरक्ति के विना विषयो का यथार्थ त्याग नही होता। इसलिये निश्चय व्रत और व्यवहार व्रत मे परस्पर अविनाभाव है।

१२९. तप में अविनाभाव दर्शाकर समन्वय करो।

उपसर्गों व बाधाओ के प्रति निर्भय हुए बिना आत्म वीर्य या आत्म प्रताप नही होता और आत्म प्रताप के बिना निर्भयता नही होती। इसलिये निश्चय तप व व्यवहार तप दोनो मे परस्पर अविनाभाव है।

१३०. मिथ्यादृष्टियों में वस्तु ज्ञान व व्यवहार रत्नत्रयादि होते है तहां निश्चय के साथ अविनाभाव कैसे है?

निश्चय के अभाव के कारण ही उसका पदार्थज्ञान, तथा ज्ञान दर्शन चारित्र व्रत आदि सब मिथ्या कहे गये है।

निश्चय स्वरूपो के साथ रहने पर ही वे सम्यक् विशेषण को प्राप्त करते है।

१३१. किसी व्यक्ति को व्यवहार ज्ञान आदिक न हों और निश्चय ज्ञान आदिक हों वहां अविनाभाव कैसे घटे ?

ऐसा होना असम्भव है कि व्यवहार ज्ञान चारित्र व्रत आदि न हो और निश्चय रूप सब कुछ हो। अत. इस प्रश्न को अवकाश नही।

१३२. चौथे से सातवें गुणस्थान तक निश्चय व्रत चारित्रादि रूप समाधि नहीं होती पर व्यवहार व्रतादि व सम्यक् रत्नत्रय तो होता है ?

तहा रत्नत्रय आंशिक रूप से पाया जाता है, पूर्ण रूप से नही। कथन सर्वत्र पूर्ण भावों का किया जाता है, आँशिक भावो का नही। अत· अपनी बुद्धि से व्यवहार व निश्चय वाले अशो का ग्रहण करके उनमें परस्पर अविनाभाव समझ लेना।

१३३ आंशिक भावों को समझाने समझने के लिये किस नय का प्रयोग किया जाता है ?

एक देश शुद्ध निश्चय नय का कथन आगममे आता है, वह निश्चय रूप अश के प्रति ही प्रयुक्त हुआ है। और उपलक्षण से अपनी बुद्धि द्वारा एक देश अशुद्ध निश्चय नयका तथा योग्य व्यवहार नयो का प्रयोग करके ऐसे आशिक या मिश्रित भावो का निर्णय करना चाहिये।

प्रश्नावली

१. नय किसे कहते हैं ?
२ नय ज्ञान का क्या प्रयोजन है ?
३, नय के कितने भेद प्रभेद हैं ?
४ जो जाना जाय सो ज्ञाननय है और जो लिखा सो शब्द नय ?
५. नैगमादि चार और शब्दादि तीन ये सातों ही शब्द द्वारा व्यक्त की जाती है, फिर शब्दादि तीन को ही पृथक से व्यञ्जन नय बताने की क्या आवश्यकता ?

६. ज्ञान व अर्थ में क्या अन्तर है, तथा इनमे से कौन बड़ा है ?

७ नैगमादि सातो नयों की प्रवृत्ति का क्रम दर्शाओ, अर्थात् इनके विषयो मे स्थूलता व सूक्ष्मता दर्शाओ ।

८. क्या ऋजुसूत्रनय मे शब्द प्रयोग नहीं होता ? फिर इसे अर्थनय क्यो कहा ?

९ शब्द प्रयोग की अपेक्षा ऋजुसूत्र व शब्दनय मे क्या अन्तर है ?

१० आगम व अध्यात्म पद्धति मे क्या अन्तर है ?

११. शब्द, अर्थ व ज्ञान इन तीनो नयो मे किस किस अपेक्षा एकता व अनेकता है ?

१२ 'अमुक वाक्य इस नय का है' ऐसा कहने का क्या तात्पर्य ?

१३ द्रव्यार्थिक व पर्यायार्थिक की भाँति तीसरी गुणार्थिक नय क्यो नहीं ?

१४. निम्न नयों के लक्षण करो—
द्रव्यार्थिक, पर्यायार्थिक, ज्ञाननय, अर्थनय, व्यजननय, नैगमनय, सग्रहनय, व्यवहारनय, ऋजुसूत्रनय, शब्दनय, समभिरूढनय, एवभूतनय, निश्चयनय, व्यवहारनय, शुद्ध निश्चयनय, अशुद्ध निश्चयनय, सद्भूत व्यवहारनय, असद्भूत व्यवहारनय, शुद्ध सद्भूत, अशुद्ध सद्भूत, उपचरित असद्भूत, अनुपचरित असद्भूत ।

१५ निम्न के भेद व लक्षण करो—
नैगम, सग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, निश्चय, व्यवहार ।

१६ निम्न के उदाहरण देकर उन्हे स्पष्ट करो—
भूत नैगमनय, भावी नैगमनय, वर्तमान नैगमनय, शुद्ध सग्रह, अशुद्ध सग्रह, शुद्ध व्यवहार, अशुद्ध व्यवहार, शुद्ध निश्चयनय, अशुद्ध निश्चय, शुद्ध सद्भूत, अशुद्ध सद्भूत, उपचरित सद्भूत, अनुपचरित सद्भूत ।

१७ निम्न नयो मे अन्तर दर्शाओ ।
महासत्ता-अवान्तरसत्ता, शुद्ध सग्रह-अशुद्ध सग्रह; शुद्ध-सग्रह,

शुद्ध व्यवहार-अशुद्ध व्यवहार; सूक्ष्म ऋजु सूत्र-स्थूल ऋजु सूत्र, ऋजुसूत्र-शब्दनय; शब्दनय-समभिरूढनय, समभिरूढ-एवभूत; भावी नैगम-वर्तमान नैगम, शुद्ध निश्चय-अशुद्ध निश्चय; निश्चयनय-सद्भूत व्यवहारनय, शुद्ध सद्भूत व्यवहार-अशुद्ध सद्भूत व्यवहार, उपचरित असद्भूत-अनुपचरित असद्भूत; शुद्ध द्रव्यार्थिक-अशुद्ध द्रव्यार्थिक, शुद्ध पर्यायार्थिक-अशुद्ध पर्यायार्थिक ।

१८ निम्न वाक्य किस-किस नय के है ?
सीमन्धर भगवान सिद्ध है, श्रेणिक महाराज सिद्ध है, इस बाग मे वृक्ष बेले व फल तीनो चीजे हैं, अरे ! इसे तो मिनिस्टर बना ही समझो, इस सभा मे अनेको प्रकार के व्यक्ति बैठे है, कपड़ा एक द्रव्य है, इन्द्र व शक्र इन दो शब्दो का एक अर्थ नही हो सकता है; नारी व स्त्री एकार्थवाची है, कलत्र नारी व दारा ये सब एकार्थवाची है, सिंहासन पर बैठे राजा को वीर नही कहा जा सकता है, जीव ज्ञानवान है, जीव ज्ञानस्वरूप है, मनुष्य बहुत दुःखी है, सयमी जीवरागी है, विजयवर्धन मे बहुत बल है, जीव को कर्म का फल भोगना पडता है; कुम्हार घडा बनाता है; सिद्ध भगवान केवल ज्ञानी है, भगवान मे अनन्त चतुष्टय है, मै व सिद्ध भगवान समान है, ज्ञान ही आत्मा है, एक आत्मरमणता ही रत्नत्रय है, इस व्यक्ति के चार पुत्र है, वृत्तिचन्द बहुत धनिक है; यह एक बडा व्यापारी है ।

१९. निश्चय व व्यवहार नय का समन्वय करो ।

२० निश्चयनय को भूतार्थ कहने का क्या तात्पर्य ?

२१ क्या व्यवहारनय सर्वथा अभूतार्थ है, यदि नहीं तो उसे अभूतार्थ क्यो कहा गया ?

२२ वस्तु स्वरूप, रत्नत्रय, सम्यग्दर्शन, सम्यक्चारित्र, व्रत व तप इन विषयों पर निश्चय व्यवहारनय लागू करो, दोनों मे साध्य साधन भाव दर्शाओ, दोनो का परस्पर अविनाभाव दर्शा-कर समन्वय करो।

—इति सम्पूर्णम—

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	६	प्रवेशिक	प्रवेशिका	११८	६	घर	घट
१	८	विक्षेप	निक्षेप	१२१	६	अचेत	अचेतन
८	१६	पदाथ	पदार्थ	१२७	१६	का	को
१५	२०	जैसे	से	१२८	५	मनोगति	मनोमति
१६	१६	अनेकारी	अनेककोटी	१२८	१८	सूक्म	सूक्ष्म
२७	२६	तान	तीन	१३०	१६	वास्तव	वास्तव मे
२८	४	होन	होने	१३४	२८	तदनन्त	तदनन्तर
२८	१५	गक्ष्म	सूक्ष्म	१३६	१३	करना	बोलना
२८	२२	गति	मति	१३७	२	रयतकाण्ड	रत्नकरण्ड
२६	२३	शुरु	गुरु	१३७	१४	सफरा	सकल
३२	१०	ममह	समूह	१३७	४०	१०	११
३४	६	और	और न	१३८	२	उतने	उतने समय
३६	३	की	का	१३८	२	जभ्यास	अभ्यास
४४	५	वंमी	ध्वमी	१३८	१६	साध	साधु
४६	२६	स्वभान	स्वभाव	१३६	१६	निखशेप	निरवशेप
४६	२७	गैर	और	१३६	२६	मानवा	मानना
५६	२७	कार्य	काय	१४२	३	सम्यग्दर्श	सम्यग्दर्शन
६१	१	जलन	गलन	१४२	१२	भक्ति	मुक्ति
६१	२१	दृष्टि	दृष्ट	१४३	१४	काव्य	काय
७१	१२	अभाव	अभाव मे	१५५	८	परिणम	परिणमन
७४	२	दूसरे	दूसरे मे	१५५	२०	निमोदिया	निगोदिया
८१	१२	भागा	भाग	१५६	६	वद्धि	वृद्धि
८३	२५	सीर्ण	जीर्ण	१५६	१६	नन्तादि	सान्तादि
८६	१०	मे	का	१६१	१७	प्रदेशात्म	प्रदेशात्मक
८६	११	[illegible]	विषय	१६१	२६	द्रव्यात्म	द्रव्यात्मक
८८	११	[illegible]	[illegible]	१६२	६	पर्यायि	पर्यायि बिना
८८	२१	[illegible]	[illegible]	१७१	१८	भेट	भेद
१०१	१४	[illegible]	[illegible]	१७२	१४	[illegible]	[illegible]
११०	१२	[illegible]	[illegible]	१७२	१६	[illegible]	[illegible]
११८	२०	[illegible]	[illegible]	१७५	३	[illegible]	[illegible]
११९	३	[illegible]	[illegible]	१७५	२८	[illegible]	[illegible]

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१८६	५	पक्ष	पक्ष	२६६	२२	तो ही	तो
१९७	१८	नादर	बादर	२७२	१२	दर्धन	दर्शन
२०८	१	अधिक	अधिकार	२७५	५	शस्त्र	शास्त्र
२१५	२१	स्पर्ध	स्पर्धक	२७५	१४	सप्रतत्व	स्व-परतत्व
२१५	२५	निर्माप	निर्माण	२७६	१२	ज्ञाय	ज्ञायक
२१८	२६	वेदक	वेदव	२७८	११	उपवृहेंण	उपवृहणं
२२५	१८	मा फला	साझला	२७८	२८	अमट	अमूढ
२२८	१५	अण्टर	अण्डर में	२७९	४	उपवृहेंण	उपवृहण
२३४	२४	अचतरिन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय		२८५	६	यलाचार	यत्नाचार
२३५	१५	गर्भजे	गर्भजों	२९०	१	सफल	सकल
२३५	२५	विवुत्कुमार	विद्युत्कुमार	२९२	१६	मोरसत्व	गोरसत्व
२३६	४	कल्पोपन्न	कल्पोपन्न	२९३	५	अपृथ	अपृथक
२३६	६	,,	,,	२९८	२१	का कल	काल
२३६	६	,,	,,	२९९	२	घट	पट
२३८	२८	हैरि	हरि	३००	१	मौग्विक	मौलिक
२४०	५	स्वयम्मू	स्वयम्भू	३०२	१८	हृष्ट	दृष्ट
२४१	२०	विप्नमोक्ष	विप्रमोक्ष	३०८	२७	नय	क्या
२४४	१६	क्षयोपशम	क्षयोपशमसे	३१०	२	असत्	सत्
२४४	२०	कर्म	क्रम	३१२	१४	प्रनोग	प्रयोग
२४६	५	विवक्षायें	विवक्षासे	३१३	१	कैसा	कैसे
२४६	१६	यग्रोध	न्यग्रोध	३३२	१९	पयायाश	पर्यायाश
२५१	२६	चित्तलावरणी	चित्तलाचरणी	३३२	२२	केवण	केवल
२५३	१२	श्रणी	श्रेणी	३३४	१	वैगम	नैगम
२६६	२०	झगड़ा	झडना				